उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

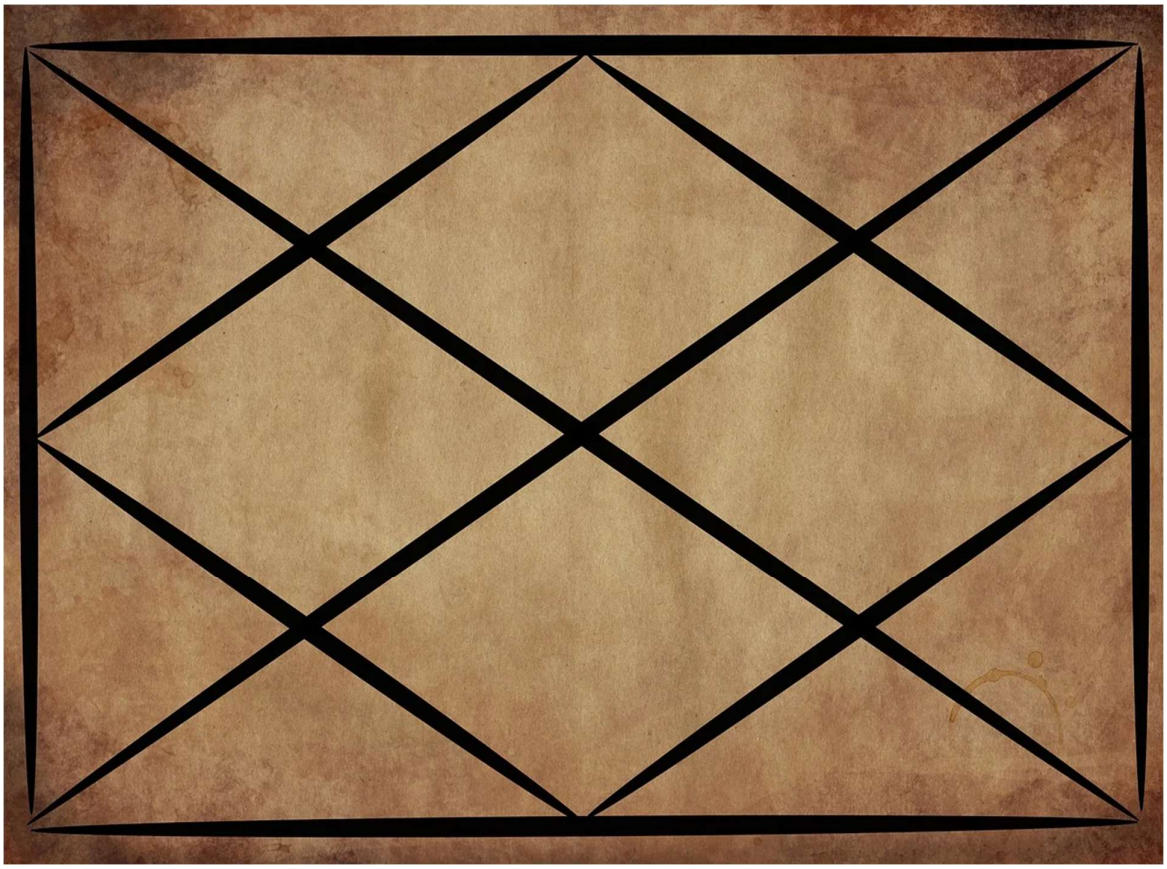
हल्द्वानी

DPJ- 102/ PJ- 102

फलित ज्योतिष के आधारभूत सिद्धान्त

मानविकी विद्याशाखा

वैदिक ज्योतिष विभाग





तीनपानी बाईपास रोड , ट्रॉन्सपोर्ट नगर के पीछे
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल - 263139
फोन नं .05946- 261122 , 261123
टॉल फ्री न0 18001804025
Fax No.- 05946-264232, E-mail- info@uou.ac.in
http://uou.ac.in

विशेषज्ञ समिति

प्रोफेसर अजय रावत (अध्यक्ष) निदेशक समाज विज्ञान विद्याशाखा उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय हल्द्वानी, (नैनीताल) **श्री अरुण बंसल** (ज्योतिष विशेषज्ञ) अध्यक्ष, अखिल भारतीय ज्योतिष संस्था संघ दिल्ली **श्री अशोक भाटिया** (अंक शास्त्र) परीक्षा नियन्त्रक, अखिल भारतीय ज्योतिष संस्था संघ, दिल्ली	**प्रोफेसर वासुदेव शर्मा (ज्योतिष)** विभागाध्यक्ष, ज्योतिष विभाग राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान जयपुर, राजस्थान **श्री पी.आर. काबरा** (हस्तलेखा) अध्यक्ष, अखिल भारतीय वास्तु हस्त रेखा, पराविज्ञान शोध संस्थान, जयपुर, राजस्थान **पाठ्यक्रम संयोजन एवं सम्पादन** डा.अञ्जना जोशी प्रवक्ता (ज्योतिष)उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

पुनर्सम्पादन संस्करण – 2026

सम्पादन

डॉ. प्रमोद जोशी

असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी), वैदिक ज्योतिष विभाग

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी

सह- सम्पादन

डॉ. प्रभाकर पुरोहित

असिस्टेन्ट प्रोफेसर (एसी), वैदिक ज्योतिष विभाग

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय , हल्द्वानी

इकाई लेखक	इकाई संख्या
श्री शिवशरण नाथ त्रिपाठी प्रवक्ता संस्कृत–साहित्य राजकीय लक्ष्मीनाथ शास्त्री संस्कृत कॉलेज, चीथवाड़ी, जयपुर	1
श्री राजेन्द्र कुमार शर्मा शिक्षक संकाय अखिल भारतीय ज्योतिष संस्था संघ, जयपुर	2
पं. विनय गर्ग शिक्षक संकाय अखिल भारतीय ज्योतिष संस्था संघ, दिल्ली	3,4,5,6
डा.अञ्जना जोशी प्रवक्ता (ज्योतिष) उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल	7, 8, 9, 10,11
पं. प्रदीप कुमार सक्सेना सम्पादक, ग्रह शक्ति मासिक ज्योतिष–पत्रिका मथुरा, उत्तरप्रदेश	12, 14
श्री अरुण बंसल अध्यक्ष, अखिल भारतीय ज्योतिष संस्था संघ दिल्ली	13

कापीराइट @ उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

प्रथम संस्करण : 2011 **द्वितीय संस्करण : 2026** **ISBN No. -**

प्रकाशक : उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी **मुद्रक :**

नोट: - इस पुस्तक के समस्त इकाईयों के लेखन तथा कॉपीराइट संबंधी किसी भी मामले के लिये संबंधित इकाई लेखक जिम्मेदार होगा। किसी भी विवाद का निस्तारण नैनीताल स्थित उच्च न्यायालय अथवा हल्द्वानी स्थित सत्रीय न्यायालय में किया जायेगा।

फलित ज्योतिष के आधारभूत सिद्धान्त

DPJ- 102/ PJ- 102

क्रम व इकाइयों के नाम	पृष्ठ संख्या
ब्लॉक 1 ज्योतिष : अर्थ, प्रवर्त्तक एवं राशि-परिचय	**2**
इकाई 1 ज्योतिष शास्त्र की व्युत्पत्ति एवं परिभाषाएँ	3- 17
इकाई 2 ज्योतिष शास्त्र के प्रवर्त्तक	18 – 28
इकाई 3 राशि एवं उनके गुण–धर्म	29 - 51
ब्लॉक 2 ग्रह परिचय एवं उनकी अवस्थाएं	**52**
इकाई 4 ग्रहों के गुण–धर्म	53 - 76
इकाई 5 ग्रह परिचय एवं मैत्री–सम्बन्ध	77 -91
इकाई 6 ग्रहों की बालादि अवस्थाएँ एवं उनकी दृष्टियाँ	92 -102
ब्लॉक 3 भाव व राशिस्थ भावेश एवं ग्रह- फल	**103**
इकाई 7 तन्वादि द्वादश भाव- कारकत्व	104 -121
इकाई 8 द्वादश भावेशों व सूर्यादिग्रहों का लग्नादि भावों में फल	122-144
इकाई 9 द्वादश राशियों में सूर्यादिग्र- फल एवं राजयोग	145 - 166
ब्लॉक 4 योग एवं दशा-फल-विचार	**167**
इकाई 10 पंच महापुरुष एवं विविध महत्वपूर्ण योग	168 -182
इकाई 11 सूर्य तथा चन्द्रमा से बनने वाले योग	183 -197
इकाई 12 अरिष्ट–योग एवं अरिष्ट–भंग–योग	198 -209
इकाई 13 विंशोत्तरी महादशा–अन्तर्दशा–नाथ का विवेचन	210 -233
इकाई 14 पंचाँग–फल–विचार	234 -251

प्रश्न पत्र कोड - DPJ- 102/ PJ- 102

फलित ज्योतिष के आधारभूत सिद्धान्त

ब्लॉक - 1

ज्योतिष : अर्थ, प्रवर्त्तक एवं राशि-परिचय

इकाई – 1 ज्योतिषशास्त्र की व्युत्पत्ति एवं परिभाषाएँ

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 ज्योतिष की व्युत्पत्ति
1.4 ज्योतिषशास्त्र की परिभाषा
1.5 स्कन्ध–पंचक की परिभाषाएँ
1.5.1 होरा
1.5.2 गणित अथवा सिद्धान्त
1.5.3 संहिता
1.5.4 प्रश्नशास्त्र
1.5.5 शकुन
1.6 भारतीयज्योतिष : काल–विभाजन
1.6.1 अन्धकारकाल
1.6.2 उदयकाल
1.6.3 आदिकाल
1.6.4 पूर्वमध्यकाल
1.6.5 उत्तरमध्यकाल
1.6.6 आधुनिक अथवा अर्वाचीन काल
1.7 विविध–परिभाषाएँ
1.8 सारांश
1.6 शब्दावली
1.10 अभ्यासप्रश्नों के उत्तर
1.11 सन्दर्भग्रन्थ–सूची
1.11 सहायक व उपयोगी पाठ्यसामग्री
1.13 निबन्धात्मक–प्रश्न

1.1 प्रस्तावना –

ज्योतिषशास्त्र के अध्ययन क्रम में सर्वप्रथम ज्योतिष क्या है, इसकी व्युत्पत्ति किस प्रकार हुई ज्योतिषशास्त्र के विषय में विभिन्न अभिमत क्या हैं यह ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है।

प्रस्तुत इकाई में यह स्पष्ट किया गया है कि ज्योतिष हमारे पुरातन ऋषियों के दैवीय ज्ञान का प्रत्यक्ष प्रमाण है। जिस युग में आधुनिक युग की भाँति वैज्ञानिक साधनों का नितान्त अभाव था, तब दिव्य दृष्टि से अनुसन्धान पूर्वक प्रामाणिक तथ्य ऋषियों द्वारा प्रतिष्ठापित किये गये। उनकी जिज्ञासु प्रवृत्ति ने सृष्टि के अद्भुत रहस्यों को हमारे समक्ष समुद्घाटित कर दिया है। दिव्यज्ञान–सम्पन्न ऋषिगण भूत–भविष्य–वर्तमान तीनों कालों की घटनाओं को ज्योतिष गणनाद्वारा प्रत्यक्ष कर चमत्कृत कर देते हैं। ज्योतिष के गणितीय सिद्धान्त आधुनिक युग में भी वैज्ञानिक कसौटी पर खरे उतरते दिखाई देते हैं। आकाश में विद्यमान नक्षत्रों, तारों, ग्रहों की सापेक्षगति, उनकी गति व पारस्परिक दूरी का विश्लेषण इस बात को सिद्ध करता है। जिस समयचक्र को पूर्व में अंश कला, विकला के रूप में विभाजित किया गया था, उसी समय का मापन आज डिग्री, मिनट सेकेण्ड में किया जाता है। सूर्यग्रहण व चन्द्रग्रहण के समय का ज्ञान भी आज उसी गणना के आधार पर जाना जाता है।

यह असाधारण ज्ञान युगों पूर्व खोजा गया था, कालान्तर में यह कुछ लोगों तक सीमित रह गया इस ज्योतिष विद्या का उपयोग आजीविका के रूप में किया जाता रहा जिनमें स्वार्थी लोगों द्वारा रूढ़िवादी अन्धमान्यताएँ भी जोड़ दी गईं, इस कारण इस अद्भुत विद्या को निन्दा का भाजन होना पड़ा। आज भी कुछ लोग इस पर विश्वास नहीं करते लेकिन इसके प्रत्यक्ष प्रभाव को नकारना सम्भव नहीं। 'प्रत्यक्षं ज्योतिषं शास्त्रम्' के सत्य का आज विश्वभर में प्रभाव देखा जा सकता है। आज राष्ट्रीय–अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर शोध गोष्ठियों, कार्यशालाओं आदि द्वारा ज्योतिष के विविध पक्षों को उजागर किया जा रहा है। जिसे स्वयं भाग लेकर प्रत्यक्ष देखा जा सकता है।

इस इकाई में ज्योतिष की व्युत्पत्ति–परिभाषा आदि द्वारा उसके तत्त्वों का अध्ययन आप करेंगे।

आगामी अध्याय में ज्योतिष के प्रवर्त्तक आचार्यों के विषय में विस्तार से वर्णन किया जायेगा।

1.2 उद्देश्य –

इस इकाई का उद्देश्य ज्योतिष की व्युत्पत्ति एवं परिभाषाओं को प्रस्तुत कर उनके द्वारा इसके महत्व को प्रकट करना तथा जनोपयोगिता को सिद्ध करना है। साथ ही इसे प्रेरणाप्रद–स्रोत के रूप में प्रस्तुत करना है।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप –

1. ज्योतिषशास्त्र की व्युत्पत्ति का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
2. ज्योतिष की परिभाषाओं को लिख सकेंगे।
3. ज्योतिषशास्त्र के विकास–क्रम का ज्ञान प्राप्त कर पायेंगे।
4. ज्योतिष स्कन्ध–पंचक का विभाजन कर सकेंगे।
5. होरा का अर्थ लिख सकेंगे।
6. ज्योतिष के गणितीय सिद्धान्तों के विषयों का वर्गीकरण कर सकेंगे।
7. संहिता के विषय विस्तार का वर्णन कर सकेंगे।
8. प्रश्नशास्त्र के अन्तर्गत वर्णित बिन्दुओं को स्पष्ट कर सकेंगे।
9. शकुनशास्त्र का परिचय लिख सकेंगे।

1.3 ज्योतिष की व्युत्पत्ति

'ज्योतिष' का व्युत्पत्तिपरक अर्थ ज्ञात करने के लिए महत्त्वपूर्ण वेदांग व्याकरण का अनुसरण करना होगा। इसके अनुसार द्युत् द्योतने (प्रकाशने) धातु से द् को ज्, इसि प्रत्यय करके गुण, ज्योतिस्, स् को ष् करके ज्योतिष शब्द निष्पन्न होता है। जिसका अर्थ है प्रकाशमान् आकाशीय ग्रह, नक्षत्र, तारे आदि। चूँकि समस्त अस्तित्व एक है अतः इन खगोलीय पिण्डों की गति का प्रभाव पार्थिव प्राणियों व पदार्थों पर भी पड़ता है।

1.4 ज्योतिष शास्त्र की परिभाषा :–

उपर्युक्त व्युत्पत्ति के अनुसार निष्पन्न ज्योतिर्पिण्डों अर्थात् ग्रह–नक्षत्र–तारों इत्यादि की गति, संचरण आदि के गणितीय विश्लेषण तथा उनसे होने वाले प्रभाव का अध्ययन करने वाला ज्योतिषशास्त्र है। इस ज्योतिषशास्त्र को छः वेदांगों में से एक महत्त्वपूर्ण अंग माना गया है। छः वेदांग है – 1. शिक्षा 2. कल्प, 3. निरुक्त, 4. व्याकरण 5. छन्द 6. ज्योतिष। इनमें से "ज्योतिषं वेदानां चक्षुः" कह कर ज्योतिष शास्त्र की उपयोगिता एवं महत्त्व को विशेषरूप से स्वीकार किया गया है। चूँकि इस गणितीय विश्लेषण को आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टि से भी सिद्ध किया जा सकता है, अतः इसे ज्योतिर्विज्ञान भी कहा जाता है। इसकी वैज्ञानिकता तथा प्रामाणिक फलादेशों को देखकर ही 'प्रत्यक्षं ज्योतिषं शास्त्रम्' कहा गया है। भारतीय ज्योतिष की परिभाषा में तीन स्कन्धों में होरा, सिद्धान्त एवं संहिता तथा पाँच स्कन्धों में होरा, सिद्धान्त संहिता, प्रश्न एवं शकुन ये पाँच अंग स्वीकार किये जाते हैं। वेदों में सूर्य, चन्द्रमा तथा नक्षत्रों के स्तुति–विषयक मन्त्र हैं। इस ज्योतिष का क्रमिक विकास भारतवर्ष में अनादिकाल से होता रहा है। प्रारम्भ में ब्राह्मण एवं आरण्यक

ग्रन्थों में नक्षत्रों के आकार, स्वरूप, गुण तथा प्रभाव का ज्ञान ही ज्योतिष के रूप में स्वीकार किया जाता था। आदिकाल में इनमें शुभ एवं अशुभ फल के अनुसार कार्य का विश्लेषण तथा समय के विभिन्न अंगों ऋतु, अयन, पक्ष, तिथि, दिनमान, लग्न आदि में विधि या निषेध की व्यवस्था की गई। जैसे–जैसे ज्ञान का विकास हुआ वैसे–2 ज्योतिष्करण्डक, वेदांगज्योतिष आदि के पश्चात् ग्रहों के स्वरूप, वर्ण, दिशा, धातु, तत्त्व आदि भी इसी में परिगणित होने लगे।

आदिकाल समाप्त होते–होते गणित, सिद्धान्त तथा फलित ये तीनों ज्योतिष के अंग स्पष्ट हो गए। ग्रहों की गति, उनकी स्थिति, अयनांश, पात इत्यादि भी स्वीकार किये गये। शुभ व अशुभ समय का निर्धारण, विधायक, यज्ञादि कार्यों के समय व स्थान आदि का निर्णय फलित ज्योतिष का विषय माना गया। पूर्वमध्य काल के अन्त में सिद्धान्तज्योतिष व ग्रहवेध की परम्परा का ह्रास होने से गणित द्वारा ग्रहों का स्थान–निर्धारण इसी के अन्तर्गत आ गया। इस पूर्वमध्यकाल के आदि में ज्योतिष के तीन स्कन्ध–होरा, सिद्धान्त तथा संहिता स्वीकार किये गये, परन्तु इसी युग के मध्य में होरा, गणित अथवा सिद्धान्त, संहिता, प्रश्न एवं शकुन ये पाँच स्कन्ध स्वीकार किये जाने लगे।

1.5 स्कन्धपंचक–परिभाषा –

1.5.1 होरा :–

होरा को जातक शास्त्र भी कहा जाता है। 'अहोरात्र' इस शब्द से इसकी उत्पत्ति मानी जाती है। इस शब्द का प्रथम वर्ण 'अ' तथा अन्तिम वर्ण 'त्र' का लोप होने के बाद 'होरा' शब्द शेष रहता है। जातक के जन्मकालिक ग्रहों की स्थिति के आधार पर शुभाशुभ फल कथन किया जाता है। होरा के अन्तर्गत जन्मकुण्डली में द्वादशभावफल उन द्वादशभावों में स्थित ग्रहों की अपेक्षा तथा दृष्टि रखने वाले ग्रहों के आधार पर बताये गए हैं। मनुष्य के जीवन में आने वाले सुख–दुःख, हानि–लाभ, इष्टानिष्ट, भाग्योदय प्रभृति सम्पूर्ण शुभाशुभ फलों का वर्णन यहाँ किया जाता है।

होरा के अन्तर्गत दो प्रकार से फल का निरूपण किया जाता है। इन ग्रन्थों में जन्म–नक्षत्र तथा जन्मलग्नादि द्वादश भावों से फल–कथन किया जाता है। इस शास्त्र के आचार्यों में वराहमिहिर, नारचन्द्र, सिद्धसेन, दुण्ढिराज, केशव आदि प्रमुख हैं। इनमें से जहाँ आचार्य वराह के द्वारा इस शास्त्र में एक नवीन प्रणाली का सूत्रपात हुआ वहीं नारचन्द्र ने ग्रह एवं राशियों के अनुरूप भाव तथा राशि के समन्वय एवं कारक–मारक ग्रहों के सम्बन्ध के परिप्रेक्ष्य में फल–कथन की प्रक्रिया चलाई। श्रीपति व श्रीधर आदि आचार्यों द्वारा ग्रहबल, ग्रहवर्ग, विंशोत्तरी आदि दशाओं का फल इस होराशास्त्र की परिभाषा में स्वीकृत किया गया।

1.5.2 गणित अथवा सिद्धान्त :–

गणित–ज्योतिष में त्रुटि प्रारम्भिक इकाई तथा अन्तिम इकाई कल्पकाल पर्यन्त कालगणना, सौरमास, चान्द्रमास का निरूपण, ग्रहों की गति का प्रतिपादन, व्यक्ताव्यक्तगणित का विश्लेषण, अनेक प्रश्नोत्तर–विधियाँ, ग्रह–नक्षत्रों की स्थिति का आकलन, विविध यन्त्रों की निर्माण–विधि, दिशा–देश–कालज्ञान के लिए महत्त्वपूर्ण अंग, तथा अक्षज्या, लम्बज्या, द्युज्या, कुज्या, तद्धृति समशंकु आदि अक्षक्षेत्र सम्बन्धी इकाईयों का आनयन रहता है। अंकगणित द्वारा अहर्गण–मान साधकर ग्रहों का आनयन करना इस सिद्धान्त शास्त्र का मुख्य प्रतिपाद्य विषय आदिकाल में माना जाता था। यही स्थिति पूर्वमध्यकाल में भी रही किन्तु उत्तरमध्यकाल में गणित के तीन भेद सिद्धान्त, तन्त्र एवं करण प्रकाश में आये।

1. सिद्धान्त – सृष्ट्यादि से इष्टदिन तक अहर्गण बनाकर ग्रह सिद्ध करने को 'सिद्धान्त' कहते हैं।

2. तन्त्र – युगादि से इष्टदिन तक अहर्गण साधकर ग्रहगणित करने को 'तन्त्र' कहा जाता है।

3. करण – कल्पित वर्ष (युग) में इष्टदिन का अहर्गण बनाकर ग्रह–सिद्धि 'करण' कहलाता है।

1.5.3 संहिता :–

भूमिशोधन, दिक्शोधन, शल्योद्धार, मेलापक, आयादि का आनयन, गृह–साधन (उपकरण), इष्टिका– द्वार, गृहारम्भ, गृहप्रवेश, जलाशयादि का निर्माण, शुभ कार्यों के मुहूर्त, विभिन्न निमित्तों (उल्कापात, वर्षा, ग्रहों के उदय व अस्त होने) का फल, ग्रहों के संचार तथा सूर्य–चन्द्र–ग्रहण के प्रभाव आदि का निरूपण इस शास्त्र में किया जाता रहा। मध्ययुग से नवमशताब्दी पर्यन्त संहिता में होरा, गणित, व शकुन के साथ क्रियाकाण्ड भी परिगणित किया जाने लगा। उत्तरोत्तर विकासमान् इसकी परिभाषा में लौकिक जीवन से सम्बन्धित लगभग सभी विषय गृहीत किये जाते रहे हैं।

1.5.4 प्रश्नशास्त्र :–

इस शास्त्र से तत्काल फल कथन किया जाता है। प्रश्नकर्ता द्वारा उच्चारण किये गये अक्षरों के आधार पर फल कहा जाता है। ईशवीय पंचम व षष्ठ शताब्दी में प्रश्न पूछने वाले के शब्दों में विद्यमान अक्षरों से फलकथन की परम्परा थी किन्तु कालान्तर में 1. प्रश्नाक्षर, 2. प्रश्नलग्न, 3. स्वरविज्ञान इन तीन सिद्धान्तों को इसके अन्तर्गत स्वीकार किया गया। केवलज्ञानप्रश्नचूडामणि, चन्द्रोन्मीलन–प्रश्न, आयज्ञानतिलक व अर्हच्चूडामणि आदि ग्रन्थों को आधार बनाकर आधुनिक दाक्षिणात्य केरलीय प्रश्नशास्त्र का निर्माण किया गया है।

आचार्य पृथुयशा जो कि वराहमिहिर के पुत्र हैं के समय से प्रश्नलग्नसिद्धान्त विस्तार को प्राप्त हुआ है। आचरण, चेष्टा, हाव–भाव आदि मनोभावों के विश्लेषण पूर्वक फलकथन भी इसी सिद्धान्त में स्वीकार किया जाता है।

1.5.5 शकुन :–

इसे पूर्व में संहिता के अन्तर्गत ही स्वीकार किया जाता था। परवर्ती काल में दशम, एकादश व द्वादश शताब्दी में इसे पृथक् रूप से शास्त्र मान लिया गया। इसे निमित्तशास्त्र के रूप में भी जाना जाता है। आचार्यदुर्गदेव द्वारा इसके अरिष्टविषय भी इसी के अन्तर्गत समाहित कर दिये गये। कार्यारम्भ में शुभ एवं अशुभ का परिज्ञान भी इसके विकासमान् स्वरूप में सम्मिलित हो गया। शकुनग्रन्थ जैसे वसन्तराज–शकुन, अद्भुत सागर आदि इसके उदाहरण हैं।

1.6 भारतीयज्योतिष : काल–विभाजन :–

किसी शास्त्र का सुचारु अध्ययन तथा उसका रहस्योद्घाटन, उस शास्त्र के इतिहास का भलीभाँति ज्ञान करके ही सम्भव है। यह ज्योतिषशास्त्र समग्र सृष्टि एवं प्रकृति के रहस्य को प्रकट करता है। चूँकि इस शास्त्र को अनादिकाल से मानव–समाज में, महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। अतः ठीक–ठीक इसकी उत्पत्ति तथा काल का निश्चित रूप से अनुसन्धान अत्यन्त दुष्कर है।

मानवजीवन के विकास के साथ ही ज्योतिष का भी विकास होता रहा है। इस ज्योतिषशास्त्र का कालवर्गीकरण निम्न प्रकार से किया गया है –

1. अन्धकारकाल ईसा पूर्व 10000 वर्ष के पूर्व का समय
2. उदयकाल 10001 ई. पू. से 500 तक
3. आदिकाल ई.पू. 501 से ईशवीय 500 तक
4. पूर्वमध्यकाल ई.पू. 501 से 1000 तक
5. उत्तरमध्यकाल ई. 1001 से ई. 1600 तक
6. आधुनिककाल ई. 1601 से ई. 1951

1.6.1 अन्धकारकाल (ई.पू. 10000 वर्ष पूर्व का समय)

सृष्टि के आरम्भ से ही सभी ग्रह स्व–कक्षा में नियमित–भ्रमण करना प्रारम्भ कर देते हैं। किन्तु इसका ज्ञान होने पर भी प्रकट करना सम्भव न हुआ क्योंकि भाषा–विकास के पश्चात् ही ज्योतिष शास्त्र को प्रकट रूप में देखा जा सकता है। अतः उस समय की स्थिति के विषय में अनुमान के आधार पर यही कहा जा सकता है कि मनुष्य ने अपनी आवश्यकताओं की सम्पूर्ति हेतु सर्वप्रथम स्थान, दिशा, काल के विषय में ज्ञान प्राप्त किया होगा। क्योंकि व्यवहार में कहाँ और कब प्रश्नों के उत्तर में स्थान और काल ही आएँगे। आकाशीय ज्योतिर्पिण्डों को आधार बनाकर

ज्योतिष द्वारा ही उनका निर्धारण सम्भव है। अतः ज्योतिष ही उक्त व्यवहार सिद्धि में सहायक रहा। स्थान तथा काल का बोधक शास्त्र होने से यह जीवन का अभिन्न अंग माना गया।

उक्त अन्धकारकाल का साहित्य तो प्राप्त नहीं होता परन्तु उस काल का मनुष्य समय

के विभिन्न अंगों दिन, रात, पक्ष, मास, अयन, वर्ष आदि से परिचित था। यह अनुमान किया जा सकता है।

अन्धकारकाल की ज्योतिष-विषयक मान्यताओं का ज्ञान उदयकालीन व आदिकालीन साहित्य से हो जाता है। वैदिक दृष्टि सृष्टि के निर्माण एवं विनाश को स्वीकार करती है। सृष्टि के पश्चात् ही मनुष्य ने ग्रह-नक्षत्र आदि ज्योतिष के अंगों का अध्ययन किया होगा। परन्तु भाषा एवं लिपि के अभाव में यह मौखिक रूप से रहा होगा। ऐसा निश्चित रूप से कहा जा सकता है।

1.6.2 उदयकाल (ई.पू. 10001 से ई.पू. 500 तक) -

इस काल में समस्त ज्ञानराशि के अन्तर्गत ही समाहित होने से ज्योतिष साहित्य पृथक् रूप से प्राप्त नहीं होता है। उस समय में लोग ज्योतिष को धर्म ही मानते थे। अतः, धर्म, दर्शन एवं ज्योतिष ऐसा विभाजन नहीं होकर सब विषय एक साथ ही रहते थे।

कतिपय लोगों का अभिमत है कि उदयकाल के पहले आर्यों का आगमन उत्तरी ध्रुव भारत में हुआ था और यहीं वैदिक साहित्य का प्रणयन किया गया। किन्तु नेमिचन्द्र शास्त्री के अनुसार अन्धकारकाल में उत्तरीध्रुव आज के बिहार एवं उड़ीसा प्रान्त में था। भारत के बाहर न था। आधुनिक प्राणिशास्त्र ज्ञाताओं द्वारा चलायमान प्रक्रिया द्वारा खिसक कर उत्तरीध्रुव वर्तमान स्थान पर पहुँचा है ऐसा माना जाता है। आर्यों की प्रखर प्रतिभा से वैदिक साहित्य प्रादुर्भूत हुआ। वेद, आरण्यक, ब्राह्मण, उपनिषद्, द्वादशांग, प्रकीर्णक आदि धार्मिक साहित्य में ज्योतिष, आयुर्वेद, व शिल्प, वास्तु आदि का उल्लेख भी स्थान-स्थान पर प्राप्त होता है। इस साहित्य में मास, ऋतु, अयन, वर्ष, युग, ग्रह, सूर्य-चन्द्रग्रहण, ग्रहकक्षा, नक्षत्र, विषुव, नक्षत्र-लग्न, दिन-रात का मान तथा उनका बढ़ना-घटना आदि विषय भी विचार किये जाते थे। वेदों में ज्योतिष विषय का प्रतिपादन इतना नहीं हुआ जितना कि शतपथ ब्राह्मण, बृहदारण्यक, तैत्तिरीय ब्राह्मण आदि में हुआ |

इस काल में सूर्य, चन्द्र के अलावा मंगल-बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि ये पाँच ग्रह भी ज्योतिष में परिगणित किये जाने लगे थे। ईसवी सन् से 500 वर्ष पूर्व रचित जैन आगम में ज्योतिष को 'जोईसंगविउ' कहा गया।

इसका अर्थ ग्रह, नक्षत्र, प्रकीर्णक और ताराओं का ज्ञान व ग्रहों की स्थिति को भी बताना किया गया है।

इस प्रकार उदयकाल में ज्योतिष अपनी शैशवावस्था को प्राप्त हुआ दिखाई देता है।

1.6.3 आदिकाल ई.पूर्व. 501 से ई. 500

इस काल में ज्योतिष विषय पर ग्रन्थों की रचना स्वतन्त्र रूप से होनी प्रारम्भ हो गई थी। शिक्षा, कल्प, निरुक्त, व्याकरण, छन्द, ज्योतिष ये छः वेदांग अस्तित्व में आ गये थे। वेदांगज्योतिष में यजुर्वेद ज्योतिष व अथर्ववेदज्योतिष ग्रन्थ स्वीकार किये गये हैं। प्रथम अर्थात् वेदांगज्योतिष में 36 कारिकाएँ है। इसके संग्रहकार ऋषि लगध हैं। यजुर्वेद ज्योतिष की 49 कारिकाओं में 36 ऋग्वेद की तथा 13 नवीन हैं। अथर्वज्योतिष में 162 श्लोक हैं। फलित की दृष्टि से इसे उपयोगी माना जाता है।

इस वेदांगज्योतिष के साथ ही जैनज्योतिष के ग्रन्थ भी स्वतन्त्र रूप से रचित हुए, जिनमें सूर्य-प्रज्ञप्ति, चन्द्र-प्रज्ञप्ति, जम्बूद्वीप-प्रज्ञप्ति तथा ज्योतिष्करण्डक प्रमुख हैं। इनके अलावा कल्पसूत्र, निरुक्त, व्याकरण, स्मृति, महाभारत आदि ग्रन्थों में यत्र-तत्र ज्योतिष की चर्चाएँ उपलब्ध होती है।

वेदांग ज्योतिष में इसकी प्रधानता बताते हुए कहा गया है –

यथा शिखा मयूराणां नागानां मणयो यथा।
तद्वद्वेदांगशास्त्राणां ज्योतिषं मूर्धनि स्थितम्॥

ई. प्रथम शताब्दी से तृतीय शताब्दी के कालखण्ड में इस शास्त्र का विशेष अभ्युदय हुआ। कृत्तिकादि नक्षत्र गणना सम्भव न होने से अश्विनी आदि नक्षत्र–गण[?]। प्रचलन में आई।

ज्योतिश्चक्रे तु लोकस्य सर्वस्योक्तं शुभाशुभम्।
ज्योतिर्ज्ञानं तु यो वेद स याति परमां गतिम्॥

ज्योतिश्चक में समस्त लोकों के शुभ–अशुभ को कहा गया है, जो इस ज्योतिष का ज्ञाता है वह परम गति को प्राप्त करता है।

1.6.4 पूर्वमध्यकाल (ई. 501 से ई. 1000) –

इस काल में ज्योतिष शास्त्र ने परम–अभ्युदय को प्राप्त किया। इसी युग में वराहमिहिर जैसे अप्रतिम आचार्यों का प्रादुर्भाव हुआ, जिनके द्वारा इसे क्रमबद्ध स्वरूप देते हुए इसमें नवीन विषयों को समाविष्ट किया गया।

आचार्य वराहमिहिर द्वारा पूर्व में प्रचलित सिद्धान्तों को 'पंचसिद्धान्तिका' नामक ग्रन्थ में संग्रहीत किया गया। इसी काल में सिद्धान्त, होरा, संहिता इन भेदों के साथ–साथ ग्रहगणित में सिद्धान्त, तन्त्र तथा करण का प्रचार भी हुआ।

इसी समय उदय–अस्त, युति, श्रृंगोन्नति आदि गणित का भी प्रचलन हुआ। ब्रह्मपुत्र एवं महावीराचार्य ने गणित विषयक सिद्धान्त साहित्य रूप में प्रकट किये। इन दोनों आचार्यों द्वारा बीजगणित विषय के सिद्धान्तों में 1–ऋणराशियों के समीकरण की कल्पना, 2. वर्गसमीकरण को हल करना, 3. एकवर्ग अनेकवर्ग समीकरण, 4. वर्ग, घन एवं अनेक घात समीकरणों का हल निकालना, 5. अंकपाश, संख्या के एकादि भेद तथा कुट्टक के नियम, 6. केन्द्रफल को निकालना, 7. असीमाबद्धसमीकरण, 8. द्वितीय स्थान की राशियों का असीमाबद्ध समीकरण, 9. अर्द्धच्छेद, त्रिकच्छेद आदि लघुरिक्थ सम्बन्धी गणित, 10. अभिन्न राशियों का भिन्न राशियों में परिवर्तन आदि सिद्धान्त प्रचलित हुए। अंकगणित तक के विभिन्न सिद्धान्त भी इसी काल में प्रकाश में आए। रेखागणित के सिद्धान्तों का प्रयोग भी इस समय व्यापक रूप से किया जाने लगा था।

पूर्वमध्यकाल में फलितज्योतिष के संहिता एवं जातक अंगों पर प्रभूत मात्रा में साहित्य उपलब्ध होता है। जिन अंगों का समावेश होराशास्त्र में किया जाता था वे निम्न हैं –

राशि, होरा, द्रेष्काॅण, नवांश, द्वादशांश, त्रिंशांश, परिग्रह–स्थान, कालबल, चेष्टाबल, ग्रहों के रंग, स्वभाव, धातु, द्रव्य, जाति, चेष्टा, आयुर्दाय, दशा, अन्तर्दशा, अष्टकवर्ग, राजयोग, द्विग्रहादियोग, मुहूर्तविज्ञान, अंगविज्ञान, स्वप्नविज्ञान, शकुन तथा प्रश्नशास्त्र आदि।

संहिता में सूर्यादि ग्रहों की गति, स्वभाव, विकार, प्रमाण–वर्ण, किरण, ज्योति, संस्थान, उदय, अस्त, मार्ग, पृथक् मार्ग, वक्र, अवक्र, नक्षत्रविभाग और कूर्म का सब देशों में फल, अगस्त्य की गति, सप्तर्षियों की गति, नक्षत्र–व्यूह, ग्रह–श्रृंगाटक, ग्रह–युद्ध, ग्रह–समागम, परिवेष, परिधि, वायु, उल्का, दिग्दाह, भूकम्प, गन्धर्वनगर, इन्द्रधनुष, वास्तुविद्या, अंगविद्या, वायसविद्या, अन्तरचक्र, मृगचक्र, प्रासाद–लक्षण, प्रतिभालक्षण, प्रतिभाप्रतिष्ठा, घृतलक्षण, कम्बललक्षण, खड्ग–पद, कुक्कुट–कूर्म–गो–अजा–अश्व–लक्षण, स्त्री–पुरुषलक्षण तथ। साधारण व असाधारण सभी शुभ–अशुभों का विवेचनात्मक समावेश होता था।

ई. 500 के पास ही ग्रीस, अरब, पारस आदि देशों के ज्योतिष भी भारतीय ज्योतिष के सम्पर्क में आया। वराहमिहिर ने कहा है –

म्लेच्छा हि यवनास्तेषु सम्यक् ज्ञानमिदं स्थितम्।
ऋषिवत्तेऽपि पूज्यन्ते किं पुनर्दैवविद् द्विजः॥

इस युग के ज्योतिर्विदों में वराहमिहिर, कल्याणवर्मा, ब्रह्मगुप्त, मुंजाल, महावीराचार्य, भट्टोत्पल, चन्द्रसेन, श्रीपति, श्रीधर, भट्टवोसरि आदि प्रमुख हैं। इन्हीं के द्वारा ज्योतिष संहिता का संवर्धन किया गया है।

1.6.5 उत्तरमध्यकाल (ई. 1001 से ई. 1600) –

इस युग के अन्तर्गत ज्योतिष शास्त्र का विकास बहुत अधिक हुआ। मौलिक ग्रन्थों के साथ–साथ आलोचनात्मक ग्रन्थों की रचना भी की गई। भास्कराचार्य द्वारा पूर्ववर्ती आचार्यों आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त, लल्ल आदि द्वारा प्रतिष्ठापित सिद्धान्तों की आलोचना करते हुए आकाश–निरीक्षण द्वारा ग्रहमान की स्थूलता का ज्ञान कर उसे दूर करने हेतु बीजसंस्कार की व्यवस्था की गई। ई. द्वादश शताब्दी में गोलविषयक गणित का अत्यधिक प्रचार हुआ। भास्कराचार्य ने कहा है –

वादी व्याकरणं विनैव विदुषां धृष्टः प्रविष्टः सभां
जल्पन्नल्पमतिः स्मयात्पटुवटुभ्रूभंगवक्रोक्तिभिः;
ह्रीणः[?] सन्नुपहासमेति गणको गोलानभिज्ञस्तथा
ज्योतिर्वित्सदसि प्रगल्भगणकप्रश्नप्रपंचोक्तिभिः॥

जैसे तार्किक व्याकरण ज्ञान के बिना विद्वत्सभा में लज्जित एवं अपमानित होता है, वैसे ही गोलविषयक गणितज्ञान के बिना ज्योतिषी ज्योतिर्विदों के मध्य गोलगणित के उपयुक्त उत्तर न दे पाने से लज्जा एवं अपमान का भाजन बनता है।

इस काल में पृथ्वी को स्थिर व सूर्य को गतिशील स्वीकार किया जाता था। पृथ्वी की आकर्षण–शक्ति ज्योतिष शास्त्र में चर्चा में आई।

इसी समय, पृथ्वी को गोल मानने से श्रृंगोन्नति, ग्रहयुति, ग्रहण, उदय–अस्त, व छाया आदि के गणित के द्वारा साधित ग्रहों को दृक्तुल्य सिद्ध किया गया। उदयान्तर, चरान्तर तथा भुजान्तर संस्कारों द्वारा ग्रहगणित में सूक्ष्मता भी इन्हीं के द्वारा प्रचारित हुई।

ग्रहगणित के समस्त अंगों लम्बन, गति, आयन–वलन, अक्षवलन, आयनदृक्कर्म, आक्षदृक्कर्म, भूमिबिम्बसाधन ग्रह–स्पष्ट करने के विविध गणित तथा तिथ्यादि साधन में विभिन्न संस्कार आदि के सहयोग से आकाश–निरीक्षण द्वारा प्राप्त ग्रहों से गणित–साधित ग्रहों का मिलान इस युग की प्रमुख विशेषता है।

इसके अलावा यन्त्र–निर्माणविधि तथा यन्त्रों द्वारा ग्रहवेध प्रणाली का निरूपण भी इस युग का वैशिष्ट्य है।

फलित ज्योतिष के जातक, मुहूर्त्त, सामुद्रिक, रमल तथा प्रश्नादि अंगों से सम्बद्ध साहित्य भी प्रचुर मात्रा में प्रणीत किया गया।

इस युग के ज्योतिर्विद आचार्यों में भास्कराचार्य, दुर्गदेव, उदयप्रभदेव, मल्लिषेण, राज्यादित्य, बल्लालसेन, पद्मप्रभसूरि, नारचन्द्र उपाध्याय, अट्टकवि या अर्हद्दास, महेन्द्रसूरि, मकरन्द, केशव, गणेश, दुण्ढिराज, नीलकण्ठ, रामदैवज्ञ, मल्लारि, नारायण व रंगनाथ प्रमुख हैं।

इनके अतिरिक्त ज्योतिषशास्त्र के मौलिक ग्रन्थकर्ता तथा टीकाकार अन्य अनेक आचार्य ज्योतिषशास्त्र को समृद्ध करने वाले हुए हैं।

1.6.6 आधुनिक अथवा अर्वाचीन काल (ई. 1601 से 1951) –

इस काल के प्रारम्भ में मुस्लिम एवं पाश्चात्य सभ्यता के आगमन से विविध विषयक साहित्य जिसमें ज्योतिष भी सम्मिलित है का विकास अवरुद्ध सा हो गया था। आकाश–निरीक्षण की परम्परा समाप्त हो जाने से वास्तविक ज्योतिष तत्त्वों की उन्नति नहीं हुई। केवल पुस्तकीय ज्ञान ही ज्योतिष बन कर रह गया। कुछ फलितग्रन्थों की रचना अवश्य हुई है –

शकुन, प्रश्न, मुहूर्त, जन्मपत्र व वर्षपत्र विषयक साहित्य का निर्माण इस युग में हुआ है। सूर्यसिद्धान्त का प्रचार करने हेतु कमलाकर भट्ट द्वारा 'सिद्धान्ततत्त्वविवेक' नामक गणित–ज्योतिष का ग्रन्थ लिखा गया।

इसके अनन्तर ई. 1780 में महाराज जयसिंह द्वारा काशी, जयपुर एवं दिल्ली में वेधशालाओं का निर्माण कराया गया, जिसमें पत्थर की ऊँची दीवारों के रूप में विशाल–यन्त्र निर्मित किये गये।

वर्तमान युग में पृथ्वी, चन्द्रमा, सूर्य, सौरचक्र, बुध, शुक्र, मंगल, अवान्तर ग्रह, बृहस्पति, यूरेनस, नेप्च्यून, नभस्तूप, आकाशगंगा एवं उल्का आदि पाश्चात्य ज्योतिष के सम्पर्क से विशेषरूप से वैज्ञानिक विश्लेषण का विषय बने।

वर्तमान युग के ज्योतिर्विद् आचार्यों में मुनीश्वर, दिवाकर, कमलाकर भट्ट, नित्यानन्द, महिमोदय, मेघविजयगणि, उभयकुशल, लब्धिचन्द्रगणि, बाघजी मुनि, यशस्वतसागर, जगन्नाथ सम्राट्, बापूदेव शास्त्री, नीलाम्बर झा, सामन्त चन्द्रशेखर, सुधाकर द्विवेदी आदि प्रमुख विद्वानों के अतिरिक्त भी अनेक मनीषियों ने ज्योतिष शास्त्र के उन्नयन में उल्लेखनीय योगदान किया है।

आज के भौतिक युग में भी ज्योतिष ज्ञान–विज्ञान का संरक्षण संवर्द्धन करने हेतु नवीन अनुसन्धान अपेक्षित है।

1.7 विविध परिभाषाएँ –

1. तिथि – चन्द्रमा की एक कला को तिथि कहा जाता है। इसका चन्द्र एवं सूर्य के अन्तरांशों पर से मान निकाला जाता है।

अमावस्या – अमावस्या के तीन भेद हैं।

क. सिनीवाली – प्रातः काल से लेकर रात्रि तक रहने वाली अमावस्या सिनीवाली कहलाती है।

ख. दर्श – चतुर्दशी से विद्ध आमवस्या दर्श होती है।

ग. कुहू – प्रतिपदा से युक्त अमावस्या कुहू नाम से जानी जाती है।

2. नक्षत्र – कई ताराओं के समूह को नक्षत्र कहते हैं।

3. योग – सूर्य एवं चन्द्रमा के स्पष्ट स्थानों के जोड़ को योग कहते हैं।

4. करण – तिथि के आधे भाग को करण कहा जाता है। अतः एक तिथि में दो करण होते हैं।

5. वार – जिस दिन की प्रथम होरा का स्वामी जो ग्रह होता है उस दिन उसी ग्रह के नाम का वार रहता है।

6. राशियाँ – आकाश में स्थित भचक्र के 360 अंश अथवा 108 भाग होते हैं। समस्त भचक्र 12 राशियों में विभक्त है। अतः 30 अंश अथवा 9 वें भाग की एक राशि होती हे।

सम्वत्सर

आप प्रथम पुस्तक में सम्वत्सर का परिचय प्राप्त कर चुके हैं। इसके विषय में यह ज्ञान प्राप्त करना भी उपयोगी होगा।

विक्रम सम्वत् में 135 घटा देने से शाके बन जाता है
विक्रम सम्वत् में 57 घटा देने से ईशवीय सन् प्राप्त किया जा सकता है।
विक्रम सम्वत्–135 = शाके
शाके +135 = विक्रम सम्वत्
विक्रम सम्वत्–57 = ईशवीय सन्
ईशवीय सन् +57 = विक्रम सम्वत्
ईशवीय सन् –78 = शाके
ईशवीय सन् –583 = सन् हिजरी (354 दिन का साल। प्रायः 33 वर्ष बाद हिजरी सन् एक बढ़ जाता है)
सन् हिजरी –10 = सन् फसली
सन् फसली–1 = बंगला सन्
शाके –515 = सन् फसली

विक्रम सम्वत् का आरम्भ चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से होता है। सम्वत्सर 60 होते हैं जो अपने नाम के अनुसार फल प्रदान करने वाले कहे गये हैं।

सम्वत्सर निम्न हैं :–

प्रभवो विभवः शुक्लः प्रमोदोऽथ प्रजापतिः।
अंगिरा श्रीमुखो भावो युवा धाता तथैव च॥
ईश्वरो बहुधान्यश्च प्रमाथी विक्रमो वृषः।
चित्रभानुः सुभानुश्च तारणः पार्थिवोऽव्ययः॥
सर्वजित् सर्वधारी च विरोधी विकृतिः खरः।
नन्दनो विजयश्चैव जयो मन्मथदुर्मुखौ॥
हेमलम्बी विलम्बी च विकारो शार्वरी प्लवः।
शुभकृच्छोभनः क्रोधी विश्वावसुपराभवौ॥
प्लवंगः कीलकः सौम्यः साधारणो विरोधकृत्।
परिधावी प्रमादी च आनन्दो राक्षसो नलः॥
पिंगलः कालयुक्तश्च सिद्धार्थी रौद्रदुर्मती।
दुन्दुभी रुधिरोद्गारी रक्ताक्षः क्रोधनः क्षयः॥
षष्ठिसंख्याः समाख्याता नामतुल्यफला इमे॥

ब्रह्माविष्णुरुद्रविंशतिभेदेन क्रमेण सृष्टिस्थितिप्रलयानुरूपफलमेतेषाम्।

प्रभव, विभव, शुक्ल, प्रमोद, प्रजापति, अंगिरा, श्रीमुख, भाव, युवा, धाता, ईश्वर, बहुधान्य, प्रमाथी, विक्रम, वृष, चित्रभानु, सुभानु, तारण, पार्थिव, अव्यय, सर्वजित्, सर्वधारी, विरोधी, विकृति,खर, नन्दन, विजय, जय, मन्मथ, दुर्मुख, हेमलम्बी, विलम्बी, विकारी, शार्वरी, प्लव, शुभकृत्, शोभन, क्रोधी, विश्वावसु, पराभव, प्लवंग, कीलक, सौम्य, साधारण, विरोधकृत्, परिधावी, प्रमादी, आनन्द, राक्षस, नल, पिंगल, कालयुक्त, सिद्धार्थी, रौद्र, दुर्मति, दुन्दुभि, रुधिरोद्गारी, रक्ताक्ष, क्रोधन तथा क्षय ये 60 सम्वत्सर होते हैं जो क्रमशः आते रहते हैं।

इनमें से प्रथम 20 सम्वत्सर ब्रह्मविंशति कहे जाते हैं, उनके बाद के 20 सम्वत्सर विष्णुविंशति तथा उनके बाद के 20 सम्वत्सर रुद्रविंशति कहलाते हैं। सृष्टि, स्थिति एवं प्रलय के अनुरूप ही इनका फल कहा गया हैं।

1.8 सारांश

इस इकाई का अध्ययन करके आपने ज्योतिष की व्युत्पत्ति एवं परिभाषा का ज्ञान प्राप्त किया है। ज्योतिष का काल–वर्गीकरण इसके क्रमिक विकास को स्पष्ट करता है। विभिन्न परिभाषाएं ग्रह, नक्षत्र आदि के स्वरूप को प्रकट करती हैं।

1.9 शब्दावली :

1. सृष्ट्यादि : सृष्टि का आरम्भ

2. शैशवावस्था : बचपन

3. अभ्युदय : उन्नति

अभ्यास प्रश्न

प्रश्न 1. ज्योतिष का व्युत्पत्तिपरक अर्थ स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 2. ज्योतिष की संक्षिप्त परिभाषा लिखिए।

प्रश्न 3. स्कन्धपंचक किसे कहते हैं।

प्रश्न 4. आचार्य वराहमिहिर का जन्म किस काल में हुआ था।

प्रश्न 5. विक्रम सम्वत् का प्रारम्भ कब होता हैं।

प्रश्न 6. ज्योतिष शास्त्र को कितने भागों में विभक्त किया गया है।

प्रश्न 7. होरा शास्त्र में किसका अध्ययन किया जाता है?

प्रश्न 8. सिद्धान्त में क्या क्या आता है।

प्रश्न 9. संहिता में किन विषयों का अध्ययन किया जाता है।

प्रश्न 10. सिनीवाली अमावस्या किसे कहते हैं।

प्रश्न 11. दर्श अमावस्या कौन सी होती है।

प्रश्न 12. कुहू अमावस्या का क्या लक्षण है।

1.10 अभ्यास प्रश्नोत्तर

उत्तर 1 : 'ज्योतिष' का व्युत्पत्तिपरक अर्थ ज्ञात करने के लिए महत्त्वपूर्ण वेदांग व्याकरण का अनुसरण करना होगा। इसके अनुसार द्युत् द्योतने (प्रकाशने) धातु से द् को ज्, इसि प्रत्यय करके गुण, ज्योतिस्, स् को ष् करके ज्योतिष शब्द निष्पन्न होता है। जिसका अर्थ है प्रकाशमान् आकाशीय ग्रह, नक्षत्र, तारे आदि।

उत्तर 2. ज्योतिर्पिण्डों अर्थात् ग्रह–नक्षत्र–तारों इत्यादि की गति, संचरण आदि के गणितीय विश्लेषण तथा उनसे होने वाले प्रभाव का अध्ययन करने वाला ज्योतिषशास्त्र है। इसको छः वेदांगों में से एक महत्त्वपूर्ण अंग माना गया है।

उत्तर 3. सिद्धान्त, होरा, संहिता, शकुन तथा निमित्त स्कन्धपंचक कहलाते हैं।

उत्तर 4. आचार्य वराहमिहिर का जन्म पूर्वमध्यकाल में हुआ था।

उत्तर 5. प्रभव आदि 60 सम्वत्सर माने जाते हैं।

उत्तर 6 ज्योतिष शास्त्र को सिद्धान्त, होरा, संहिता इन तीन भागों में विभक्त किया गया है।

उत्तर 7. होरा में जातक अर्थात् व्यक्ति से संबंधित विषय का अध्ययन किया जाता है।

उत्तर 8. सिद्धान्त में हम ग्रहों की गति–दूरी–चाल आदि का अध्ययन करते हैं।

उत्तर 9. संहिता में भूभाग से जुड़े विषय यथा वर्षा, आंधी, भूकंप, नक्षत्र, धूमकेतु, उल्का, ग्रहण–प्रभाव, गृह निर्माण, भूमि में जल की स्थिति का ज्ञान, यज्ञ मुहूर्त, शकुन, रत्न परीक्षा, ग्रह नक्षत्रों का राष्ट्र पर प्रभाव, अंग लक्षण इत्यादि का अध्ययन किया जाता है।

उत्तर 10. प्रातः काल से लेकर रात्रि तक रहने वाली अमावस्या सिनीवाली कहलाती है।

उत्तर 11. चतुर्दशी से विद्ध आमवस्या दर्श होती है।

उत्तर 12. प्रतिपदा से युक्त अमावस्या कुहू नाम से जानी जाती है।

1.11 सन्दर्भग्रन्थ–सूची

1. भारतीय ज्योतिष : अनुवादक – शिवनाथ झारखण्डी

2. भारतीय ज्योतिष : नेमिचन्द्र शास्त्री

3. सुगम ज्योतिष : पं. देवीदत्त जोशी

1.12 उपयोगी व सहायक पाठ्य सामग्री

1. सुगम ज्योतिष : पं. देवीदत्त जोशी

2. भारतीय ज्योतिष : नेमिचन्द्र शास्त्री

1.13 निबन्धात्मक प्रश्न

ज्योतिष का काल–वर्गीकरण कीजिए।

इकाई – 2 ज्योतिष शास्त्र के प्रवर्त्तक

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 ज्योतिषशास्त्र के प्रवर्त्तक

2.4 ज्योतिष का इतिहास

2.5 सारांश

2.6 शब्दावली

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.8 संदर्भग्रंथ–सूची

2.9 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

पूर्व में ज्योतिष की व्युत्पत्ति व परिभाषाओं का अध्ययन किया जा चुका है ज्योतिष की परम्परा अति प्राचीन है। ज्योतिष का उदयकाल वैदिक काल ही है। ऋक्, यजु एवं अथर्व ज्योतिष इसी युग की देन है। ऋक् ज्योतिष में विविध योग, ऋतु, अयन व 27 नक्षत्रों का नामकरण किया गया है।

अथर्वज्योतिष में फलित ज्योतिष के अनेक सिद्धान्त हैं वेदांगज्योतिष में फलितज्योतिष से सम्बन्धित महत्वपूर्ण ग्रन्थ अथर्व ज्योतिष ही है। वैदिककाल से प्रारम्भ होकर यह ज्योतिष की परम्परा ग्रन्थ रूप में वेदांगज्योतिष, सूर्य–प्रज्ञप्ति, चन्द्र–प्रज्ञप्ति, ज्योतिष्करण्डक आदि ग्रन्थ हैं।

पितामह सिद्धान्त, वशिष्ठ सिद्धान्त, सूर्य सिद्धान्त, वृहत् पाराशर होरा शास्त्र आदि भी महत्वपूर्ण रचनाएं हैं। आर्यभट्ट, लल्लाचार्य, वराहमिहिर, कल्याणवर्मा ने ज्योतिष परम्परा को अत्यन्त समृद्ध किया है। प्रस्तुत इकाई में आप ज्योतिष की आचार्य परम्परा के विषय में अध्ययन करेंगे।

आगामी अध्याय में राशियों व उनके गुण–धर्म के विषय में अध्ययन किया जायेगा।

2.2 उद्देश्य

- ज्योतिष शास्त्र की प्राचीनता से परिचित हो सकेंगे।
- ज्योतिष शास्त्र के प्रवर्तक आचार्यों के नाम लिख सकेंगे।
- ज्योतिष के प्रमुख भाग– सिद्धान्त, संहिता तथा होरा के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- ज्योतिष शास्त्र के प्रमुख लेखकों व उनके द्वारा लिखी गयी कृतियों का परिचय प्राप्त करेंगे।

2.3 ज्योतिष शास्त्र के प्रवर्त्तक

ज्योतिष वेद का छठा अंग है जो सृष्टि के प्रारंभ से चला आ रहा है। काल क्रम के आधार पर ज्योतिष के 18 प्रणेता माने गये हैं यथा– सूर्य, पितामह, व्यास, वशिष्ठ, अत्रि, पराशर, कश्यप, नारद, गर्ग, मरीचि, मनु, अंगिरा, लोमश, पौलिश, चावल, यवन, भुगु एवं शौनक। इनके अतिरिक्त ज्योतिष के अनेक शोध और व्याख्या करने वाले अनेक विद्वान् हैं। ज्योतिष के अनेक ग्रन्थ बाहरी आक्रमणों के कारण नष्ट हो गये थे फिर भी ज्योतिष की अमूल सामग्री देश विदेश में अनेक विद्वानों के पास आज भी विद्यमान है। ज्योतिषशास्त्र परम्परा के द्वारा श्रुत व पठित रूप में मानव जाति को प्राप्त हुआ है।

ज्योतिष–शास्त्र का यह ज्ञान ब्रह्मा ने नारद मुनि को, सूर्य ने मयासुर को, चन्द्र ने शौनक मुनि को, वशिष्ठ ने माण्डव्य को पढाया था ऐसा मत सिद्धान्ततत्वविवेक में कमलाकर भटट ने प्रस्तुत किया है।

पाराशर के मतानुसार ब्रह्मा ने नारद को, चन्द्र ने शौनक को, वशिष्ठ ने माण्डव्य व वामदेव को, नारायण ने वशिष्ठ व लोमश को व्यास ने अपने शिष्य को, सूर्य ने मय को, सूर्य ने विभिन्न युगों में तत्कालीन महर्षियों को, स्वयं पाराशर ने मैत्रैय को बार–बार उसी शास्त्र को पढाया था।

इस विषय में रोमक ने कहा है कि ब्रह्मा ने यह शास्त्र सूर्य को तथा सूर्य ने यवन को पढ़ाया।

अतः स्पष्ट है कि ब्रह्मा जी ने स्वयं इस शास्त्र को प्रकट किया था तथा सूर्यदेव ने इसे विस्तृत एंव पल्लवित करके अपने विभिन्न शिष्यों को दिया। ज्योतिषशास्त्र विशिष्ट बुद्धि वाले, निर्मल मन वाले, जितेन्द्रिय व आध्यात्मिक शक्ति सम्पन्न लोगों द्वारा समय–समय पर प्रसारित तथा प्रचारित किया गया है।

ऋक् ज्योतिष :

ऋक् ज्योतिष के अन्तर्गत युग, दिवस, ऋतु, अयन, मास, युगाध्यक्ष, पर्व, योग, व्यतीपात, ध्रुवयोग, मुहूर्त, प्रमाण, नक्षत्र–देवता, दिनमान, अधिमास, उग्र तथा क्रूर नक्षत्र, नक्षत्रों के भोग्य काल, लग्नायन, वेधोपाय एवं कलादि नक्षत्रों का वर्णन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है।

याजुष–ज्योतिष

इसमें तिथि, नक्षत्र, करण, योग, तारा और चन्द्रमा के बल–अबल का विवरण मिलता है। अथर्वज्योतिष की रचना के समय ज्योतिषशास्त्र का विचार सूक्ष्म दृष्टि से होने लगा था। इसी समय वारों का भी प्रचार हो गया था तथा वाराधिपति भी प्रचलित हो गये थे। सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि ये सात वाराधिपति सात दिनों के माने गये हैं। इसी प्रकार तीन–तीन नक्षत्रों का एक–एक वर्ग स्थापित कर फल किया गया है।

अथर्व–ज्योतिष

अथर्व–ज्योतिष फलित की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसमें फलितज्योतिष के अनेक सिद्धान्त प्राप्त होते हैं। वेदांग ज्योतिष में फलितज्योतिष का महत्त्वपूर्ण एवं स्वतन्त्र ग्रन्थ यही कहा जा सकता है। अथर्व–ज्योतिष में 162 श्लोक और 14 प्रकरण हैं। इसे पितामह ने काश्यप से कहा है। अथर्ववेद में तीन, पांच और छः ऋतुओं का उल्लेख मिलता है। एक मन्त्र में शरद्, हेमन्त और वसन्त इन तीन ऋतुओं का वर्णन है। इस मन्त्र में सौ शरद्, सौ हेमन्त और सौ बसन्त तक जीने का वर्णन आता है। अथर्ववेद में तिथियों के पूरे नाम नहीं मिलते हैं।

वेदांग–ज्योतिष

ज्योतिषशास्त्र में हमें वेदांग–ज्योतिष एक प्रामाणिक ग्रन्थ मिलता है। इस ग्रन्थ का रचना काल ईसा पूर्व 1200 वर्ष माना है। वेदांग–ज्योतिष गर्ग, पराशर और पाणिनि से भी अत्यन्त प्राचीन है। शंकर बालकृष्ण दीक्षित ने इसका रचना काल ईसा पूर्व 1400 वर्ष माना है। लोकमान्य तिलक भी इसी मत का समर्थन करते हैं।

इस ग्रन्थ में ऋग्वेद ज्योतिष के 44 श्लोक एवं यजुर्वेद–ज्योतिष के 36 श्लोक लिये गये हैं वेदांग–ज्योतिष का जो ग्रन्थ आज मिलता है उसमें केवल 49 श्लोक हैं। वेदांग–ज्योतिष के दो पाठ मिलते हैं। (1) ऋग्वेद–ज्योतिष (2) यजुर्वेद–ज्योतिष। इनसे भिन्न तीसरा एक अथर्व–ज्योतिष नाम का ग्रन्थ भी प्रसिद्ध है। पहले दोनों ग्रन्थों में बड़ा साम्य है। ऋग्वेद ज्योतिष के 36 श्लोकों में से 30 श्लोक यजुर्वेद ज्योतिष से आये हैं और इसके अतिरिक्त 13 श्लोक और भी हैं। इस प्रकार दोनों ग्रन्थों में 36+13 कुल 49 श्लोक हैं। वेदांगों में जैसे व्याकरण के आचार्य पाणिनि, छन्दःशास्त्र के आचार्य पिंगल और निरुक्त के आचार्य यास्क हैं, उसी प्रकार ऋग्वेद ज्योतिष के आचार्य लगध हैं।

सूर्य–प्रज्ञप्ति

प्राचीन ज्योतिष का मौलिक ग्रन्थ सूर्य–प्रज्ञप्ति है, इसे छठा उपांग माना गया है। कई ग्रन्थों में तो इसको पांचवाँ उपांग माना गया है। इस ग्रन्थ की भाषा प्राकृत है। इस पर मलयगिरि सूरि ने संस्कृत टीका लिखी है। सूर्यप्रज्ञप्ति में सूर्य आदि ज्योतिष्चक्र का वर्णन है। इसमें एक अध्याय 20 प्राभृत, उपलब्ध मूलपाठ में 2200 श्लोक परिमाण हैं। गद्यसूत्र 108 तथा पद्यगाथा 103 हैं।

चन्द्र–प्रज्ञप्ति :

इसमें सूर्य की प्रतिदिन की योजनात्मिका गति निकाली गई है तथा उत्तरायण और दक्षिणायन की वीथियों का अलग–अलग विस्तार निकालकर सूर्य और चन्द्रमा की गति निश्चित की गई है तथा चन्द्रमा का 16 वीथियों में समचतुरस्र गोल आकार बताया गया है। इसका कारण यह है कि सुषमा काल के आदि में श्रावण कृष्ण प्रतिपदा के दिन जम्बू द्वीप का प्रथम सूर्य पूर्व दक्षिण अग्नि कोण में और द्वितीय सूर्य पश्चिमोत्तर वायव्य कोण में चला। इसी प्रकार प्रथम चन्द्रमा पूर्वोत्तर ईशान कोण में और द्वितीय चन्द्रमा पश्चिम दक्षिण नैर्ऋत्य कोण में चला। अतएव युगादि में सूर्य और चन्द्रमा का समचतुरस्र संस्थान था पर उदय होते समय से ग्रह वर्तुलाकार से निकले। अतः सूर्य और चन्द्र का आकार अर्धक, पीठ अर्द्ध समचतुरस्र गोल बताया है। चन्द्रप्रज्ञप्ति में छाया साधन किया गया है तथा छाया प्रमाण कर उसके दिनमान का भी प्रमाण निकाला है। चन्द्र–प्रज्ञप्ति के 19वें प्राभृत में चन्द्रमा को स्वतः प्रकाशमान् बतलाया तथा इसके घटने–बढ़ने का कारण भी स्पष्ट किया। 18वें प्राभृत में चन्द्र–सूर्य, ग्रह–नक्षत्र और ताराओं की ऊँचाई का वर्णन किया है।

20वें प्राभृत में सूर्य और चन्द्र–ग्रहणों का वर्णन किया गया है तथा राहु और केतु के पर्यायवाची शब्द भी बताये गये हैं।

ज्योतिष्करण्डक :

ज्योतिष्करण्डक नामक 176 गाथाओं का एक ग्रंथ प्राप्त हुआ है। इसका विषय अविकसित अवस्था में है। इसमें बारह राशियों तथा वारों का कोई उल्लेख नहीं है तथा बुध, शुक्र आदि ग्रहों का भी विवरण नहीं है। केवल ग्रहों की संख्या 88 है, इतना उल्लेख है। सूर्य, चन्द्र एवं नक्षत्रों का कतिपय वर्णन इसमें उपलब्ध है। इसमें कृत्तिकादि, धनिष्ठादि, भरण्यादि, श्रवणादि एवं अभिजितादि नक्षत्रों का समालोचनात्मक विवेचन प्राप्त होता है।

पितामह–सिद्धान्त :

सूर्य–प्रज्ञप्ति और ऋक् ज्योतिष के समान यह सिद्धान्त भी प्राचीन है। ब्रह्मगुप्त, भास्कराचार्य ने पितामह–सिद्धान्त को ही आधार माना है। पितामह–सिद्धान्त में सूर्य और चन्द्रमा के अतिरिक्त अन्य ग्रहों का गणित नहीं आया है।

वशिष्ठ–सिद्धान्त :

वशिष्ठ–सिद्धान्त में 12 श्लोक हैं। सूर्य और चन्द्र के अतिरिक्त अन्य ग्रहों का गणित इसमें भी नहीं है। वर्तमान में लघुवशिष्ठ नामक ग्रन्थ मिलता है जिसमें 94 श्लोक हैं।

रोमक–सिद्धान्त :

रोमक–सिद्धान्त के व्याख्याता लाटदेव हैं। किसी ग्रीक सिद्धान्त के आधार पर लिखे गये इस ग्रन्थ में गणित पूर्व के दो सिद्धान्तों की अपेक्षा अधिक विकसित है।

पौलिश–सिद्धान्त :

पौलिश–सिद्धान्त में गणित भी अंकों द्वारा स्थूल रीति से निकाला गया है। यह यूनान के विद्वान् पौलिश के द्वारा रचित है। वर्तमान में वराह और भट्टोत्पल के अलग–अलग संकलित पौलिश–सिद्धान्त मिलते हैं।

सूर्य–सिद्धान्त :

ब्रह्माण्ड अथवा अन्तरिक्ष से जुड़े हुये अनेक ऐसे प्रश्न हैं जो निश्चयात्मक रूप से आज तक नहीं सुलझ सके हैं। भास्कर ने स्वयं ही अनेक रहस्यों का उद्घाटन करते हुए ज्योतिषशास्त्र सम्बन्धी अनेक शंकाओं का समाधान किया है तथा ज्योतिषशास्त्र सम्बन्धी अत्यन्त गूढ़ रहस्यों का वर्णन किया है। अंशावतार सूर्य और मय के संवाद से स्पष्ट होता है कि समय–समय पर ज्योतिष–शास्त्र का उपदेश भगवान सूर्य द्वारा होता रहा है।

भारतीय विद्याओं की यह मान्यता है कि ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का कारण सूर्य है। महर्षि व्यास ने स्पष्ट[?] शब्दों में लिखा है कि नक्षत्र ग्रह तथा चन्द्र का मूल सूर्य है तथा इनकी उत्पत्ति सूर्य से ही हुई है। इन्हीं भगवान् सूर्य को वेदों में हिरण्यगर्भ कहा गया है। सर्वप्रथम (आदि में) प्रकट होने के कारण इन्हें आदित्य तथा सृष्टि की उत्पत्ति (प्रसूति) करने के कारण इन्हें सूर्य कहा गया है।

पराशर :

फलित–ज्योतिष के प्रमुख आचार्यो में पराशर का नाम प्रमुख है। इन्होंने अपनी प्रज्ञा से ज्योतिष के अनेक फलित ग्रन्थों की रचना की है। वृहत्पाराशरहोराशास्त्र 17 अध्यायों में है। इसमें ग्रहगुणस्वरूप, राशिस्वरूप, विशेषलग्न, षोडशवर्ग, राशिदृष्टिकथन, अरिष्टाध्याय, अरिष्टभंग, भावविवेचन, द्वादशभावों का पृथक्–पृथक्, फलनिर्देश, अप्रकाशग्रहफल, आयुर्दाय, मारकयोग, दशाफल, विशेषनक्षत्र–दशाफल, कालचक्र, सूर्यादि ग्रहों की अन्तदर्शाओं का फल, अष्टकवर्ग, त्रिकोणशोधन, पिण्डसाधन, रश्मिफल, नष्टजातक, स्त्रीजातक, अंगलक्षण, ग्रहशान्ति, अशुभजन्म–निरूपण, अनिष्टयोगशान्ति आदि विषय का वर्णन है। संहिता और जातक दोनों ही प्रकार के विषयों का इसमें वर्णन है।

प्रथम आर्यभट्ट :

ज्योतिष का क्रमबद्ध इतिहास हमें आर्यभट्ट से ही प्राप्त होता है। आर्यभट्ट ज्योतिष शास्त्र के महान् ज्ञाता थे। आर्यभट्ट में ज्योतिष शास्त्र के अनेक तथ्यों का उद्घाटन उसकी महत्ता है। आर्यभट्ट का समय शाके 398 माना गया है। आर्यभट्टीय नामक ग्रन्थ की रचना आर्यभट्ट प्रथम ने की थी। इसकी रचना पद्धति बहुत ही वैज्ञानिक और भाषा बहुत ही संक्षिप्त है। आर्यभट्टीय में कुल 121 श्लोक हैं।

द्वितीय आर्यभट्ट :

इनके सिद्धान्त का नाम महाआर्यभट्टीय है। इसी ग्रन्थ का दूसरा नाम महाआर्यसिद्धान्त भी है। ये विद्वान् भास्कराचार्य के पूर्व के प्रतीत होते हैं।

लल्लाचार्य :

लल्लाचार्य के पिता का नाम भट्टत्रिविक्रम था। इनका जन्म शक सं. 421 में हुआ था। लल्लाचार्य गणित, जातक और संहिता इन तीनों में पूर्ण प्रवीण थे। यह आर्यभट्ट के सिद्धान्तों को लेकर चले हैं। इनकी रचना शिष्यधीवृद्धि में प्रधान रूप से गणिताध्याय ओर गोलाध्याय हैं। इनका रत्नकोष नामक संहिता–ग्रन्थ भी प्राप्त होता है।

वराहमिहिर :

वराहमिहिर ने वृहत्संहिता की रचना की है। ज्योतिष के वैज्ञानिक स्वरूप का दर्शन कर अपनी विलक्षण प्रतिभा से भारतीय ज्योतिष के रचयिता श्री शंकर बालकृष्ण दीक्षित ने वराहमिहिर का समय शाके 427 के पहिले शाके 407 के आसपास बताया है। आचार्य वराहमिहिर के पंचसिद्धान्तिका, बृहत्संहिता और बृहज्जातक नामक ग्रंथ अलग–अलग क्रमशः सिद्धान्त, संहिता और होरा स्कन्धों से सम्बन्धित हैं। इन्होंने यात्रा, विवाह, गणित (करण) होरा और संहिता विषयों के ग्रन्थ बनाये हैं।

कल्याण वर्मा :

इन्होंने सारावली नामक ग्रन्थ की रचना की है।

ब्रह्मगुप्त :

इन्होंने ब्रह्मस्फुटसिद्धान्त नामक ग्रन्थ की रचना की है।

मुंजाल :

इन्होंने लघुमानस नामक करण ग्रन्थ लिखा।

कालकाचार्य :

इन्होंने निमित्त शास्त्र एवं संहिता–ग्रंथ की रचना की है।

उद्योतन सूरि :

इन्होनें कुवलयमाला नामक एक ज्योतिष ग्रन्थ की रचना की है।

महावीराचार्य :

इन्होंने ज्योतिषपटल और गणितसार संग्रह नामक ज्योतिष ग्रन्थों की रचना की है।

भट्टोत्पल :

इन्होंने वराहमिहिर के ग्रन्थों की प्रसिद्ध टीकाएं प्रस्तुत कीं।

चन्द्रसेन :

केवलज्ञानहोरा के रचयिता जैनाचार्य चन्द्रसेन थे।

श्रीपति :

शेखरनामक गणित–ज्योतिष का ग्रन्थ तथा रत्नावली, श्रीपति–पद्धति, रत्नसागर, रत्नमाला इन फलित ज्योतिष के ग्रन्थों की रचना की।

श्रीधर :

ज्योतिर्ज्ञान–विधि एवं जातक–तिलक नामक दो ज्योतिष ग्रन्थों की रचना की।

आचार्य भट्टवोसरि :

भट्टवोसरि ने प्रश्नशास्त्र पर आयज्ञानतिलक नामक एक ग्रन्थ लिखा।

भास्कराचार्य :

भाास्कराचार्य ने लीलावती, बीजगणित, सिद्धान्त शिरोमणि, करणकुतूहल और सर्वतोभद्र ग्रन्थों की रचना की।

दुर्गदेव :

दुर्गदेव ने प्राकृत भाषा में प्रश्न शास्त्र एवं शकुन शास्त्र पर क्रमशः अर्धकाण्ड एवं रिठ्ठसमुच्चय नामक दो ग्रन्थ लिखे।

नरपति :

नरपति ने शकुन शास्त्र सम्बन्धी नरपतिजयचर्या (अथवा नरपतिजयवर्णन) नामक ग्रंथ की रचना की।

2.4 ज्योतिष का इतिहास

ज्योतिष उदय काल ईसा से 500 ईस्वी तक रहा इसमें जो प्राचीन ऋषि प्रवर्तक रहे उन्होने अपने नाम के ज्योतिष सिद्धांत बनाये। फलित ज्योतिष में महर्षि पराशर का नाम प्रमुखता से आता है। जिसमें वृहत्पाराशर होरा शास्त्र मुख्य ज्योतिष का ग्रन्थ रहा। इसके बाद आर्य भट्ट, लल्लाचार्य हुए उनके द्वारा गणित, जातक और संहिता के बारे में जानकारी दी गई। मध्यकाल 1000 ईस्वी तक में ज्योतिष चरम सीमा पर पहुंचा जिसमें आचार्य वाराहमिहिर राजा विक्रमादित्य के नवरत्नों में से एक थे। इनके द्वारा पंचसिद्धांतिका, वृहत्संहिता और वृहज्जातक नामक ग्रन्थ लिखे गये जो **सिद्धांत, संहिता** तथा **होरा** स्कन्धों से संबंधित हैं।

वेदांग–ज्योतिष की रचना ईसापूर्व 1400 के लगभग हो गयी थी। वेदांग–ज्योतिष में ऋग्वेद ज्योतिष, यजुर्वेद ज्योतिष व अथर्वेद ज्योतिष तीन रचनाएं हुई। अथर्वेद ज्योतिष में फलित को प्रमुखता दी गयी। वेदांग–ज्योतिष रचना के पश्चात जैन ऋषि मुनियों के दर्शन से प्रभावित ज्योतिष की रचनाएं हुई जिनमें सूर्य प्रज्ञप्ति–चन्द्र प्रज्ञप्ति, जम्बूद्वीप–प्रज्ञप्ति और ज्योतिष करण्डक प्रमुख हैं।

महाभारत काल 5200 वर्ष पूर्व का माना जाता है। इससे पूर्व महर्षि पराशर ने वृहत्पाराशर होराशास्त्र की रचना की थी। इन्हें ज्योतिष ग्रन्थ का पितामह माना जाता है। इसके बाद मंत्रेश्वर (मार्कण्डेय भट्टाद्रि) ने फलित ज्योतिष में फलदीपिका की अमर रचना की। वैद्यनाथ दीक्षित द्वारा

1426 इस्वी में जातक परिजात की रचना की गई। श्री गणेश दैवज्ञ द्वारा ग्रहलाघव, गणित सिद्धान्त की रचना की गई। इसके बाद कल्याण वर्मा ने सारावली, ब्रहमगुप्त ने खण्डखाद्यक, मुंजाल ने लघुमानस, कालकाचार्य ने निमित्त शास्त्र एवं संहिता ग्रन्थ लिखे। भट्टों ने वराहमिहिर के ग्रन्थों की टीकाएं प्रस्तुत की। श्रीपति ने गणित, बीजगणित, सिद्धान्तशेखर, गणित ज्योतिष के ग्रन्थ तथा रत्नावली, श्रीपतिपद्धति, रत्नसार, रत्नमाला आदि फलित ज्योतिष के ग्रन्थ लिखे। आधुनिक काल 1601 ईस्वी से 1946 तक चला आ रहा है।

क्रमवार अध्ययन करें तो पितामह एवं वशिष्ठ सिद्धान्त में सूर्य और चन्द्र की गणित के अलावा अन्य ग्रहों के बारे में उल्लेख नहीं है। महर्षि वशिष्ठ से पुत्र परम्परा में क्रमशः उनके पुत्र पौत्र पराशर, वेदव्यास तथा शुकदेव ज्योतिष से अध्यात्म की ओर बढ़ते गए। इनमें महर्षि पराशर ज्योतिष के प्रमुख ग्रन्थकार रहे हैं।

निम्न तालिका से क्रमवार अध्ययन के रूप में इन ग्रन्थकारों एवं इनके द्वारा लिखे गए ग्रन्थ एवं पुस्तकें आपको ज्योतिष के आगामी अध्ययन के लिए विशेष रूप से सहायक सिद्ध होंगी जिनकी सूची इस प्रकार है :–

क.स.	नाम ग्रन्थकार / लेखक	ग्रन्थ / पुस्तक का नाम
1.	महर्षि पाराशर	वृहत्पाराशर होराशास्त्र
2.	आचार्य वाराहमिहिर	पंचसिद्धान्तिका (इसमें पांच सिद्धान्त पौलिश, रौमक, वशिष्ठ,सौर और पितामहग्रंथों का संकलन है)वृहज्जातक, वृहत्संहिता और लघुजातक, विवाह पटल, योग यात्रा, समास संहिता आदि।
3.	कल्याण वर्मा	सारावली
4.	भट्टोत्पल	प्रश्न ज्ञान
5.	चन्द्रसेन	केवलज्ञान होरा
6.	श्रीपति	गणित, बीजगणित, सिद्धान्त शेखर, गणित ज्योतिष के ग्रन्थ तथा रत्नावली, श्रीपति पद्धति, रत्नसार, रत्नमाला
7.	श्रीधर	गणितसार, ज्योतिर्विज्ञान विधि, जातक शास्त्र, जातक तिलक

क.स.	नाम ग्रन्थकार / लेखक	ग्रन्थ / पुस्तक का नाम
8.	केशव	ग्रह कौतुक,वर्षग्रह सिद्धि, तिथि सिद्धि, जातक पद्धति, ताजिक पद्धति, मुहूर्त तत्व
9.	देवज्ञ ढुंढिराज	जातकाभरण
10.	पं. नीलकंठ	ताजिक नीलकंठी
11.	रामदेवज्ञ	मुहूर्त चिंतामणि
12.	रंगनाथ	सूर्य सिद्धान्त
13.	कालीदास	उत्तरकालामृत
14.	श्री महादेव पाठक	जातक तत्व
15.	गोपेश कुमार ओझा	जातक पारिजात, त्रिफला ज्योतिष, सुगम ज्योतिष प्रवेशिका, फलदीपिका, जातकादेश मार्ग (चन्द्रिका)
16.	सीताराम झा	जातकाभरण
17.	डा. नेमिचन्द्र शास्त्री	भारतीय ज्योतिष

`इस प्रकार हमने देखा कि ज्योतिष का उद्गम स्थल भारत ही है जो हमारे ऋषियों की देन है और उनके पश्चात् अनेक विद्वानों ने ज्योतिष ग्रन्थों की टीका लिखी है।

2.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप समझ गये होगें कि ज्योतिष शास्त्र कितना पुराना है तथा इसमें जातक के जीवन से लेकर राष्ट्रीय– अन्तरराष्ट्रीय घटनाओं तक का समावेश किया गया है। इसके साथ ही ज्योतिषी में क्या–क्या योग्यताएं होनी चाहिए। किस तरह का जीवनयापन करना चाहिए। इन सभी का आपके द्वारा अध्ययन किया गया है।

2.6 शब्दावली

1. वर्तुलाकार : गोल आकृति
2. कतिपय : कुछ

अभ्यास प्रश्न

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–

1. ज्योतिष के प्रमुख प्रणेता..... हैं।
2. ज्योतिष का इतिहास ..... वर्ष से भी ज्यादा पुराना है।
3. ..... में हम ग्रहों की गति, दूरी, चाल आदि का अध्ययन करते हैं।
4. ..... क्षेत्र में हमारे ऋषियों की अहम भूमिका रही है।
5. ज्योतिष शास्त्र के प्रमुख प्रवर्त्तक कौन–कौन से हैं?

2.7 अभ्यास प्रश्न के उत्तर

1. ज्योतिष के प्रमुख 18 प्रणेता हैं।
2. ज्योतिष का इतिहास 5000 वर्ष से भी ज्यादा पुराना है।
3. गणित में हम ग्रहों की गति दूरी चाल आदि का अध्ययन करते हैं।
4. ज्योतिष क्षेत्र में हमारे ऋषियों की अहम भूमिका रही है।

4. सूर्य, पितामह, व्यास, वशिष्ठ, अत्रि, पराशर, कश्यप, नारद, गर्ग, मरीचि, मनु, अंगिरा, लोमश, पौलिश, च्यवन, भृगु एवं शौनक।

2.8 सन्दर्भग्रन्थ–सूची

भारतीय ज्योतिष	–	शंकर बालकृष्ण दीक्षित
भारतीय ज्योतिष	–	नेमिचन्द्र शास्त्री
सुगम ज्योतिष प्रवेशिका	–	गोपेश कुमार ओझा
भारतीय ज्योतिष	–	शिवनाथ, झारखण्ड

भारतीय ज्योतिष – लेखक – नेमि चन्द्र शास्त्री से साभार

2.9 सहायक व उपयोगी पाठ्य सामग्री

वृहत्पाराशर होराशास्त्र – श्री पद्मनाभ शर्मा

भातीय ज्योतिष – नेमि चन्द्र शास्त्री

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. ज्योतिष शास्त्र के इतिहास का संक्षिप्त वर्णन कीजिए ?

प्रश्न 2. ज्योतिष शास्त्र के विषयों का वर्णन कीजिए?

इकाई – 3 राशि एवं उनके गुण–धर्म

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 राशि एवं उनके गुण–धर्म
3.3.1 राशियों का वर्गीकरण
3.3.2 राशियों के तत्व :
3.3.3 राशियों की विशेषताएं
3.3.4 राशियों के गुण धर्म
3.3.4.1 मेषराशि
3.3.4.2 वृषराशि
3.3.4.3 मिथुनराशि
3.3.4.4 कर्कराशि
3.3.4.5 सिंहराशि
3.3.4.6 कन्याराशि
3.3.4.7 तुलाराशि
3.3.4.8 वृश्चिकराशि
3.3.4.9 धनुराशि
3.3.4.10 मकरराशि
3.3.4.11 कुंभराशि
3.3.4.1 मीनराशि
3.4 सारांश
3.5 शब्दावली
3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.7 सन्दर्भग्रन्थ–सूची
3.8 सहायक / उपयोगी ग्रन्थ
3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

पूर्व इकाई में आपने ज्योतिष शास्त्र के प्रवर्तक आचार्यों के ज्योतिष इतिहास का परिचय प्राप्त किया। प्रस्तुत इकाई में राशियों का विस्तार से वर्णन करेंगे।

राशियां तो कई प्रकार की ज्योतिष में प्रचलित हैं जैसे सूर्य राशि, चंद्र राशि, लग्न राशि और ग्रहों की राशियां। परंतु जहां तक राशि की बात है वहां जन्मराशि सबसे अधिक महत्वपूर्ण मानी जाती है जिसका आधार चंद्र राशि होती है। परंतु चंद्र राशि के आधार पर जातक का स्वभाव, भौतिक संरचना, व्यक्तित्व आदि के बारे में जानने की जो परंपरा चली आ रही है, उस पर विचार करना अत्यंत आवश्यक है। क्योंकि ज्योतिष में यह नियम है कि जातक की शारीरिक संरचना, व्यक्तित्व व स्वभाव आदि के बारे में विचार जन्मकुण्डली के प्रथम भाव से किया जाना चाहिए जिसको लग्न राशि कहा जाता है। परंतु यदि चंद्रमा अन्य भाव में जाकर स्थित हो जायेगा तो ज्योतिषी उसी भाव की राशि के आधार पर ही जातक के व्यक्तित्व व स्वभाव आदि के बारे में कहना प्रारंभ कर देते हैं जो कि अपने आप में विरोधाभास हो जाता है।

प्रस्तुत इकाई में इन्हीं द्वादश राशियों के गुण–धर्म समझाने की चेष्टा की गयी है। आगामी अध्याय में ग्रहों के गुण–धर्म व विशेषताओं के सम्बन्ध में विचार किया जायेगा। ग्रह और राशियों की विशेषताओं के आधार पर ज्योतिषीय फलादेश किये जाते हैं। उपरोक्त आधार पर यह निर्णय लिया जाता है कि जातक के व्यक्तित्व व स्वभाव आदि के बारे में लग्न राशि के आधार पर ही फलकथन किया जाना चाहिए। क्योंकि चंद्रमा मन का कारक है और स्वभाव का संबंध जातक के मन से संबंधित होता है। अतः जातक का स्वभाव जातक की चंद्र राशि पर किया जाना चाहिए। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि लग्न राशि से 75 प्रतिशत और चंद्र राशि पर आधारित 25 प्रतिशत फलकथन किया जाना चाहिए। निष्कर्षतः राशि का आधार कोई भी क्यों न माना जाये लेकिन राशि का गुण स्वभाव एक ही रहता है इसमें कोई मतांतर नहीं होता है।

3.2 उद्देश्य

किसी भी राशि में जन्मे जातक के गुणधर्म, स्वभाव, शारीरिक संरचना, शुभ–अशुभ वर्ष, संभावित रोग आदि की जानकारी देना प्रस्तुत इकाई का प्रमुख उद्देश्य है। जातकों के गुण–स्वभाव शारीरिक संरचना आदि के आधार पर जातक के लिए जन्म कुण्डली के जन्म समय निर्धारण का ज्ञान भी नहीं हो सकेगा। भविष्य में इसके आधार पर जातक के सही जन्म समय, लग्न की सत्यता का अनुमान भी लगा सकेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

1. द्वादश राशियों के नाम लिख सकेंगे।

2. प्रत्येक राशि के गुण धर्मों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

3. प्रत्येक राशि के जातक के लिए शुभ और अशुभ वर्षों का ज्ञान हो सकेगा।

4. द्वादश राशि के जातकों के व्यक्तित्व, स्वभाव और शारीरिक संरचना को पहचान सकेंगे।

5. द्वादश राशि के जातकों के लिए कार्य व्यवसाय की शुभता का निर्णय कर सकेंगे।

6. द्वादश राशि के जातकों में विशेष गुण का ज्ञान हो सकेगा।

8. जातक के जन्म समय के शोधन का ज्ञान हो सकेगा।

3.3 राशि एवं उनके गुण–धर्म

शीर्षानने तथा बाहुहृत्क्रोडकटिबस्तयः[?]।
गुह्योरुयुगले जानुयुग्मे वै जंघके तथा।।
चरणौ द्वौ तथा मेषात् ज्ञेयाः शीर्षादयः क्रमात्।।

कालपुरुष के अंग में मेषादि द्वादश राशियां क्रम से स्थित हैं; यथा– 1. मस्तक, 2. मुख, 3. बाहु, 4. हृदय, 5. उदर, 6. कटि, 7. बस्तिं, 8. लिंग, 9. जंघा, 10. घुटना, 11. घुटने से अधोभाग और 12. पैर हैं।

चरस्थिरद्विस्वभावाः क्रूराक्रूरौ नरस्त्रियौ।
पित्तानिलत्रिधात्वैक्यश्लेष्मिकाश्च क्रियादयः।।

मेषादि द्वादश राशियां क्रम से चर–स्थिर–द्विस्वभाव, चर–स्थिर–द्विस्वभाव, चर–स्थिर–द्विस्वभाव एवं चर–स्थिर–द्विस्वभाव हैं। इनमें से मेषादि 6 विषम राशियां क्रूरसंज्ञक हैं तथा वृषादि 6 राशियां अक्रूरसंज्ञक हैं। जो क्रूरसंज्ञक राशियां हैं, वे पुरुषसंज्ञक हैं और जो अक्रूरसंज्ञक राशियां, हैं, वे स्त्रीसंज्ञक हैं। मेषादि द्वादश राशियां क्रम से पित्त, वात, त्रिधातु, कफ, पित्त, वात, त्रिधातु, कफ प्रकृतिक हैं।

रक्तवर्णो बृहद्गात्रश्चतुष्पाद्रात्रिविक्रमी।
पूर्ववासी नृपज्ञातिः शैलचारी रजोगुणी।
पृष्ठोदयी पावकी च मेषराशिः कुजाधिपः।।

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	कन्या	तु	वृश्चि.	ध.	म.	कुं.	मी.
चरादि	चर	स्थि.	द्वि.	चर.	स्थि.	द्वि.	चर	स्थि.	द्वि.	चर	स्थि.	द्वि.
क्रूराक्रूर	क्रू.	अक्रू.	क्रू.	अक्रू.	क्रू.	अक्रू.	क्रू.	अक्रू.	क्रू.	अक्रू.	क्रू.	अक्रू.
पु. स्त्री	पु.	स्त्री	पु.	स्त्री	पु.	स्त्री	पु.	स्त्री	पु.	स्त्री	पु.	स्त्री

प्रकृति	पित्त	वात	त्रिधातु	कफ	पित्त	वात	त्रिधातु	कफ	पित्त	वात	त्रिधातु	कफ

रक्त वर्ण, लंबा शरीर, चार पैर वाला, रात्रि में बली, पूर्व में रहने वाला, क्षत्रिय जाति, पर्वत पर विचरण करने वाला, रजोगुणी, पृष्ठोदयी एवं अग्नितत्त्वात्मक–इस प्रकार का मेष राशि का स्वरूप है। इसका अधिपति भौम होता है।

श्वेतः शुक्राधिपो दीर्घश्चतुष्पाच्छर्वरी बली।
याम्येद् ग्राम्यो वणिग्भूमिरजः पृष्ठोदयी वृषः।।

वृष राशि सफेद वर्ण, दीर्घ शरीर, चतुष्पाद, रात्रिबली, दक्षिण दिशा का निवासी, ग्राम में घूमने वाला, वैश्य जाति, भूमि तत्त्व, रजोगुणी और पृष्ठोदयी होता है। इसका स्वामी शुक्र है।

शीर्षोदयी नृमिथुनं सगदं च सवीणकम्।
प्रत्यग्वायुर्द्विपाद्रात्रिबली ग्रामव्रजोऽनिली।।
समगात्रो हरिद्वर्णो मिथुनाख्यो बुधाधिपः।

मिथुन राशि शीर्षोदयी, गदा और वीणायुक्त पुरुष–स्त्री की जोड़ी, पश्चिम दिशा का निवासी, वायु तत्त्व, द्विपदी, रात्रिबली, ग्राम में रहने वाला, वायुप्रकृतिक, समान शरीर वाला और हरित वर्ण का होता है। इसका अधिपति बुध होता है।

पाटलो वनचारी च ब्राह्मणो निशि वीर्यवान्।
बहुपादचरः स्थौल्यतनुः सत्त्वगुणी जली।
पृष्ठोदयी कर्कराशिर्मृगांकाऽधिपतिः स्मृतः।।

कर्क राशि का स्वरूप पाटल (श्वेतरक्तस्तु पाटलः) वर्ण, वनचारी, विप्रवर्ण, रात्रि में बली, अधिक पैर वाला, स्थूल शरीर, सत्त्वगुणी, जल तत्त्व वाला एवं पृष्ठोदयी कहा गया है। इसका अधिपति चंद्र होता है।

सिंह सूर्याधिपः सत्त्वी चतुष्पात् क्षत्रियो वनी।
शीर्षोदयी बृहद्गात्रः पाण्डुः पूर्वेड् द्युवीर्यवान्।।

सिंह राशि का स्वरूप सत्त्वगुणी, चतुष्पाद, क्षत्रिय, वनचारी, शीर्षोदयी, दीर्घ शरीर, पीला वर्ण, पूर्व दिशा का अधिपति और दिवाबली होना है। इसका स्वामी सूर्य होता है।

पार्वतीयाथ कन्याख्या राशिर्दिनबलान्विता।
शीर्षोदया च मध्यांग द्विपद्याम्यचरा च सा।।
सा सस्यदहना वैश्या चित्रवर्णा प्रभंजिनी।
कुमारी तमसा युक्ता बालभावा बुधाधिपा।।

पर्वत पर घूमने वाला, दिवाबली, शीर्षोदयी, मध्यम शरीर वाला, द्विपदी, दक्षिण में रहने वाला, अन्न सहित, अग्नि हाथ में रखने वाला, वैश्य जाति, अनेक वर्ण, वायु तत्त्व, कुमारी एवं तमोगुणी– ऐसा कन्या राशि का स्वरूप कहा गया है। इसका अधिपति बुध होता है।

शीर्षोदयी द्युवीर्याद्ध्योऽतुलः कृष्णो रजोगुणी।
पश्चिमो भूचरो घाती शूद्रो मध्यतनुर्द्विपात्।।
शुक्राधिपोऽथ–

शीर्षोदयी, दिनबली, कृष्ण वर्ण, रजोगुणी, पश्चिम में रहने वाला, भूमि में विचरण करने वाला, हिंसक, शूद्र जाति एवं मध्यम शरीर वाला–ऐसा तुला राशि का स्वरूप कहा गया है; इसका स्वामी शुक्र होता है।

–स्वल्पांगो बहुपाद् ब्राह्मणो बली।
सौम्यस्थो दिनवीर्याद्ध्यः पिशंगो जलभूवहः।।
रोमस्वाद्यतितीक्ष्णाग्रो वृश्चिकश्च कुजाधिपः।

स्वल्प शरीर वाला, बहुपाद, विप्र जाति, छिद्र में रहने वाला, उत्तर दिशा में विचरण करने वाला, दिवाबली, पिशंग वर्ण, जल तत्त्व, भूमि तत्त्व, अधिक रोमयुक्त, तीक्ष्ण अग्रिम भाग वाला एवं स्वामी मंगल–ऐसा वृश्चिक राशि का स्वरूप कहा गया है।

पृष्ठोदयी त्वथ धनुर्गुस्वामी च सात्त्विकः।
पिंगलो निशिवीर्याद्ध्यः पावकः क्षत्रियो द्विपात्।
आदावन्ते चतुष्पादः समगात्रो धनुर्धरः।।
पूर्वस्थो वसुधाचारी तेजस्वी ब्रह्मणा कृतः।

पृष्ठोदयी, सत्त्वगुणी, पिंगल वर्ण, रात्रि में बली, अग्नि तत्त्व, क्षत्रिय, पूर्वार्द्ध (15 अंश में द्विपाद, उत्तरार्द्ध (16–30 अंश) में चतुष्पाद, सम शरीर, धनुष धारण करने वाला, पूर्व दिशा में रहने वाला, भूमिचारी, तेजस्वी और गुरु स्वामी वाला धनु राशि होता है।

मन्दाधिपस्तमी भौमी याम्येट् च निशि वीर्यवान्।
पृष्ठोदयी बृहद्गात्रः कर्बुरो वनभूचरः।
आदौ चतुष्पदोऽन्ते तु विपदो जलगो मतः।।

तमोगुणी, भूतत्त्व, दक्षिण दिशा में रहने वाला, रात्रिबली, पृष्ठोदयी, दीर्घ शरीर, चित्र वर्ण, वन एवं भूचारी, पूर्वार्द्ध में चतुष्पाद, उत्तरार्द्ध में पैर से हीन, जलचर और स्वामी शनि–ऐसा मकर का स्वरूप कहा गया है।

कुम्भकुम्भी नरो बभ्रुवर्णो मध्यतनुर्द्विपात्।
द्युवीर्यो जलमध्यस्थो वातशीर्षोदयी तमः।।
शूद्रः पश्चिमदेशस्य स्वामी दैवाकरिः स्मृतः।

घड़ा धारण किया हुआ पुरुष, भूरा वर्ण, मध्यम शरीर वाला, पैर से हीन, दिवाबली, जलचारी, वायु तत्त्व, शीर्षोदयी, तमोगुणी, शूद्र जाति, पश्चिम दिशाधिप और स्वामी शनि–ऐसा कुम्भ राशि का स्वरूप कहा गया है।

मीनौ पुच्छास्यसंलग्नौ मीनराशिर्दिवाबली।
जली तत्त्वगुणाढ्यश्च स्वस्थो जलचरो द्विजः।
अपदो मध्यदेही च सौम्यस्थो ह्युभयोदयी।।
सुराचार्याधिपश्चेति राशीनां गदिता गुणाः।
त्रिंशद्भागात्मकानां च स्थूलसूक्ष्मफलाय च।।

मुख–पुच्छ मिले हुए दो मछली, दिन में बली, जल तत्त्व, सत्त्वगुणयुक्त, स्वस्थ, जलचारी, विप्र जाति, पैर से हीन, मध्यम शरीर, उत्तर दिशाधिप, उभयोदयी एवं स्वामी गुरु–ऐसा मीन राशि का स्वरूप कहा गया है। इस प्रकार 30 अंशात्मक राशियों का स्वरूप स्थूल तथा सूक्ष्म फलादेश हेतु कहा गया है।

3.3.1 राशियों का वर्गीकरण

राशियां जातक की मनोवृत्ति की सूचक हैं। वे चर, स्थिर और द्विस्वभाव होती हैं।

चर राशियां	मेष, कर्क, तुला और मकर
स्थिर	वृष, सिंह, वृश्चिक, कुंभ
द्विस्वभाव	मिथुन, कन्या, धनु, मीन

चर राशि : जातक बहिर्मुखी, सामाजिक, सक्रिय होते हैं तथा परिवर्तन पसंद करते हैं।

स्थिर राशि : जातक अंतर्मुखी होते हैं तथा परिवर्तन में रुचि नहीं रखते हैं। वे धीमे मगर आगे बढ़ने वाले होते हैं। चिंतनशील और अपने विचारों में मग्न रहते हैं। सामाजिक संपर्कों में रुचि कम होती है। वास्तविकता से मुंह मोड़ने की कोशिश करते हैं। जिद्दी स्वभाव रहता है।

द्विस्वभाव राशि : जातक में उपर्युक्त गुणों का मिश्रण होता है।

3.3.2 राशियों के तत्व :

अग्नि	मेष, सिंह, धनु

पृथ्वी	वृष, कन्या, मकर
वायु	मिथुन, तुला, कुंभ
जल	कर्क, वृश्चिक, मीन

अग्नि : अग्नि राशियों के जातक दृढ़, आग्रही, साहसी और उत्साही होते हैं। वे सक्रिय, महत्वाकांक्षी, स्वतंत्र चिंतक होते हैं।

- पृथ्वी राशियों के जातक धीमे मगर सतत कार्यशील, स्वयं की रक्षा करने वाले, हठी, चयनशील और अपव्ययी होते हैं। वे स्थिर होते हैं और धन, वस्तु, अधिकार और ओहदे से प्रेम करते हैं। वे सावधान, व्यावहारिक, पूर्वानुमान करने वाले, व्यवस्थित और अल्पव्ययी होते हैं।

- वायु राशियों के जातक प्रसन्नचित्त, संगीत और कला प्रेमी होते हैं। वे उदार, मिलनसार, साहसी, सहानुभूतिपूर्ण, परिष्कृत व्यवहार वाले, दयालु, विचारक और कल्पनाशील होते हैं।

- जल राशियों के व्यक्ति भीरु, अक्रिय होते हैं। कल्पनाशक्ति उत्तम, मगर शरीर से दुर्बल होते हैं। संवेदनशील, भावुक और तुनकमिजाज होते हैं।

3.3.3 राशियों की विशेषताएं

1. **सकारात्मक / विषम राशियां** : मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु और कुंभ। इन्हें पुरुष राशियां भी कहते हैं।

इन राशियों के जातक सक्रिय, हठधर्मी, उत्साही, साहसी, आक्रामक, दृढ़प्रतिज्ञ होते हैं।

2. **नकारात्मक / सम राशियां** : वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन। इन्हें स्त्री राशि भी कहते हैं। जातक निष्क्रिय, सुरक्षात्मक और पराधीन प्रकृति के होते हैं।

3. **उत्तरी राशियां** : मेष से कन्या तक
4. **दक्षिणी राशियां** : तुला से मीन तक
5. **विषुव राशियां** : मेष और तुला
6. **उष्ण कटिबंधी राशियां** : कर्क और मकर
7. **फलप्रद राशियां** : कर्क, वृश्चिक और मीन।

ये राशियां सफलता और आकांक्षाओं की पूर्णता की द्योतक हैं।

8. **अर्धफलप्रद राशियां** : वृष, धनु, तुला और मकर।
9. **निष्फल राशियां** : मेष, मिथुन, सिंह और कन्या।

इन जातकों के प्रयास सफल नहीं होते हैं।

10. **मूक राशियां** : कर्क, वृश्चिक और मीन।

जातकों में परिहार (व्रत–उपवास) की शक्ति होती है।

11. **हिंसक राशियां** : मेष और वृश्चिक। जातक प्रत्येक कार्य में अतीव साहस का परिचय देते हैं और भय से अनभिज्ञ रहते हैं।

12. **नर राशियां** : मिथुन, कन्या, तुला, कुंभ और धनु का पूर्वार्द्ध।

ये राशियां लग्न में होने पर बहुत शक्तिशाली होती हैं।

13. **चतुष्पाद राशियां** : मेष, वृष, सिंह, धनु का उत्तरार्द्ध, मकर का पूर्वार्द्ध।

ये राशियां दशम भाव में होने पर सशक्त होती हैं।

14. **कीट राशियां** : वृश्चिक कीट राशि है।

यह सप्तम भाव में बली होती है।

15. **जल राशियां** : कर्क, मकर का उत्तरार्ध और मीन।

ये राशियां चतुर्थ भाव में बली होती हैं।

16. **शुष्क राशियां** : वृष, मिथुन, कन्या और कुंभ।

17. **शीर्षोदय राशियां** : मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक और कुंभ।

18. **पृष्ठोदय राशियां** : मेष, वृष, कर्क, धनु, मकर।

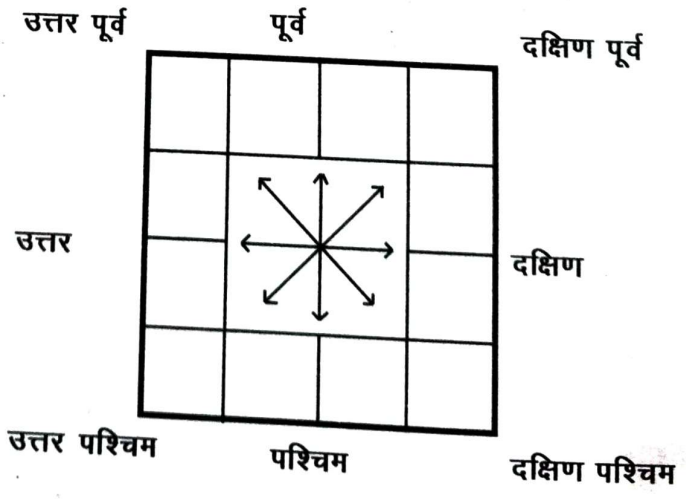
19. **उभयोदय राशि** : मीन।

20. **रात्रि में बली राशियां** (सूर्यास्त से सूर्योदय तक) : मेष, वृष, मिथुन, कर्क, धनु और मकर

21. **दिन में बली राशियां** : सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक और कुंभ (सूर्योदय से सूर्यास्त तक)

22. **धुंधले प्रकाश में बली राशि** : मीन

23. **दिशा**



मेष और वृष	पूर्व
मिथुन	दक्षिण–पूर्व
कर्क और सिंह	दक्षिण
कन्या	दक्षिण–पश्चिम
तुला और वृश्चिक	पश्चिम
धनु	उत्तर–पश्चिम
मकर और कुंभ	उत्तर
मीन	उत्तर–पूर्व

मतान्तर से

मेष, सिंह और धनु	पूर्व
वृष, कन्या और मकर	दक्षिण
मिथुन, तुला और कुंभ	पश्चिम
कर्क, वृश्चिक और मीन	उत्तर

24. **ह्रस्व राशियां :** मकर से मिथुन तक (दोनों इसमें सम्मिलित हैं)।

बसन्त सम्पात के दोनों ओर 90°। इसे उत्तरायण कहते हैं।

25. **दीर्घ राशियां :** कर्क से धनु तक (दोनों इसमें सम्मिलित हैं)।

शरद् संपात के दोनों ओर 90°। इसे दक्षिणायन कहते हैं।

26. **लघु आकार राशियां :** मेष, वृष और कुंभ का आकार लघु होता है।

27. **मध्यम आकार राशियां :** मिथुन, कर्क, धनु, मकर और मीन का आकार मध्यम होता है।

28. **दीर्घ आकार राशियां :** सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक का आकार दीर्घ होता है।

29. **धातु राशियां :** मेष, कर्क, तुला और मकर।

30. **मूल राशियां :** वृष, सिंह, वृश्चिक और कुंभ।

31. **जीव राशियां :** मिथुन, कन्या, धनु और मीन।

32. **ब्राह्मण राशियां :** कर्क, वृश्चिक, मीन।

33. **क्षत्रिय राशियां :** मेष, सिंह, धनु।

34. **वैश्य राशियां :** वृष, कन्या, मकर।

35. **शूद्र राशियां :** मिथुन, तुला, कुंभ।

36. **अधोमुख राशियां :** जिस राशि में सूर्य स्थित हो तथा सूर्य राशि से 4, 7, 10 वीं राशियां। ये राशियां नीचे दृष्टि डालती हैं।

37. **ऊर्ध्व मुख राशियां :** सूर्य राशि से 3, 6, 9, 12 वीं राशियां। ये राशियां ऊपर की ओर दृष्टिपात करती हैं।

38. **तिर्यकमुख राशियां :** अगल–बगल या सामने दृष्टि डालने वाली राशियां। सूर्य राशि से 2, 5, 8, 11 राशियां।

39. **राशियों के रंग**

मेष	लाल
वृष	श्वेत
मिथुन	गहरा हरा
कर्क	लाली लिए श्वेत
सिंह	धूसर
कन्या	रंग बिरंगा
तुला	काला
वृश्चिक	सुनहरा पीला
धनु	लाली लिए सुनहरा
मकर	मिश्रित रंग
कुंभ	भूरा
मीन	सफेद

3.3.4 राशियों के गुण–धर्म

महर्षियों ने क्रांति–वृत्त को 12 राशियों में विभक्त किया है :

1. मेष, 2. वृषभ, 3. मिथुन, 4. कर्क, 5. सिंह, 6. कन्या, 7. तुला, 8. वृश्चिक, 9. धनु, 10. मकर, 11. कुंभ और 12. मीन।

3.3.4.1 मेषराशि

भौतिक लक्षण : मध्यम कद, पतला मांसल शरीर, लंबा चेहरा और गर्दन, चौड़ा मस्तक, सिर या कनपटी पर निशान, सुदृढ़ दंतपंक्ति, गोल आंखें, घुंघराले बाल।

अन्य गुण:

सौभाग्यशाली वर्ष : 16, 20, 28, 34, 41, 48, 51

कष्टप्रद वर्ष : 1, 3, 6, 8, 15, 21, 36, 40, 45, 56, 63

मेष का स्वामी मंगल है। जातक सक्रिय, आवेगशील, उतावला, आग्रही, तर्कवितर्क वाला, अधीनता स्वीकार न करने वाला, समझौता न करने वाला, दुःसाहसी, कठोर और झगड़ालू होता है।

महत्वाकांक्षी, अग्रणी और उत्साही, अड़ियल मगर स्पष्टवादी, व्यावहारिक, सौंदर्य, कला और सुरुचि प्रेमी। साहसिक, वाद–विवाद में रुचि, झगड़ालू। धार्मिक कट्टरपंथी, धैर्यहीन। जल से डर, भ्रमण प्रिय, प्रारंभिक जीवन में संघर्ष रहते हैं। योजना बनाने में निपुण, कार्यगति तीव्र, प्रशासन में सक्षम। दीर्घकालीन कार्यों में अरुचि। संकट का सामना करने की प्रतिभा परंतु दीर्घकालीन कष्टों से लड़ने में अक्षम। दूरदृष्टि, आदर्शवादी, उचित–अनुचित के मापदंडों का स्वयं निर्माता। लघु स्तर के कार्यों में अरुचि, विशालकाय, उद्यमों से लगाव। उत्तम स्वभाव और आकर्षण, विपरीत लिंग के व्यक्ति प्रभावित होते हैं। जीवन का स्वयं निर्माता, कामी, प्रेम प्रसंगों में असफल। गृह और परिवार से लगाव, सदा परिवारजनों के मध्य रहन। पसंद करते हैं। घर को साफ–सुथरा रखते हैं। सरकार में उच्च पदों पर आसीन।

संभावित रोग : सिरदर्द, जलना, तीव्र ज्वर, पक्षाघात, मुंहासे, आधा–सीसी का दर्द, चेचक और स्नायविक व्याधियां। अधिक विश्राम और निद्रा, स्वादिष्ट भोजन और सब्जियों में रुचि।

रत्नों के रखने का स्थान, धातु, अग्नि, खनिज पदार्थ, लाल रंग, पाप राशि, मिलनसार, तुनक मिजाज, झूठ बोलना, पृष्ठोदय, पुरुष राशि, क्रूर राशि, अग्नि तत्व, रजोगुण, दिनबली होती है।

3.3.4.2 वृषराशि

भौतिक लक्षण : मध्यम कद, प्रायः मोटा शरीर, चौड़ा मस्तक, मोटी गर्दन, सुंदर आकर्षक चेहरा, बड़े कान और आंखें, चौड़े कंधे, गठीला शरीर, गेहुआं रंग, सफेद दांत, भारी जांघें, घुंघराले बाल, कमर या बगल में मस्सा।

अन्य गुण: धैर्य, सहनशक्ति, न क्षमाशील–न भूलने वाला, वफ़ादार, हठधर्मी। प्रेमपूर्ण व्यवहार, सौंदर्य उपासक, संगीत और कला में रुचि। आरामपसंद, प्रेम, सुविधाओं और उत्तम भोजन में रुचि। उत्तम शारीरिक और मानसिक शक्ति। अच्छे मित्र, स्पष्टवादी। निष्कर्ष निकालने से पूर्व भले–

बुरे का अध्ययन। धन संचयी, खर्च में सावधान। आत्मनिर्भर, स्वयं की विशिष्ट कार्य प्रणाली और सिद्धांत। कूटनीतिक व्यवहार के कारण इनको समझना कठिन होता है।

बारीकी के काम में महारत, स्मरण शक्ति उत्तम, प्रत्येक कार्य प्रसन्नतापूर्वक संपन्न करते हैं। उच्चकोटि के पदों पर कार्यरत, सुख–सुविधाओं की सामग्री जैसे इलेक्ट्रॉनिक सामान, सौंदर्य प्रसाधन, बाग–बगीचे, इत्र, आभूषण आदि के व्यापार में रुचि। उत्तम अभिनेता, संगीतज्ञ, फिल्म निर्माता आदि होते हैं। कन्या विद्यालय या महिला क्लब में कार्यरत। भाग्यवान्, आभूषणों और बागवानी पर धन व्यय करते हैं। विपरीत लिंग के व्यक्ति आकर्षित होते हैं, कन्या संतान अधिक होती है। विवाहित जीवन में तलाक बहुत कम होते हैं।

संभावित रोग : टॉन्सिल, डिप्थीरिया, पायरिया, जुकाम, कब्ज। जीवन में एक बार मतिभ्रम अवश्य होता है। 8 से 16 और 36 से 47 वर्ष की आयु में पारिवारिक समस्याओं के कारण मानसिक कष्ट होता है। उन्हें कठिनाइयों में हिम्मत नहीं हारनी चाहिए।

कठिन वर्ष : 1, 2, 8, 33, 44 और 61

वन अथवा खेत, जहां पशु बाँधे जाते हैं, जलपूर्ण खेत जहां धान पैदा होता है। शुभ राशि, स्त्री राशि, क्षमाशील, चौड़ी जांघें, बड़ा चेहरा, तुनक मिज़ाज, किसी बात पर क्रोधित हो जाए, व्यापारी वर्ग, पृष्ठोदय तथा रात्रिबली होती है।

3.3.4.3 मिथुन राशि

भौतिक लक्षण: लंबा, सुडौल शरीर, पतले और लंबे हाथ, मध्यम रंग, ठोडी के पास गड्ढा, सक्रिय, स्पष्ट वचन, तीखी–सक्रिय काली आंखें, लंबी नाक, चेहरे पर मस्सा।

अन्य गुण : मिथुन का स्वामी बुध है। जातक सामंजस्यकारी, चिंतामुक्त, प्रसन्न, बेचैन, परिवर्तनशील, भ्रमणप्रिय, अनिर्णयी, कोई नियम नहीं, कोई निश्चित आदत नहीं, शीघ्र समझने वाला, उत्तम स्वास्थ्य और प्रजनन शक्ति वाला होता है। साहसी, मानव स्वभाव का ज्ञान, सहानुभूतिपूर्ण और दयालु। ज्ञान, मौलिकता और चुस्ती में उत्तम, वक्ता की नजाकत तुरंत भांप लेते हैं। धोखाधड़ी के कारण हानि उठाते हैं। ईश्वर की सहायता उपलब्ध होती है। जरूरत के मुताबिक स्वयं को ढाल लेते हैं। परिवर्तनशील मिजाज, धैर्यहीन, बेचैन। मानसिक कार्यों में प्रवीण। संकल्पशक्ति कमजोर, निर्णयक्षमता तीव्र और एकाग्रता उत्तम होती है। यंत्र विज्ञान में प्रवीण होते हैं। प्रत्येक विषय की जानकारी रखते हैं। वार्तालाप में उत्कृष्ट रहते हैं, कवि, वक्ता, लेखक, संगीतज्ञ आदि होते हैं। दो व्यवसाय भी हो सकते हैं। दो कार्य साथ–साथ सफलतापूर्वक संपन्न कर सकते हैं। नौकरी में किस्मत साथ नहीं देती है। समाज में सम्मान होता है। महिलाओं द्वारा कार्य में बाधा या हानि होती है। विपरीत लिंग के व्यक्तियों के साथ सावधानी बरतनी चाहिए। धर्म और अध्यात्म

में रुचि होती है। महिलाएं इनकी कमजोरी होती हैं। उनका स्नेह पाने में प्रवीण होते हैं। सामाजिक उत्सवों आदि में भाग लेने के लिए तत्पर रहते हैं। विवाह में उत्साह और रुचि रहती है।

संभावित रोग : जुकाम, खांसी, यक्ष्मा, इंफ्लुएंजा। 33 से 46 वर्ष की आयु का समय इनके जीवन का स्वर्णकाल रहता है। 47 से 56 वर्ष में कष्ट रहते हैं। आयु के 6, 21 और 32 वें वर्ष अशुभ होते हैं।

जहां नर्तक, संगीतकार, कलाकार वेश्याएं रहती हैं, उनका प्रतिनिधित्व करती हैं। शयनकक्ष, मनोरंजन करना, ताश खेलना आदि स्थानों का स्वामी है। यह उभयोदय राशि, घुंघराले बाल, काले ओष्ठ, अन्य व्यक्तियों को समझने में चतुर, उन्नत नाक, संगीत में रुचि, गृह कार्य में रुचि, पतली, लम्बी उंगलियां, मध्य दिन में बली रहती है। पुरुष राशि है।

3.3.4.4 कर्क राशि

भौतिक लक्षण : छोटा कद, बौनापन, शरीर का ऊपरी भाग बड़ा, बचपन में दुबला शरीर, सुदृढ पुरुषत्व, गोल चेहरा, चेहरे पर भय की छाया, पीला–फीका रंग, भूरे बाल, लहराई सी चाल, चौड़े दांत, चौड़े कंधे, सीधे नहीं चलते हैं।

अन्य गुण : राशि स्वामी चंद्र है। जातक परिवर्तनशील, भीरु, कल्पनाशील, भावुक, संवेदनशील, बातूनी, कूटनीतिज्ञ, वफ़ादार, अतिस्वार्थी, महत्वपूर्ण तथा प्रशंसापसंद होता है। पर्याप्त सक्रिय होता है। कल्पनाशक्ति उत्तम, नकल उतारने में महारत, कई अभिनेता और नकलची इस राशि के होते हैं। नये विचारों को शीघ्र अपना लेते हैं, नये वातावरण में शीघ्र ढल जाते हैं। परिश्रम द्वारा धन संचय करते हैं। परिवर्तनशील प्रकृति के कार्य कर सकते हैं। व्यापार विशेषकर खान–पान के कार्य में निपुण होते हैं। अच्छे नेता, वक्ता, लेखक, सलाहकार होते हैं। क्रोधी और धैर्यहीन होते हैं। मूड बदलता रहता है। भरोसेमंद नहीं होते। बातूनी, आत्मनिर्भर, ईमानदार और न झुकने वाले होते हैं। न्यायप्रिय होते हैं। स्मरणशक्ति उत्तम रहती है। अच्छे मेहमाननवाज होते हैं। विद्वानों के प्रिय होते हैं। परिवार और संतान में आसक्त रहते हैं। आदर्श जीवन साथी साबित होते हैं। प्रायः महिलाओं के चक्कर में रहते हैं। बेचैन और भटकते रहते हैं।

संभावित रोग : फेफड़ों का संक्रमण, खांसी, यक्ष्मा, अजीर्ण, अफरा, स्नायविक दुर्बलता, पीलिया आदि। 21 से 36 वर्ष की आयु का समय सौभाग्यशाली होता है। 37 से 52 वर्ष में आर्थिक कठिनाइयां और शत्रुओं से कष्ट होते हैं। 52 से 69 वर्ष का समय अति उत्तम रहता है। अशुभ वर्ष 5,25,40,48 और 62।

जलीय खेत जहां धान पैदा होता है। कुएं, तालाब, नदी के किनारे जहां पौधों की अधिकता होती है, आदि स्थानों का स्वामी है। चलने में तेज, धन का शौकीन, शुभ राशि, मिलनसार प्रकृति, निःस्वार्थ, दूसरों के लिए बलिदान देने वाला जातक होता है। स्त्री राशि है।

3.3.4.5 सिंह राशि

भौतिक लक्षण : अच्छा कद, चौड़े कंधे, सुदृढ़ शरीर, प्रभावशाली व्यक्तित्व, अंडाकार चेहरा, शरीर का ऊपरी भाग सुडौल, पतली कमर, नीली या पीली आंखें।

अन्य गुण : राशि स्वामी सूर्य है, अतः जातक अति महत्वाकांक्षी, सज्जन, विशाल हृदयी, उदार, अनुरागी, स्पष्टवादी, दानशील, दुर्विचार न रखने वाला, गौरवशाली, श्रद्धालु, बातें कम, चाटुकारिता पसंद, खिलाड़ी, सट्टा खेलने का शौकीन होता है। कल्पनाशक्ति तीव्र होती है। कला और संगीतप्रेमी होता है।

प्रभुत्वशाली, मुखर, ताकतवर, प्रशासन में सक्षम। स्पष्टवादी, दयालु, क्षमाशील, महत्वाकांक्षी, संकल्पशील। पठन–पाठन के शौकीन होते हैं। आय सीमित होने पर भी शान से जीते हैं। लोगों में आत्मविश्वास, जागृत करने में निपुण होते हैं। चाटुकारी से अप्रसन्न होते हैं। मुख्य गुण है इनका शांत स्वभाव। पूर्व दिशा की यात्रा और पूर्व दिशा की ओर मुख करके कार्य करना लाभकारी रहता है। आत्मविश्वास और वस्तुओं का संग्रह इनकी सफलता के मूलाधार हैं। आत्मविश्वास और धैर्य के बल पर कठिन कार्य में भी सफल होते हैं। अवसर का लाभ उठाने से नहीं चूकते हैं। नाटक, कविता और कलाओं में रुचि होती है। राजा और परिवार के लिए वफादार रहते हैं। सट्टेबाजी में रुचि होती है। सरकारी नौकरी, पुलिस और सेना में सफल रहते हैं। किसी एक क्षेत्र में महारत हासिल करते हैं। व्यक्तित्व आकर्षक होता है, विपरीत लिंग के व्यक्ति आकर्षित होते हैं। काम–वासना का आधिक्य रहता है, मांसाहारी भोजन पसंद करते हैं। दूरस्थ स्थान, पर्वत आदि में घूमने के शौकीन होते हैं, ठंढे स्थानों से बचाव करते हैं ;

संभावित रोग : शोथ, लू लगना, मिर्गी, ज्वर, तानिका शोथ (मैंनिंगाइटिस), हृदय रोग आदि।

19 से 36 वर्ष की आयु का समय उत्तम होता है। 37 से 42 वर्ष कष्टप्रद होते हैं। 46 से 62 वर्ष के समय में स्वास्थ्य समस्याएं, परेशानियां, मुकदमे रहते हैं। 21, 28 और 35 वें वर्ष सौभाग्यशाली होते हैं। 66 वें वर्ष में दुर्घटना की संभावना होती है। 5,13,28 और 48वें वर्ष अशुभ होते हैं।

घने वनों के स्थान, पर्वत, टीले, किले, दिनबली, शीर्षोदय, निवास–गुफाएं, लम्बे गाल, चौड़ा चेहरा, क्रूर राशि, पुरुष राशि, दिनबली होती है।

3.3.4.6 कन्या राशि

भौतिक लक्षण : मध्यम कद, काले बाल और आंख, त्वरित चुस्त चाल, वास्तविक आयु से कम के प्रतीत होते हैं, विकसित छाती, सीधी नाक, पतली और तीखी आवाज, धनुषाकार घनी भौंहें, गर्दन या जांघों पर निशान।

अन्य गुण : राशि स्वामी बुध है। जातक आध्यात्मिक और विचारशील होता है। वह[?] विश्वसनीय, शांत, तनावरहित, अतिमहत्वाकांक्षा रहित होता है। वह परिवर्तनशील, व्यापारिक प्रतिभावान्, व्यवस्थित, व्यावहारिक, विवेकशील, सफाई पसंद होता है। बहुत बुद्धिमान्, विश्लेषक, विलक्षण बुद्धि वाला अन्य की भावनाओं और त्रुटियों का निंदक। भाषाओं के ज्ञानी होते हैं और किसी प्रक्रिया को समझने में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का उपयोग करते हैं। भावनाओं में बह जाते हैं। सोच समझ कर निर्णय लेते हैं। आत्मविश्वास की कमी, घबराये से रहते हैं। सुव्यवस्थित अपने विचार की बारीकियों को समझने में सक्षम होते हैं। स्वयं के स्वार्थ के प्रति जागरूक, मितव्ययी, कूटनीतिज्ञ, चतुर होते हैं। गृहसज्जा में निपुण, गणितज्ञ, पराविद्या में रुचि होती है।

उदर रोगों से सावधान रहना चाहिए। पेचिश, टायफायड, पथरी आदि संभाव्य रोग है। विवाह में विलंब, वैवाहिक जीवन सुखी, संतान कम होती है। आय उत्तम, कार्य–व्यवसाय में सफलता, संपत्ति के मालिक होते हैं। नाममात्र की व्याधि होने पर भी डॉक्टर के पास चले जाते हैं। पृथ्वी तत्व की राशि होने के कारण बागवानी और खेती में रुचि लेते हैं। धन संचय में रुचि होती है।

20 से 25 वर्ष की आयु में सफल और साहसी होते हैं। 25 से 35 वर्ष की आयु में स्वयं का मकान होता है। 36 से 48 वर्ष कष्टप्रद होते हैं। 49 से 62 वर्ष सौभाग्यशाली होते हैं, अचानक लाभ होता है। 23 और 24वें वर्ष बहुत उत्तम रहते हैं जबकि 4, 16, 22, 36 और 55वें वर्ष कष्टप्रद होते हैं। जीवन के अंतिम चरण में टी. बी. हो सकती है।

स्त्री राशि, मनोरंजन के स्थान, चरागाह, शुभ राशि, मध्यम कद शीर्षोदय राशि, पौधों वाली भूमि, कन्धों तथा भुजाओं का झुकना, सच्चाई, दयालुता, काले बाल, अच्छी मानसिक योग्यता, विधि अनुसार कार्य करने वाली तर्कशील होती है।

3.3.4.7 तुला राशि

भौतिक लक्षण : लंबा–पतला, सुदृढ़–सुडौल शरीर, सुंदर चेहरा, लावण्यमयी त्वचा, मध्यायु में गंजापन हो जाता है, भौंहें सुंदरता में वृद्धि करती हैं। नाक थोड़ी मुड़ी हुई (तोते जैसी) होती है, दांतों के मध्य में खाली जगह होती है, मस्तक उठा हुआ होता है।

अन्य गुण : राशि स्वामी शुक्र है। वह चाटुकारिता प्रिय, दयालु और वीर होता है। नकल उतारने, बात को समझने तथा तुलना करने में प्रवीण होता है। वह विवेकशील, निष्पक्ष, कल्पनाशील, उत्तम भावना वाला और विपरीत लिंग के व्यक्तियों को पसंद करने वाला होता है। नम्र, दयालु,

ईमानदार, न्याय करने में निपुण, निर्णय लेने से पूर्व हर पहलू का विश्लेषण करते हैं। दूसरों के धन के लालुप होते हैं मगर आश्रितों के सहायक रहते हैं। भावुक मगर लचीले स्वभाव के होते हैं। क्रोध शीघ्र शांत हो जाता है। स्वयं की बजाय अन्यों का अधिक ध्यान रखते हैं। वाद–विवाद में पटु होते हैं। सदा न्याय, शांति, प्रेम का समर्थन करते हैं। तुला वायु तत्व की राशि होने के कारण सदा सुंदरता और प्रकृति के प्रेमी होते हैं। पर्यटन के शौकीन होते हैं, इस कारण आवास में भी परिवर्तन कर लेते हैं। उच्चकोटि का जीवन यापन करते हैं। वेशभूषा, फर्नीचर, वाहन और अन्य सुविधाओं का ध्यान रखते हैं। व्यापार में कुशल होते हैं। अधिकांशतः लोकप्रिय होते हैं, व्यापार में अच्छे साझेदार साबित होते हैं। उत्तम सेल्समैन और रिसेप्शनिस्ट बनते हैं। कलाप्रेमी होते हैं और महिलाओं के मध्य विचरना पसंद करते हैं। सौभाग्यशाली महिलाएं इन्हें पसंद करती हैं।

संभावित रोग : गुर्दों के रोग, मेरुदंड में दर्द, संक्रामक रोग। महिलाओं में गर्भाशय के रोग होते हैं। 18 से 27 वर्ष की आयु में बहुत प्रगति करते हैं, 28 से 42 वर्ष के मध्य उत्तम धनार्जन होता है। 8, 15, 35, 62 और 64 अशुभ वर्ष हैं।

व्यापारी, दुकान, अनाज का स्थान, व्यापारी का घर, वर्ण काला, मध्यम कद, शीर्षोदय, व्यापारिक स्थान, जवानी में पतला शरीर परन्तु मोटापे की ओर झुकाव, गोल चेहरा, पुरुष राशि की होती है।

3.3.4.8 वृश्चिक राशि

भौतिक लक्षण : मध्यम कद, सुडौल शरीर और अंग, चौड़ा चेहरा, घुंघराले बाल, श्याम वर्ण, उन्नत ठोड़ी।

अन्य गुण : राशि स्वामी मंगल है। जातक दृढ़प्रतिज्ञ, आत्मनिर्भर तथा हर कठिनाई का स्वयं सामना करने योग्य होता है। वह मुंहफट या दो टूक बातें करने वाला हो सकता है। वह गुप्त विद्या और पराविद्या आदि में रुचि लेता है। परिश्रमी, बुद्धिमान्, आलोचक, आवेगी, संवेदनशील और बदला लेने वाला होता है।

स्पष्टवादी, निडर, रूखा व्यवहार। उत्तम मस्तिष्क, बुद्धिमान्, इच्छा शक्ति से युक्त। शब्दों का उत्तम चुनाव करते हैं। अन्य लोगों के मामलों में दखल नहीं देते हैं। अक्सर तानाशाह होते हैं, कभी थकान नहीं होती। जब तक आश्वस्त न हो जाएं कि उनका विषय का ज्ञान सर्वोच्च कोटि का है, मुह नहीं खोलते। वार्तालाप और लेखन में दक्ष होते हैं, अपने बुद्धिबल के सहारे रहते हैं। उच्चकोटि की प्रशासनिक क्षमता और आत्मविश्वास से युक्त होते हैं। गुप्त रूप से अपराध करने में सक्षम होते हैं। परिश्रम और साहस के बल पर धनार्जन करते हैं। स्वयं के बल पर सफल होते हैं। सामाजिक आंदोलनों में सक्रिय होते हैं। समाज में सलाहकार/नेता बनते हैं। सेना और पुलिस में सफलतापूर्वक कार्य करते हैं, इनके बहुत से शत्रु होते हैं। मौलिक अनुसंधान में चतुर होते हैं। अकेले रहकर बेहतर

कार्य करते हैं। मैदान के खेलों के शौकीन होते हैं। संगीत, कला, नृत्य आदि में प्रवीण होते हैं। पराविद्या में रुचि होती है। काम–वासना अधिक होती है, साथी को पशु की तरह प्रयोग करते हैं।

संभावित रोग : गुप्त रोग, प्रोस्टेंट ग्रंथि, पित्ताशय आदि के रोग, आयु के 29 से 45 वर्ष सौभाग्यशाली होते हैं। 62 से 71 वर्ष की आयु में गंभीर व्याधि होती है या ऑपरेशन होता है।

अशुभ वर्ष : 11, 28, 38, 52, 62

छेद या बिल वाला स्थान, विष, शीर्षोदय राशि, चौड़ी, फैली हुई आंखें तथा छाती। बाल्यावस्था में बीमार, क्रूर कामों में रुचि, साहसी, सहनशक्ति, प्रबन्धक, स्त्री राशि होती है।

3.3.4.9 धनु राशि

भौतिक लक्षण : सुंदर, सुविकसित आकृति, बादामी आंखें, भूरे बाल, घनी और ऊंची भौंहें, लंबा चेहरा, लंबी नाक, सुंदर आकृति, चाल सीधी नहीं होती है। मोटे होंठ, नाक, कान और दांत।

अन्य गुण : राशि स्वामी बृहस्पति है। जातक फुर्तीला, सक्रिय और अधीर होता है। वह धार्मिक और सत्यवादी होता है। दोहरी मानसिकता होना संभव है जिस कारण कोई फैसला करने में देर हो जाती है। साहसी, महत्वाकांक्षी, लालची और उत्साही होता है। स्वतंत्र, दयालु, ईमानदार, भरोसेमंद, ईश्वर भक्त। चौकन्ने, अतीन्द्रिय ज्ञानयुक्त, बात की तह तक शीघ्र पहुंच जाते हैं। आंखें कमजोर हो सकती हैं, कुबड़ापन संभव है। न्यायप्रिय, स्पष्टवादी, परंपरावादी, व्यावसायिक दृष्टिकोण। कभी–कभी बेचैन और चिंतित हो जाते हैं। दोहरी मानसिकता, हरफनमौला, प्रत्येक विषय सीखने को इच्छुक, प्रसन्नचित्त रहते हैं। कानून का पालन करने वाले, अदालतों से दूर रहते हैं। सादे जीवन से प्रसन्न, समय के अनुसार अपने को ढाल लेते हैं। कला और काव्य के प्रेमी, सर्जनात्मक प्रतिभा के धनी। पराविद्या और दर्शनशास्त्र में रुचि होती है।

खानपान और सेक्स में संयम बरतते हैं। कार्य में सफाई, सुव्यवस्था, क्रमबद्धता, अनुशासन और परिश्रम द्वारा सफलता प्राप्त करते हैं। आत्मविश्वास उत्तम होता है। हाथ के कार्य को अधूरा नहीं छोड़ते हैं। सरकार से सहयोग मिलता है, विरासत में जायदाद प्राप्त करते हैं।

संभावित रोग : साइटिका, गठिया का दर्द, कूल्हे की हड्डी टूटना, फेफड़ों की व्याधि आदि। अध्यापक, वक्ता, धर्मगुरु, न्यायाधीश, वकील आदि कार्यों में सफल होते हैं। 18 से 37 वर्ष की आयु के मध्य आर्थिक स्थिति उत्तम होती है। 38 से 47 वर्ष में घरेलू कष्ट रहता है। 61 से 69 वर्ष के दौरान संपन्नता रहती है।

अशुभ वर्ष : 2, 10, 18, 31, 38 एवं 42

वह स्थान जहां घोड़े, हाथी या रथ (मोटर कार) रखे जाते हैं। राजा का निवास, पाप राशि, पुरुष राशि, दिनबली, पृष्ठोदय, लम्बोतरा चेहरा और गर्दन, कान तथा नाक बड़े, अत्यधिक उदार, अच्छे दिल वाला, भौतिक संस्कृति को पसंद करने वाला, यात्रा–पसंद, ऊँची आवाज आदि लक्षण के होते हैं।

3.3.4.10 मकर राशि

भौतिक लक्षण : दुबला–पतला शरीर, उम्र के साथ स्वास्थ्य सुधरता है, बड़े दांत, बड़ा मुख, नाक विशिष्ट रहती है, बाल काले और मोटे होते हैं, चेहरा पतला और अंडाकार, कुबड़ी कमर, घुटनों पर मस्सा या निशान, मगरमच्छ के समान जबड़े, लघु मस्तक, दाढ़ी में बाल कम रहते हैं।

अन्य गुणधर्म : जातक प्रसिद्धि चाहता है और महत्वाकांक्षी होता है। वह अपने क्षेत्र और समाज में अच्छा नाम कमाता है और नेतृत्व करने की इच्छा रखता है। मितव्ययी, संतुलित, विचारशील, धैर्यवान् होता है। विघ्न डालने पर क्रोधित हो जाता है। सत्यप्रिय और ईमानदार होता है पर कुंडली दूषित होने पर बेईमान, स्वार्थी, लालची, अपराधी प्रवृत्ति का होता है। मितव्ययी, विचारशील, उत्तम विवेकशक्ति, सत्ताप्रेमी, आत्मनिर्भर, बुद्धिजीवी।

किसी भी कार्य में सफलता नहीं मिलने तक निराश ही रहते हैं। सांसारिक कार्यों में तथ्यों और आंकड़ों का प्रयोग करते हैं। ईमानदार और निष्कपट होते हैं। शक्ति के आगे अडिग रहते हैं परंतु सज्जनता और मित्रता के सामने नतमस्तक हो जाते हैं। संगठन क्षमता उत्तम होती है। कठिनाई में भी किसी से सहायता के लिए नहीं कहते हैं। वाक्शक्ति में बाधाएं रहती हैं। उच्च और सामाजिक पदों के लिए उपयुक्त होते हैं। तकनीकी और वित्तीय कार्यों में सफल होते हैं। नवागंतुकों के साथ मित्रता में शिथिल रहते हैं पर पुराने मित्रों से अच्छे संबंध होते हैं।

प्रेम प्रसंग में रुचि कम होती है पर परिवार और प्रियजनों की उत्तम देखभाल करते हैं। विपरीत लिंग के व्यक्तियों से बातचीत में शिथिल और अति सावधान रहते हैं। स्वयं से वरिष्ठ आयु के विपरीत लिंग व्यक्तियों से संबंध स्थापित करते हैं।

संभावित रोग : घुटनों में चोट, त्वचा रोग, खरोंच, हड्डी टूटना, गठिया, पित्ती आदि। बाल्यावस्था में अग्नि, हथियार या लोहे से चोट की आशंका रहती है। 33 से 49 वर्ष की आयु में जीवन आनंदप्रद रहता है। 50–51 वर्ष में स्वास्थ्य कष्ट होता है।

अशुभ वर्ष : 5, 13, 27, 36, 57, 62 और 67

जलीय स्थान, बहुत मात्रा में पानी वाले स्थान, नदी के किनारे, पृष्ठोदय राशि, स्त्री राशि, निचले अंगों में कमजोरी, बलवान् होते हैं।

3.3.4.11 कुंभ राशि

भौतिक लक्षण : मध्यम कद, हृष्ट–पुष्ट, चेहरा सुंदर और गोल, गाल भरे हुए, कनपटियां और जांघें विकसित होती हैं। गोरा रंग, भूरे बाल, असुंदर दांत, पिंडलियों में मस्सा, शरीर पर घने बाल हाथ और पैर मोटे, नसें विकसित होती हैं।

अन्य गुण धर्म : जातक पराविद्या में रुचि रखता है। विश्लेषण शक्ति उत्तम होती है और मानवीय प्रकृति का ज्ञाता होता है। अंतर्ज्ञानी, दयालु, बुद्धिमान्, सावधान, सतर्क, विचारशील, प्रगतिवादी, नूतन विचारधारा वाला, अनुसंधानी, स्थिर बुद्धि, हिम्मत न हारने वाला होता है। विज्ञान में रुचि होती है। मानवीय दृष्टिकोण और प्रगतिशील जीवन और उसकी समस्याओं के प्रति स्वस्थ दृष्टिकोण रखते हैं। संकोची होते हैं, निर्णय लेने से पूर्व पूर्ण नापतोल करते हैं या अन्य लोगों द्वारा कार्यारंभ करने तक प्रतीक्षा करते हैं। सदा सतर्कता, धैर्य, एकाग्रता, अध्ययनशीलता से युक्त रहते हैं। वार्तालाप रुचिकर होता है। स्पष्टवादी, सबके प्रिय होते हैं। दयालु, अध्ययन प्रेमी और सज्जन होते हैं। प्रकृतिप्रेमी होते हैं। मित्रता निभाते हैं, रुचि–अरुचि तीव्र होती है। एकांतप्रिय होते हैं। अतीन्द्रिय शक्ति से युक्त होते हैं, ध्यान–साधना में रुचि होती है। स्मरणशक्ति तीव्र, दृष्टिकोण वैज्ञानिक होता है।

गरीबों के सेवक होते हैं। नवीन तकनीक और मशीनरी, अनुसंधान, निवेश आदि द्वारा धनार्जन करते हैं। तकनीकी शिक्षा में रुचि होती है। परिवार से लगाव होता है। जीवनसाथी के चुनाव में आयु को अनदेखी कर बुद्धि और शिक्षा में समानता पर जोर देते हैं। गृह सुसज्जित होता है जिसमें आधुनिक ढंग से पुरातात्विक सामग्री एकत्रित रहती है। अपने प्रेम को अभिव्यक्त नहीं करते। अगर इनका प्रेमी वासनाप्रिय हो तो वह असंतुष्ट होता है क्योंकि कुंभ राशि के व्यक्ति शीतल होते हैं।

संभावित रोग : संक्रामक रोग, दंत व्याधि, टॉन्सिल आदि, 22 से 40 वर्ष की आयु में संपन्नता रहती है। 41 से 43 वर्ष में हथियार, लोहे या काष्ठ से चोट की आशंका रहती है। 44 से 67 वर्ष भाग्यशाली होते हैं। 68 वर्ष से बाद का समय अशुभ होता है।

अशुभ वर्ष : 33, 48, 64

वे स्थान जहां पानी सूख जाता है, जहां शराब बनती है, जहां पक्षी रहते हैं और जहां घड़े रखे जाते हैं। पाप राशि, दिनबली, शीर्षोदय, देखने में सुंदर, प्रतिभावान्, क्षमाशील स्वभाव का होता है। पुरुष राशि है।

3.3.4.12 मीन राशि

भौतिक लक्षण : नाटा और मोटा शरीर, हाथ–पांव काफी छोटे होते हैं। केश मुलायम, गोरा रंग, चेहरा कांतियुक्त होता है। सुंदर और आकर्षक, आंखें बड़ी--बड़ी, मजबूत गोलाकार कंधे, ठोडी में गड्ढा होता है।

अन्य गुण धर्म : जातक शांत, आरामपसंद होता है। संवेदनशील होता है और शीघ्र दूसरों के प्रभाव में आ सकता है। स्वप्निल, विचारक, ईमानदार, दो टूक बात करने वाला, दयालु, क्षमाशील, अति उदार, मधुर वचन वाला, सामाजिक कार्यों में रुचि रखने वाला होता है। आकृति अप्रभावशाली होती है, बेचैन रहते हैं, कल्पनाशील और रोमांटिक होते हैं। ईमानदार और मानवीय, कभी शांत तो कभी क्रोधी, अन्यों की राय से प्रभावित रहते हैं, आत्म विश्वास में कमी होती है। अत्यधिक सहानुभूतिपूर्ण, क्षमाशील, दयालु और भरोसेमंद होते हैं। स्वयं की योग्यता को पहचानते हैं जिसकी वजह से प्रगति में बाधा रहती है। परंपरावादी, अत्यधिक अंधविश्वासी, अकेले रहने वाले, ईश्वरभक्त, पक्के धार्मिक कर्मकांडी होते हैं। जंतुओं के कष्ट को भी नहीं देख सकते हैं और सहायता प्रदान करते हैं। महत्वाकांक्षाओं की कमी रहती है, भौतिक जगत् में प्रगति धीमी रहती है। दो व्यवसाय साथ–साथ हो सकते हैं, नये कार्य में भी शीघ्र दक्ष हो जाते हैं। अच्छे कर्मचारी साबित होते हैं। द्रव पदार्थों के व्यापार में सफल होते हैं आयात–निर्यात में लाभ होता है। उदर रोग, घुटनों और पैरों की चोट संभाव्य होती है।

घरेलू एवं व्यावसायिक जीवन आनंदमय होता है। जीवनसाथी की सुंदरता, ज्ञान और ललित कलाओं को प्राथमिकता देते हैं। प्रायः दो विवाह हो सकते हैं, जीवनसाथी का प्रभाव प्रबल रहता है।

27 से 43 वर्ष की आयु में संपन्नता रहती है। 44 से 60 वर्ष कष्टप्रद रहते हैं। 61 से 69 वर्ष भाग्यशाली रहते हैं।

अशुभ वर्ष : 8, 13, 36 और 48

धार्मिक, पवित्र स्थान, पवित्र नदियों का स्थान, मंदिर, तीर्थ स्थान, समुद्र आदि, कद छोटा, उभयोदय, सुगठित शरीर, पत्नी को चाहने वाला, शिक्षित, विद्वान्, कम बोलने वाला होता ह। स्त्री राशि है।

3.4 सारांश

भचक्र में द्वादश राशियां होती हैं। प्रत्येक राशि का अपना राशि चिह्न है, जैसे मेष राशि के लिए मेमना (बकरी का बच्चा) है तथा वृष राशि के लिए बैल है। इसी प्रकार मीन राशि का चिह्न मछली होता है। प्रत्येक राशि के जातक के गुण–स्वभाव को जानने के लिए आवश्यक है कि विद्यार्थीगण इस बात को हमेशा याद रखें कि प्रत्येक राशि के लिए अपने जान पहचान के लोगों में से प्रत्येक

राशि के एक व्यक्ति को अमुक राशि के लिए अपना मानक मान लें। इससे व्यक्ति के गुण–स्वभाव को उक्त राशि से संबद्ध करके राशि के गुण स्वभाव जानना बहुत आसान हो जाता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक राशि–चिह्न के अनुरूप ही जातक के गुण स्वभाव होते हैं। जैसे कन्या राशि का जातक होगा तो उसमें एक कन्या के काफी गुण–स्वभाव जैसे अपनी आयु से कम दिखना, तीखी और पतली आवाज होना, आदि गुण देखे जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त राशि की जाति, राशि के स्वामी ग्रह के गुण–धर्म, राशि का स्वभाव जैसे चर, स्थिर, द्विस्वभाव से भी जातक के गुण–धर्मों को समझा जा सकता है। राशि का तत्व क्या है, राशि की दिशा क्या है?राशि का लिंग क्या है?क्रूर राशि और सौम्य राशि, द्विपाद, चतुष्पाद, बहुपाद राशि के आधार पर जातक के ज्ञान, गुण–स्वभाव व दान देने की प्रवृत्ति आदि के बारे में जाना जा सकता है। राशि–स्वामी के ग्रह के आधार पर उसके भाग्यशाली रत्न, धातु एवं रंगों का अनुमान लगाया जा सकता है। जैसे कन्या राशि का स्वामी बुध है। अतः जातक को पन्ना, सोने की धातु व हरा रंग भाग्यशाली रंग होगा। इसी प्रकार कर्क राशि के लिए मोती रत्न, चांदी

की धातु व सफेद रंग अधिक पसंद होगा, ऐसा कहा जा सकता है। अतः राशि के गुण धर्मों को समझने के लिए उस राशि से संबंधित अन्य तथ्यों की जानकारी के आधार पर बड़ी आसानी से समझा जा सकता है।

3.5 शब्दावली

क्रांति वृत्त	राशियों का चक्र
चतुष्पाद	चार पैर वाले
शीर्षोदय	सिर से उदित होने वाली
पृष्ठोदय	पैर से उदित होने वाली
उभयोदय	सिर और पैर दोनों संयुक्त रूप से
कटिबंध	क्षेत्र

अभ्यास प्रश्न

प्रश्न 1. राशियों को तत्वों के आधार पर किस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है?

प्रश्न 2. स्वभाव के आधार पर राशियों का वर्गीकरण करें।

प्रश्न 3. दिशाओं के आधार पर चार मुख्य दिशाओं पूर्व, पश्चिम, उत्तर व दक्षिण से संबंधित राशियों के नाम बताएं।

प्रश्न 4. स्त्री राशियां कौन–कौन सी हैं ?

प्रश्न 5. जाति के आधार पर राशियों को कितने भागों में बांटा जा सकता है ?

प्रश्न 6. ब्राह्मण जाति की राशियों के नाम बताएं।

प्रश्न 7. क्षत्रिय जाति की राशियों के नाम बताएं।

प्रश्न 8. मिथुन राशि की जाति का नाम बताएं।

प्रश्न 9. मंगल की दोनों राशियों के नाम बताएं।

प्रश्न 10. द्वादश राशियों से संबंधित रंगों के नाम बताएं।

प्रश्न 11. चर राशियों के गुण–धर्म विस्तार से लिखें।

प्रश्न 12. ब्राह्मण जाति की राशियों के गुण–धर्म एवं उनके स्वभाव के बारे में विस्तार से चर्चा करें।

प्रश्न 13. शुक्र और शनि की राशियों के गुण–धर्म व स्वभाव के बारे में बताएं।

प्रश्न 14. दक्षिण दिशा से संबंधित राशियों के गुण–धर्म और स्वभाव बताएं।

प्रश्न 15. द्वादश राशियों का, उनके गुणधर्म के आधार पर, वर्गीकरण करें।

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्तर 1. प्रस्तुत इकाई का उपखंड 7.2 देखें।

उत्तर 2. प्रस्तुत इकाई का उपखंड 7.1 देखें।

उत्तर 3. पूर्व– मेष, सिंह, धनु, पश्चिम– मिथुन, तुला, कुंभ, उत्तर– कर्क, वृश्चिक, मीन, दक्षिण – वृष, कन्या और मकर।

उत्तर 4. सभी सम संख्या वाली राशियां स्त्री राशि कहलाती हैं।

उत्तर 5. ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र

उत्तर 6. कर्क, वृश्चिक और मीन।

उत्तर 7. मेष, सिंह और धनु राशि

उत्तर 8. शूद्र जाति

उत्तर 9. मेष और वृश्चिक

उत्तर 10. प्रस्तुत इकाई का उपखंड 7.3.3 देखें।

उत्तर 11. प्रस्तुत इकाई में मेष, कर्क, तुला, मकर राशि के गुण देखें।

उत्तर 12. कर्क, वृश्चिक और मीन राशि के गुण–धर्म देखें।

उत्तर 13. तुला, वृष, कुंभ और मकर राशि के गुण–धर्म देखें।

उत्तर 14. वृष, कन्या और मकर राशि के गुण–धर्म व स्वभाव देखें।

उत्तर 15 प्रस्तुत इकाई का उपखंड 7.3 देखें।

3.7 संदर्भ ग्रंथ / सूची

1. भारतीय ज्योतिष – नेमिचंद्र शास्त्री – भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

2. बृहत् पाराशर होरा शास्त्र

3. सरल ज्योतिष – अखिल भारतीय ज्योतिष संस्था संघ

3.8 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. मानसागरी

व्याख्याकार – पं. श्री रूपनारायण झा

प्रकाशक – श्री ठाकुर प्रसाद गुप्ता भंडार, वाराणसी

2. Learn Astrology, Ranjan Publication, Delhi

3. ज्योतिष सीखिए, रंजन पब्लिकेशंस, दिल्ली

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न :

प्र. 1. चर व स्थिर राशियों के गुण–धर्म व पांच जातकों की कुण्डली में राशि लग्न के आधार पर स्वभाव की तुलना करें।

ब्लॉक - 2

ग्रह परिचय एवं उनकी अवस्थाएं

इकाई – 4 ग्रहों के गुण–धर्म

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 ग्रहों के गुण–धर्म

4.3.1 ग्रहों की विशेषताएँ

4.3.2 ग्रहों की अन्य विशेषताएँ

4.3.3 ग्रहों के कारकत्व

4.3.3.1 सूर्य

4.3.3.2 चन्द्रमा

4.3.3.3 मंगल

4.3.3.4 बुध

4.3.3.5 बृहस्पति

4.3.3.6 शुक्र

4.3.3.7 शनि

4.3.3.8 राहु

4.3.3.9 केतु

4.4 सारांश

4.5 शब्दावली

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

4.8 सहायक / उपयोगी ग्रन्थ

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

अध्ययन क्रम में पिछले अध्यायों में आपने ज्योतिष शास्त्र तथा राशियों के गुण–धर्म व विशेषताओं का अध्ययन किया। ज्योतिष शास्त्र की आरम्भिक पृष्ठभूमि में राशि, ग्रह, नक्षत्रों व भावों का परिचय आवश्यक होता है।

प्रस्तुत इकाई में ग्रहों के सामान्य परिचय के साथ–साथ उनके पदार्थों, स्थान, अंग और रोग आदि का वर्णन किया गया है। ज्योतिष का मुख्य उद्देश्य है कि जातक को उसके जीवन का अच्छा मार्गदर्शन दिया जा सके जिसके द्वारा वह ईश्वर की इस अमूल्य निधि का सदुपयोग अधिक से अधिक कर सके। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि ज्योतिष एक ऐसा शास्त्र है, जो व्यक्ति के जीवन में मार्गदर्शन द्वारा उसके जीवन को अधिक से अधिक सुखी, नियोजित एवं खुशहाल जीवन प्रदान करता है। अतः ज्योतिष में फलादेश की आवश्यकता पड़ती है। फलादेश करने के लिए जब तक ज्योतिषी को ग्रह, भाव, राशि व नक्षत्रों के स्वभाव, गुण व फलों का समुचित ज्ञान नहीं होगा। तब तक कोई भी ज्योतिषी फलादेश करने में सक्षम नहीं हो सकता है।

प्रत्येक ग्रह का अपना गुण स्वभाव व फल होता है। प्रत्येक ग्रह के प्रति अपनी छवि बना कर जैसे कि अमुक ग्रह शुभ होता है, अमुक ग्रह अशुभ है या यह सात्विक ग्रह है या क्रूर ग्रह है। उदाहरण के लिये सूर्य को ग्रहों का राजा कहा जाता है। राजा स्वभाव से क्रूर प्रतीत होता है परन्तु वास्तव में उसका ह्रदय जनता के प्रति उदार ही रहता है। लेकिन वह अपनी उदारता को उजागर नहीं कर सकता, क्योंकि यदि वह अधिक उदारता दिखायेगा तो वह प्रजा पर शासन नहीं कर सकेगा। अतः सूर्य क्रूर होता है पापी नहीं। इसी प्रकार सभी ग्रहों के गुण स्वभाव का अपने–अपने तर्कों के आधार पर अध्ययन किया जाता है।

ग्रहों की विशेषताओं को जानने के बाद आगामी अध्याय में आप ग्रहों के मैत्री–सम्बन्ध व उच्चादि राशियों का अध्ययन करेंगे।

4.2 उद्देश्य

ग्रहों के बारे में उनके गुण स्वभाव, शुभता व अशुभता, पुरुष एवं स्त्री ग्रहों का ज्ञान महत्वपूर्ण हैं।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप –

- ग्रहों पर आधारित फलादेश का ज्ञान प्राप्त कर पायेंगे।
- ग्रहों के गुण धर्म का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- शुभ ग्रहों व अशुभ ग्रहों का अन्तर कर सकेंगे।

- पुरुष ग्रहों व स्त्री ग्रहों का विभेद कर पायेंगे।
- ग्रहों से संबंधित पदार्थों का ज्ञान हो सकेगा।
- ग्रहों से संबंधित बीमारी, स्थान, अंग, धातु एवं रत्नों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

4.3 ग्रहों के गुण धर्म

गच्छन्तो भानि गृह्णन्ति[?] सततं ये तु ते ग्रहाः।
भचक्रस्य नगाश्व्यंशा अश्विन्यादिसमाह्वयाः।।
तद्द्वादशविभागास्तु तुल्या मेषादिसंज्ञकाः।
प्रसिद्धा राशयः सन्ति ग्रहास्त्वर्कादिसंज्ञकाः।।
राशीनामुदयो लग्नं तद्वशादेव जन्मिनाम्।
ग्रहयोगवियोगाभ्यां फलं चिन्त्यं शुभाशुभम्।।

आकाश में पूर्वाभिमुख चलते हुए जो ज्योतिर्बिम्ब देखे जाते हैं, वे प्रत्येक नक्षत्रों का भोग करते हैं और वे ही ग्रह कहे जाते हैं। भचक्र के तुल्य 27 विभाग अश्विनी आदि 27 नक्षत्रों के स्थान हैं और उसी के तुल्य 12 भाग में मेषादि 12 राशियां प्रसिद्ध हैं, इनके अतिरिक्त सूर्यादि ग्रह भी प्रसिद्ध ही हैं। राशियों का उदय लग्न के नाम से जाना जाता है और उसी लग्न के माध्यम से ग्रहों के संयोग–वियोग द्वारा जातक का शुभाशुभ फल अवगत किया जाता है।

संज्ञा नक्षत्रवृन्दानां ज्ञेयाः सामान्यशास्त्रतः।
एतच्छास्त्रानुसारेण राशिखेटफलं ब्रुवे।।

अश्विन्यादि नक्षत्रों की चर, स्थिर, द्विस्वभाव, क्रूर, अक्रूर, धातु, वर्ण आदि संज्ञाओं को सामान्य शास्त्रों से जानना चाहिए। इस शास्त्र में राशि और ग्रहों के शुभाशुभ फल को बताया जा रहा है।

अथ खेटा रविश्चन्द्रो मंगलश्च बुधस्तथा।
गुरुः शुक्रः शनी राहुः केतुश्चैते यथाक्रमम्।।

सूर्य, चंद्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु– ये क्रम से नव ग्रह कहे गये हैं।

तत्रार्क-शनि-भूपुत्राः क्षीणेन्दु-राहु-केतवः।
क्रूराः शेषग्रहाः सौम्याः क्रूरः क्रूरयुतो बुधः।।

पूर्वोक्त नव ग्रहों में से सूर्य, शनि, भौम, क्षीण चंद्र, राहु और केतु– ये क्रूर ग्रह हैं तथा शेष– पूर्णचंद्र, बुध, गुरु, शुक्र, शुभ ग्रह हैं। बुध क्रूर ग्रह से युक्त होने पर स्वयं भी क्रूर ग्रह हो जाता है।

सर्वात्मा च दिवानाथो मनः कुमुदबान्धवः।
सत्त्वं कुजो बुधैः प्रोक्तो बुधो वाणीप्रदायकः।।
देवेज्यो ज्ञानसुखदो भृगुर्वीर्यप्रदायकः।
ऋषिभिः प्राक्तनैः प्रोक्तश्छायासूनुश्च दुःखदः।।
रविचन्द्रौ तु राजानौ नेता ज्ञेयो धरात्मजः।
बुधो राजकुमारश्च सचिवौ गुरुभार्गवौ।।
प्रेष्यको रविपुत्रश्च सेना स्वर्भानुपुच्छकौ।
एवं क्रमेण वै विप्र! सूर्यादीन् प्रविचिन्तयेत्।।

समस्त चराचर का आत्मा सूर्य है। चंद्र मन, मंगल बल, बुध वाणी, गुरु ज्ञान एवं सुख, शुक्र वीर्य तथा शनि दुःख का कारण हैं। सूर्य–चंद्रमा दोनों राजा, मंगल नेता, बुध युवराज, गुरु एवं शुक्र मंत्री, शनि नौकर तथा राहु और केतु सेना हैं।

रक्तश्यामो दिवाधीशो गौरगात्रो निशाकरः।
नात्युच्चांगः कुजो रक्तो दूर्वाश्यामो बुधस्तथा।
गौरगात्रो गुरुर्ज्ञेयः शुक्रः स्यावरस्तथैव च।
कृष्णदेहो रवेः पुत्रो ज्ञायते द्विजसत्तम!।

हे द्विजोत्तम! सूर्य रक्त–श्याम, चंद्र गौर, मंगल मध्यम शरीर एवं रक्त वर्ण, बुध दूर्वा–श्याम, गुरु गौर वर्ण, शुक्र चित्र वर्ण तथा शनि कृष्ण वर्ण के होते हैं।

वह्न्यम्बुशिखिजा[?] विष्णुर्विडौजःशचिका द्विज!।
सूर्यादीनां खगानां च देवा ज्ञेयाः क्रमेण च।।
क्लीबौ द्वौ सौम्यसौरी च युवतीन्दुभृगू द्विज!।
नराः शेषाश्च विज्ञेया भानुर्भौमो गुरुस्तथा।।
अग्निभूमिनभस्तोयवायवः क्रमतो द्विज!।
भौमादीनां ग्रहाणां च तत्त्वानीति यथाक्रमम्।।

हे द्विज! अग्नि, जल, स्वामी कार्तिकेय, विष्णु, इंद्र, इंद्राणी और ब्रह्मा–ये सभी सूर्यादि सात ग्रहों के क्रमशः देवता हैं। बुध एवं शनि नपुंसक, चंद्र एवं शुक्र स्त्री ग्रह तथा शेष–सूर्य, भौम और गुरु पुरुष ग्रह हैं। अग्नि, भूमि, आकाश, जल और वायु– ये क्रम से भौम, बुध, गुरु, शुक्र और शनि के तत्त्व हैं।

गुरुशुक्रौ विप्रवर्णौ कुजार्कौ क्षत्रियौ द्विज!।
शशिसौम्यौ वैश्यवर्णौ शनिः शूद्रो द्विजोत्तम।।

जीवसूर्येन्दवः सत्त्वं बुधशुक्रौ रजस्तथा।
सूर्यपुत्रधरापुत्रौ तमःप्रकृतिकौ द्विज!।।

गुरु–शुक्र विप्र, भौम–शनि क्षत्रिय, चंद्र–बुध वैश्य तथा शनि शूद्र वर्ण वाले हैं। गुरु, रवि और चंद्र सत्त्व प्रकृति वाले, बुध और शुक्र रजोगुण वाले तथा भौम और शनि तमः प्रकृति वाले होते हैं।

मधुपिंगलदृक्सूर्यश्चतुरस्रः शुचिर्द्विज!।
पित्तप्रकृतिको धीमान् पुमानल्पकचौ द्विज!।।
बहुवातकफः प्राज्ञश्चन्द्रो वृत्ततनुर्द्विज!।
शुभदृङ्मधुवाक्यश्च चंचलो मदनातुरः।।
क्रूरो रक्तेक्षणो भौमश्चपलोदारमूर्तिकः।
पित्तप्रकृतिकः क्रोधी कृशमध्यतनुर्द्विज!।।
वपुः श्रेष्ठः श्लिष्टवाक् च ह्यतिहास्यरुचिर्बुधः।
पित्तवान् कफवान् विप्र! मारुतप्रकृतिस्तथा।।
बृहद्गात्रो गुरुश्चैव पिंगलो मूर्द्धजेक्षणैः।
कफप्रकृतिको धीमान् सर्वशास्त्रविशारदः।।
सुखी कान्तवपुः श्रेष्ठः सुनेत्रश्च भृगोः सुतः।
काव्यकर्ता कफाधिक्योऽनिलात्मा वक्रमूर्धजः।।
कृशदीर्घतनुः शौरिः पिंगदृश्यनिलात्मकः।
स्थूलदन्तोऽलसः पंगु खररोमकचो द्विज!।।

धूम्राकारो नीलतनुर्वनस्थोऽपि भयंकरः।
वातप्रकृतिको धीमान् स्वर्भानुस्तत्समः शिखी।।

मधु के समान पिंगल नेत्र, लंबाई और चौड़ाई तुल्य शरीर वाला, पवित्र, पित्तप्रकृति, बुद्धिमान्, पुरुष और स्वल्प केश वाला सूर्य है। वात–कफ प्रकृति, पण्डित, गोलाकार शरीर, सुंदर दृष्टि एवं वाक्य, चपल, अधिक कामना शक्ति वाला चंद्रमा है। क्रूर स्वभाव वाला, रक्त नेत्र, चपल, उदारमना, पित्तप्रकृति, क्रोधी, दुर्बल और मध्यम शरीर वाला मंगल है। सुंदर शरीर वाला, एक शब्द में अनेकार्थ शब्दों का प्रयोग करने वाला, हास्यप्रिय एवं तीनों (कफ–वात–पित्त) प्रकृति वाला बुध है। विशाल शरीर वाला, पिंगल वर्ण–केश एवं नेत्र वाला, कफ प्रकृति, सभी शास्त्रों का ज्ञाता और बुद्धिमान् गुरु है। सुखी, सुंदर शरीर वाला, श्रेष्ठ सुंदर नेत्र, कवि, कफ–वात प्रकृति एवं टेढ़े–मेढ़े केश वाला शुक्र है। दुबला–पतला, दीर्घ शरीर वाला, पिंगल नेत्र, वातप्रकृति, बड़े दांत वाला, आलसी, पंगु और कठोर रोम वाला शनि है। धूम के समान नील शरीर वाला, कानन (वन)

में विचरण करने वाला, भयंकर वातप्रकृति वाला और बुद्धिमान् राहु है तथा राहु के सदृश ही केतु का भी स्वरूप होता है।

अस्थि रक्तस्तथा मज्जा त्वग् वसा वीर्यमेव च।
स्नायुरेषामधीशाश्च क्रमात् सूर्यादयो द्विज!।।
देवालयजलं वह्निक्रीडादीनां तथैव च।
कोशशय्योत्कराणां तु नाथाः सूर्यादयः क्रमात्।।
अयनक्षणवार्तुमासपक्षसमा द्विज!।
सूर्यादीनां क्रमाज्ज्ञेया निर्विशंक द्विजोत्तम!।।
कटु-क्षार-तिक्त-मिश्र-मधुराम्ल-कषायकाः।
क्रमेण सर्वे विज्ञेयाः सूर्यादीनां रसा इति।।

अस्थि, रक्त, मज्जा, त्वचा, वसा, शुक्र और स्नायु– इनके स्वामी क्रम से सूर्यादि सात ग्रह हैं। देवस्थान, जलाशय, अग्निस्थान, क्रीड़ास्थान, कोश, शयनस्थान और कतवार रखने का स्थान– इन स्थानों के अधिपति भी क्रम से सूर्यादि सात ग्रह ही हैं। अयन, मुहूर्त, अहोरात्र, ऋतु, मास, पक्ष, वर्ष–इनके स्वामी भी क्रमशः सूर्यादि सात ग्रह हैं। कटु, लवण, तिक्त, मिश्रित, मधुर, अम्ल और कषाय– इन रसों के स्वामी भी सूर्यादि सात ग्रह ही होते हैं।

बुधेज्यौ बलिनौ पूर्वे रविभौमौ च दक्षिणे।
पश्चिमे सूर्यपुत्रश्च सितचन्द्रौ तथोत्तरे।।
निशायां बलिनश्चंद्र-कुज-सौरा भवन्ति हि।
सर्वदा ज्ञो बली ज्ञेयो दिने शेषा द्विजोत्तम।।
कृष्णे च बलिः क्रूराः सौम्या वीर्ययुताः सिते।
सौम्यायने सौम्यखेटो बली याम्यायनेऽपरः।।
वर्षमासाहहोराणां पतयो बलिनस्तथा।
शमबुगुशुचंराद्या वृद्धितो वीर्यवत्तराः।।

बुध और बृहस्पति पूर्व दिशा में बली होते हैं; रवि–भौम दक्षिण में एवं शनि पश्चिम और शुक्र तथा चंद्रमा उत्तर दिशा में बली होते हैं। चंद्र, भौम एवं शनि राशि में; बुध सदैव तथा रवि, गुरु और शुक्र दिन में बली होते हैं। अशुभ ग्रह कृष्ण पक्ष में तथा शुभ ग्रह शुक्ल पक्ष में बली होते हैं। उत्तरायण में शुभ ग्रह और दक्षिणायन में पापग्रह बली होते हैं। वर्षाधिप, मासाधिप, दिनपति और होरापति अपने–अपने समय में उत्तरोत्तर बली होते हैं। साथ ही शनि, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, चंद्र और सूर्य भी उत्तरोत्तर बली होते हैं।

सूर्यो जनयति स्थूलान् दुर्भगान् सूर्यपुत्रकः।
क्षीरोपेतांस्तथा चंद्रः कटुकाढ्यान् धरासुतः।।
पुष्पवृक्षं भृगोः पुत्रो गुरुज्ञो सफलाफलौ।
नीरसान् सूर्यपुत्रश्च एवं ज्ञेयाः खगा द्विज।।

स्थूल वृक्षों को सूर्य, कुत्सित वृक्षों को शनि, दूध वाले वृक्षों को चंद्रमा, कटु वृक्षों को भौम, सफल वृक्षों को गुरु, फलरहित वृक्षों को बुध, पुष्प वृक्षों को शुक्र और नीरस वृक्षों को शनि उत्पन्न करते हैं।

राहुश्चाण्डालजातिश्च केतुर्जात्यन्तरस्तथा।
शिखिस्वर्भानुमन्दानां वल्मीकं स्थानमुच्यते।।
चित्रकन्था फणीन्द्रस्य केतोश्छिद्रयुतो द्विज!।
सीसं राहोर्नीलमणिः केतोर्ज्ञेयो द्विजोत्तम!।।
गुरोः पीताम्बरं विप्र! भृगोः क्षौमं तथैव च।
रक्तक्षौमं भास्करस्य इन्दोः क्षौमं सितं द्विज!।।
बुधस्य कृष्णक्षौमं तु रक्तवस्त्रं कुजस्य च।
वस्त्रं चित्रं शनेर्विप्र! पत्त्वस्त्रं तथैव च।।

राहु अन्त्यज जाति का और केतु मिश्रित जातियों का स्वामी होता है। राहु, केतु और शनि का स्थान दीमक का स्थान है। राहु का कपड़ा अनेक रंग की कन्था और केतु का छिद्रयुक्त है। राहु का धातु सीसा और केतु का नीलमणि है। गुरु का पीत वस्त्र, शुक्र का पट्टवस्त्र, रवि का रक्त वस्त्र, चंद्रमा का उज्ज्वल वस्त्र, बुध का कृष्ण वस्त्र, भौम का रक्त वस्त्र तथा शनि के चित्र एवं पट्टवस्त्र होते हैं।

भृगोर्ऋतुवसन्तश्च कुजभान्वोश्च ग्रीष्मकः।
चंद्रस्य वर्षा विज्ञेयाः शरच्चैव तथा विदः।।
हेमन्तोऽपि गुरोर्ज्ञेयः शनेस्तु शिशिरो द्विज!।
अष्टौ मासाश्च स्वर्भानोः केतोर्मासत्रयं द्विज!।।
राहवारपंगुचंद्राश्च[?] विज्ञेया धातुखेचराः।
मूलग्रहौ सूर्यशुक्रौ अपरा जीवसंज्ञकाः।।
ग्रहेषु मन्दो वृद्धोऽस्ति आयुर्वृद्धिप्रदायकः।
नैसर्गिक बहुसमान् ददाति द्विजसत्तम!।।

शुक्र का वसंत ऋतु, भौम और सूर्य का ग्रीष्म, चंद्र का वर्षा, बुध का शरद, गुरु का हेमन्त और शनि का शिशिर ऋतु होता है। राहु का समय आठ मास और केतु का तीन मास जानना

चाहिए। राहु, भौम, शनि, चंद्रमा– ये धातु के स्वामी, सूर्य और शुक्र मूलाधिप और शेष (बुध, गुरु, केतु) जीव के अधिपति होते हैं। सभी ग्रहों में शनि वृद्ध, परंतु नैसर्गिक दशा में ये बहुत वर्षों वाली आयु को देने वाले होते हैं।

4.3.1 ग्रहों की विशेषताएँ

1.	**पुरुष ग्रह**	: सूर्य, मंगल, बृहस्पति
	स्त्री ग्रह	: चंद्र, शुक्र, राहु
	नपुंसक ग्रह	: बुध, शनि, केतु

शनि पुरुष–नपुंसक और बुध स्त्री–नपुंसक माने जाते हैं।

2.	**शुष्क ग्रह**	: सूर्य, मंगल, शनि
	जलीय ग्रह	: शुक्र, चंद्र
3.	**स्थिर ग्रह**	: बृहस्पति, शनि, राहु
	चर ग्रह	: सूर्य, चंद्र, मंगल
	द्विस्वभाव ग्रह	: बुध, शुक्र
4.	**धातु ग्रह**	: चंद्र, मंगल, शनि, राहु (भूगर्भीय)
	मूल ग्रह	: सूर्य, शुक्र
	जीव ग्रह	: बुध, बृहस्पति

5. **रंग और स्वाद :**

ग्रह	**रंग**	**स्वाद**	**धातु**
सूर्य	गहरा लाल	तीखा	तांबा
चंद्र	सफेद	नमकीन	चांदी
मंगल	हल्का लाल	कड़वा	तांबा / सोना
बुध	हरा	मिश्रित	पीतल
बृहस्पति	पीला / सफेद	मीठा	सोना / चांदी

ग्रह	रंग	स्वाद	धातु
शुक्र	हल्का काला	खट्टा	मोती
शनि	काला	कड़वा (मिश्रित)	लोहा

6. **ग्रहों की जाति :**

सात्त्विक : सूर्य, चन्द्र, गुरु

राजसिक : शुक्र, बुध

तामसिक : मंगल, शनि

7. **स्थिर कारक :**

सूर्य : आत्मा / स्वयं, पिता

चंद्र : मस्तिष्क, माता

मंगल : साहस, छोटे भाई–बहन

बुध : वक्तृत्वक्षमता, बुद्धिमत्ता

बृहस्पति : विवेक, प्रसन्नता

शुक्र : शुक्र, प्रजनन शक्ति

शनि : दुःख

8. **आकृति :**

सूर्य : आयत, वर्ग, समान्तर चतुर्भुज, समचतुर्भुज

चंद्र : छिद्रयुक्त खोखला

बुध : ऊंचा, लंबा

बृहस्पति : गोल, वृत्ताकार

शुक्र : सुंदर, अच्छी लंबाई

शनि : खोखला और लंबा (कृशकाय, क्लांत)

आकृति द्वारा खोये समान की आकृति जानने में सहायता मिलती है।

9. **निवास :**

सूर्य, मंगल, शनि, राहु	: वन, पर्वत, खनन स्थान
चंद्र, शुक्र	: जलीय स्थान, तालाब, नदी
बुध, बृहस्पति	: सिनेमा गृह, नगर, उद्यान, गांव
राहु/केतु	: झाड़ियां

10. **समय :**

शनि	: एक वर्ष
सूर्य	: 6 मास (अयन)
बुध	: 2 मास (ऋतु)
बृहस्पति	: 1 मास
शुक्र	: 15 दिन (पक्ष)
मंगल	: 1 दिन
चंद्र	: 48 मिनट (मुहूर्त), पल
राहु	: 8 मास
केतु	: 2 मास

11. **शरीर पर चिह्न, मस्सा आदि**

सूर्य, मंगल, बृहस्पति, बुध	: शरीर के दायें भाग पर निशान बनाते हैं।
चंद्र, शुक्र, शनि, राहु/केतु	: शरीर के बायें भाग पर निशान बनाते हैं।

12. **राशि चक्र में ग्रहों की दैनिक औसत गति**

सूर्य	: 1^0
चन्द्र	: 12^0
मंगल	: $42'$
बुध	: $75'$
गुरु	: $5'$
शुक्र	: $75'$

शनि	: 2′
राहु/केतु	: 3′

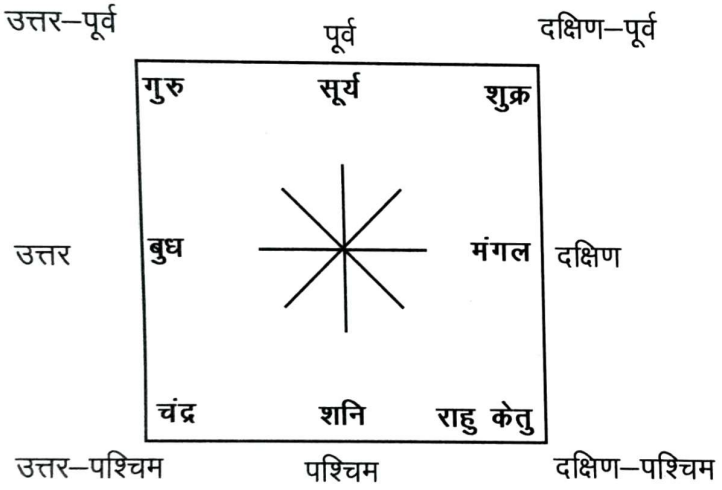
13. **ग्रहों के कारकत्व :**

सूर्य		: आत्मा
चन्द्रमा	:	मन
मंगल	:	बल
बुध	:	वाणी
बृहस्पति	:	ज्ञान
शुक्र	:	काम–वासना
शनि	:	दु:ख

14. ग्रहों के रंग :

सूर्य	नारंगी
चन्द्र	क्रीम
मंगल	लाल
बुध	हरा
गुरु	पीला
शुक्र	सफेद (पारदर्शी)
शनि	काला / नीला

15. ग्रहों की दिशाएँ :



16. ग्रह–वृक्ष :

सूर्य	मोटे तने का पेड़
चन्द्र	रबड़ का पेड़
मंगल	नींबू का पेड़
बुध	फलहीन वृक्ष
गुरु	फलहीन वृक्ष
शुक्र	फूलदार वृक्ष
शनि	अनुपयोगी पेड़

17. ग्रह–स्थान :

सूर्य	मन्दिर
चन्द्र	जलीय स्थान
मंगल	आग्नेय स्थान
बुध	क्रीड़ा–स्थल
गुरु	कोषागार
शुक्र	शयनकक्ष
शनि	गन्दे स्थान

18. ग्रह–ऋतु :

शुक्र	वसन्त
सूर्य, मंगल	ग्रीष्म
चन्द्र	वर्षा
बुध	शरद
गुरु	हेमन्त
शनि	शिशिर

19. ग्रह–स्वाद :

सूर्य	तिक्त
चन्द्र	लवणीय
मंगल	कटु
गुरु	मधुर
शुक्र	खट्टा

20. ग्रहों का मंत्रिमण्डल :

सूर्य	राजा
चन्द्र	मंत्री
मंगल	सेनापति
बुध	राजकुमार
गुरु, शुक्र	सलाहकार
शनि	सेवक

21. ग्रहों की इन्द्रियाँ :

सूर्य, मंगल	रूप
चन्द्र, शुक्र	रस
बुध	गन्ध

गुरु	शब्द
शनि	स्पर्श

22. ग्रह–रत्न :

सूर्य	माणिक्य
चन्द्र	मोती
मंगल	मूँगा
बुध	पन्ना
गुरु	पुखराज
शुक्र	हीरा, जिरकॉन
शनि	नीलम
राहु	गोमेद
केतु	लहसुनिया

23. ग्रह–धातु :

मंगल, शनि	तांबा
चन्द्र, शुक्र	चांदी
बुध	घण्टा–धातु (कांस्य)
गुरु	सोना
शनि	लोहा
राहु, केतु	शीशा

24. ग्रहों के वस्त्र :

सूर्य	मोटा
चन्द्र	नया
मंगल	दग्ध (जला हुआ)
बुध	भीगा हुआ

गुरु	हाल का बना किन्तु नया नहीं
शुक्र	टिकाऊ
शनि	फटा–चिथड़ा

4.3.2 ग्रहों की अन्य विशेषताएं

प्रकाश ग्रह	: सूर्य, चन्द्र
शुभ ग्रह	: गुरु, शुक्र तथा चन्द्र (सशर्त) एवं बुध (सशर्त) शर्त – चंद्रपक्ष बली होना चाहिए, बुध शुभ राशि अथवा शुभ ग्रह के साथ होना चाहिए।
अशुभ ग्रह	: सूर्य, शनि, मंगल, राहु, केतु चंद्र (पापी), बुध (पापी) चंद्रमा पक्षबल के अनुसार शुभ या अशुभ होता है।
बहिर्युति ग्रह	: मंगल, गुरु, शनि
अन्तर्युति ग्रह	: बुध, शुक्र

ग्रह उच्च का, स्वगृही, मूल त्रिकोण, वर्गोत्तम या शुभ ग्रह द्वारा दृष्ट, अशुभ ग्रह द्वारा अदृष्ट आदि होने पर उसके गुण बढ़ जाते हैं। मगर शनि के बारे में विपरीत नियम लागू होते हैं। शनि बली होने पर दु:खों का हरण करता है, निर्बल होने पर दु:ख बढ़ जाते हैं। कुछ विद्वानों के मत से जब शनि निर्बल होता है तो उसमें दु:ख देने की शक्ति नहीं रहती है, परंतु निर्बल ग्रह उन भावों का फल देने में अक्षम हो जाता है, जिनका वह स्वामी है।

4.3.3 ग्रहों के कारकत्व

ग्रहों को कुछ नैसर्गिक काम सौंपे गये हैं। उनका भी विचार करना आवश्यक है। भारतीय ज्योतिष फलित का आधार ग्रह, राशियां तथा भाव हैं। इसलिये ग्रहों, राशियों तथा भावों की संज्ञाओं का ज्ञान आवश्यक हो जाता है। भारतीय ज्योतिष में सात ग्रह तथा दो छाया ग्रहों को स्थान प्राप्त है। सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र तथा शनि सात ग्रह हैं तथा राहु केतु छाया ग्रह हैं।

4.3.3.1 सूर्य

सूर्य पिता का प्रतीक है। यह ब्रह्माण्ड की आत्मा, अहम्, सहानुभूति, प्रभाव, यश, स्वास्थ्य, दाएँ नेत्र, दिन, ऊर्जा, औषधियाँ, चिकित्सक, अधिकारी वर्ग, पिता, राजा, राजनीति, चिकित्सा विज्ञान, गौरव, पराक्रम का कारक है। ज्योतिषीय दृष्टि से सूर्य पितृ, प्रकृति, लम्बा, अल्प बाल, क्रूर ग्रह, तांबे जैसे रंग, राजसी, दार्शनिक, पूंजी उधार देने वाले, रोगों से बचाने की शक्ति, दृढ़ इच्छा शक्ति, पद का प्रतीक है।

साहस, कार्य शक्ति, ऊर्जा, व्यक्तित्व, अधिकार, सात्विक प्रकृति का कारक है। सूर्य से प्रभावित जातक का चेहरा विशाल और गोल, आंखों का रंग शहद जैसा होता है। जातक महत्वाकांक्षी, साहसी, उदार होता है।

पदार्थ	ईंधन, बिजली, चर्म, ऊन, सूखा अनाज, विष, तथा गेहूँ सूर्य के अधीन हैं। सूर्य बीजों का विकास करता है।
स्थान	खुले स्थान, पर्वत, वन, प्रमुख शहर, पूजा के स्थान, न्यायालय, पूर्व दिशा, ऐसा स्थान जहां पानी न हो।
अंग	सिर, पेट, हड्डियां, ह्दय, नेत्र, मस्तिष्क।
रोग	उच्च रक्तचाप, तीव्रज्वर, पेट तथा नेत्र संबंधी रोग, पित्तज बीमारियां तथा ह्दय रोग देता है। जब सूर्य पीड़ित होता है तथा जलीय राशियों में स्थित होता है तो क्षय रोग, पेचिश रोग देता है।
धातु / रत्न	तांबा, सोना, माणिक्य

4.3.3.2 चन्द्रमा

इसका शरीर स्थूल है। घुंघराले बालों, गोरा रंग तथा सुंदर आंखों का प्रतीक है। चन्द्रमा मन, माता, भ्रमण की रुचि, रस, सम्मान, निद्रा, प्रसन्नता, धन, यात्रा, जल, अस्थिर मन का कारक ग्रह है।

मस्तिष्क और तरल पदार्थों का कारक है, सौम्यता, सात्विक प्रकृति, प्रेम, कल्पना और विचारों का संकेतक है। परिवर्तनशीलता, अधिक यात्रा, पारिवारिक जीवन, व्यक्तिगत और गुप्त संबंध, महिलाओं के वक्ष, मासिक धर्म, सौन्दर्य, आंखें, जलीय स्थान परिचायक है। मनोरंजन, संगीत, कला आदि चंद्र को प्रिय हैं। चंद्र का रंग श्वेत हैं। कफ और वात का कारक है।

पदार्थ	कपड़ा, दूध, शहद, मीठी वस्तुएं, चावल, जौ,
स्थान	झील, समुद्र, नदियां, महानदी, पर्वत, महल।
अंग	नसों, मस्तिष्क, छाती, अंडाशय तथा प्रजनन
रोग	सांस की बीमारी, त्वचा की बीमारियां, अपच, मन्दाग्नि आदि बीमारियों का कारक ग्रह है। यह कफ तथा वायु का भी कारक ग्रह है।
धातु / रत्न	मोती, चांदी

4.3.3.3 मंगल

शक्ति, साहस, पराक्रम, प्रतियोगिता, क्रोध, उत्तेजना, षड़यन्त्र, शत्रु, विपक्ष, विवाद, शस्त्र, सेनाध्यक्ष, युद्ध, दुर्घटना, अग्नि, घाव, भूमि, अचल सम्पत्ति, चाचा के लड़के, नेता, पुलिस, सर्जन, मेकैनिकल इंजीनियर, अग्निमय आंखें, क्रूर प्रकृति, अस्थिर बुद्धि, स्वतंत्र प्रकृति, दुराग्रही, युवा, छोटे भाई, फौजी प्रकृति, हवाई यात्राओं, हत्या करने वाला, मजदूरों के नेता।

छोटे भाई और बहन, ऊर्जा, वीर, महत्वाकांक्षी, आवेगशील, उत्साह, सहनशीलता, उदार, जोखिमपूर्ण कार्य, स्वतंत्र कार्य, जायदाद, अग्नि या भट्टीयुक्त कारखाने, शल्य चिकित्सा, आग, झगड़े और चोरी का संकेतक है।

पदार्थ	हथियार, भूमि, तम्बाकू, सरसों।
स्थान	रसोई, इंजन, अग्नि स्थल, युद्ध भूमि, पुलिस स्टेशन।
अंग	रक्त, पेशी, पित्त, सिर, नाक, कान आदि।
रोग	रक्त संबंधी रोग, उच्च या निम्न रक्तचाप, रक्तस्राव, अग्नि से जलना, गर्भपात।
धातु / रत्न	तांबा, सोना, मूंगा।

4.3.3.4 बुध

इसका अपना कोई प्रभाव नहीं होता और यह जिसके साथ होता है वैसा ही हो जाता है। बुध हास्य–विनोद का प्रतिनिधि ग्रह है। बहुत बोलना, उसके पास विविध विषयों पर बहुत सारी सूचनाएं होती हैं। यह राजकुमार है। यह मितव्ययी, व्यापारिक प्रकृति वाला, वाक्–पटुता तर्क,

अभिव्यक्ति, शिक्षा, शिक्षण, गणित, डाकिया, ज्योतिषी, लेखाकार, व्यापार, कमीशन एजेंट, राजनीति में मध्यवर्ती व्यक्ति, नाटक, धातुओं का मिश्रण, मामा, मित्र, सम्बन्धी आदि।

बुद्धिमत्ता, मानसिक योग्यता, सामंजस्य, उत्तम स्मरण शक्ति, मस्तिष्क सक्रिय होता है पर एकाग्रता कुछ कम। जातक के मस्तिष्क में बहुत से विषयों की तरफ ध्यान रहता है। दूसरों द्वारा शीघ्र प्रभावित हो जाता है। खगोल शास्त्र, ज्योतिष और विज्ञान में अधिक रुचि रहती है। कला और उत्पादन में प्रवीण, आज्ञाकारी, शिष्ट और उत्साही होता है। बुध की स्थिति सकारात्मक हो और बृहस्पति के साथ युति हो तो जातक उच्चाधिकारी और उच्चकोटि का विचारक होता है। बिना शिक्षक के ज्ञान प्राप्ति में सक्षम, पर्यटक, गणितज्ञ, वैज्ञानिक, वकील, परिधान निर्माता, मुद्रक, प्रकाशक, वक्ता, राजदूत, लिपिक, संदेशवाहक, विद्यालय के पुस्तकालय, सदन। बुध के निर्बल या दूषित होने पर जातक भुलक्कड़, कटुवचन वाला, अप्रिय होता है और दूसरों का मजाक उड़ाता है।

पदार्थ	हरा चना, पन्ना, तिलहन, खाद्य तेल, पालक, मिश्रित धातुयें।
स्थान	स्कूल, खेल के मैदान, पार्क, विश्वविद्यालय।
अंग	मस्तिष्क, जिहवा, स्नायु, कंठ, त्वचा, वाक्शक्ति
रोग	स्मरण शक्ति की हानि, त्वचा की बीमारियाँ, दौरे, चेचक, कफ, वात पित्त, उन्माद, एवं गूंगापन।
धातु / रत्न	पन्ना, पीतल, सोना।

4.3.3.5 बृहस्पति

विवेक, शिक्षण, शरीर की मांसलता, धार्मिक कार्य, ईश्वर के प्रति निष्ठा, बड़ा भाई, पवित्र स्थान, दार्शनिकता, धार्मिक ग्रन्थों का पठन–पाठन, सच्चाई का प्रतीक, दार्शनिक, प्रत्येक प्रकार के विज्ञान में रुचि रखने वाला, धार्मिक, गुरु, अध्यापक, दान देना, परोपकार, मन्त्री, सलाहकार, फलदार वृक्ष, पुत्र आदि।

आशापूर्ण, प्रसन्नचित्त व्यक्तित्व। जातक अधिक मित्रों वाला और लोकप्रिय होता है। समाज में प्रतिष्ठा और जीवन में सफलता मिलती है। धार्मिक कार्यों में रुचि। बृहस्पति विवेक का सूचक है जबकि बुध बुद्धि का बोध कराता है। अगर इन दोनों की युति हो या ये केंद्र में स्थित हों तो जातक सुशिक्षित, बुद्धिमान्, तीव्र दृष्टि वाला, कुशल वक्ता, उच्च चरित्रवान्, आध्यात्मिक, दयालु, क्षमाशील तथा मानद मात्र से प्रेम करने वाला होता है। धार्मिक और ईश्वर में श्रद्धावान् होता है। परंपराओं का निर्वाह करते हैं। बृहस्पति न्यायाधीश, वकील[?], प्राध्यापक, धर्मगुरु, मंत्री,

प्रशासक, बैंक अधिकारी, कर विभाग आदि का संकेतक है। महलों में काम करने वाले, उद्यान, अदालत आदि का भी प्रतिनिधि है। शहद, तेल, रेशम, वस्त्र, घोड़े और पालतू पक्षियों का संकेतक है।

बृहस्पति के दूषित होने पर यह आतंकवादियों, फिजूलखर्च, गैरजिम्मेदारी, मतभेद, जुआ, ठाट–बाट, गलत आकलन, दुर्भाग्य, निर्धनता, मुकदमे और अलोकप्रियता का कारक बन जाता है।

पदार्थ	पीली वस्तुएं, चने की दाल।
स्थान	न्यायालय, पाठशाला, मन्दिर, धार्मिक स्थान।
अंग	विवेक, शक्ति, उदर, जिगर, जंघा का कारक है।
रोग	जिगर की बीमारियाँ, गुर्दे की बीमारियाँ, मधुमेह, जलोदर, पाचन–क्रिया के रोग। वसा के द्वारा उत्पन्न रोग।
धातु / रत्न	सोना, पुखराज

4.3.3.6 शुक्र

विवाह, रतिक्रिया, प्रेम सम्बन्ध, संगीत, काव्य, इत्र–सुगंध, घर की सजावट, ऐश्वर्य, दूसरों के साथ–सहयोग, फूल, फूलदार वृक्ष, पौधे, सौंदर्य, आँखों की रोशनी, आभूषण, जलीय स्थान, सिल्कन कपड़ा, सफेद रंग, वाहन, शयन कक्ष, सुख–साधन आदि। काले घुंघराले बाल, विशाल शरीर, कालिमा लिए रंग, चौड़ी आंखें, सुंदर चेहरे, नाक नक्श का प्रतिनिधि है। शुक्राणु, रति का शौकीन, प्रेम–सम्बन्ध, आकर्षक व्यक्तित्व का स्वामी है। नृत्य–कला, ऐन्द्रिय सुख, ड्रामा, अभिनय, सजावट का कारक है।

शुक्र अनुकूल होने पर व्यक्तित्व और मस्तिष्क उत्तम होते हैं। शुक्र राजसिक ग्रह है। वह सभी सांसारिक कार्यों का नियंत्रक है। वह पति / पत्नी, प्रणय, काम–वासना, मनोरंजन का प्रतिनिधि है। कलाकृतियां, सुगंधित पदार्थ, घोड़े, गाड़ी, वाहन, चरित्र का संकेतक है। वस्त्र, फर्नीचर और साजसज्जा में सुरुचि, आराम की वस्तुओं का कर्ता है। नृत्य, संगीत, रेशमी वस्त्र, आभूषण, कशीदाकारी, चुंबन, शय्या सुख और प्रीतिभोज आदि का प्रतिनिधि है।

शुक्र के पीड़ित होने पर जातक अतिकामी, चरित्रहीन होता है। निम्नकोटि की स्त्रियां और पेय, अभद्र साथी, जुआ और निम्न कार्य उसके जीवन के अंग होते हैं।

पदार्थ	इत्र, सजावट की वस्तु, सिल्क।
स्थान	शयनकक्ष, सिनेमा, फव्वारा।
अंग	रति क्रिया के अंग, लिंग, मूत्राशय, बाल, शुक्र, कीटाणु।
रोग	मधुमेह, रतिज संबंधी रोग, गुप्त रोग, यौन असमर्थता, आंखों की कमजोरी, श्वेत– प्रदर, वीर्यपात।
धातु / रत्न	हीरा, चांदी।

4.3.3.7 शनि

आयु, दु:ख, रोग, मृत्यु, संकट, अनादर, गरीबी, आजीविका, अनैतिक तथा अधार्मिक कार्य, विदेशी भाषा, विज्ञान तथा तकनीकी शिक्षा, मेहनत वाले कार्य, कृषीय व्यवसाय, लोहा, तेल, खनिज पदार्थ, कर्मचारी, सेवक, नौकरियां, चोरी, क्रूर कार्य, पंगुता, अंग–भंग, लोभ, बिस्तरे पर पड़े रहना, चार दीवारी में बन्द रहना, जेल, हास्पिटल में पड़े रहना, वायु, जोड़ों के दर्द, कठोर वाणी आदि। रूखे–सूखे बाल, लम्बे बड़े अंग, बड़े दांत तथा वृद्ध शरीर, काले रंग का दिखने वाला होता है। यह अशुभ ग्रह है। मन्द गति ग्रह है। निराशा तथा जुए का प्रतीक है।

शनि से प्रभावित होने पर जातक लंबे कद का, पतला, आलसी, सांवले रंग का, सारे शरीर पर रूखे बाल, कुरूप दांत वाला होता है। शनि के कारण जातक कम उम्र में बूढ़ा दिखाई देता है, बाल सफेद हो जाते हैं। जातक कल्पनाशील, सावधान, शांत, एकांतप्रिय, धैर्यवान्, परिश्रमी, अध्ययनकर्ता, वफ़ादार होता है।

दूषित होने पर जातक ईर्ष्यालु, असत्यवादी, आलसी, झूठा, बेईमान, असंतुष्ट होता है। शनि जंगलों में काम करने वाले, निर्जन स्थान, पुराने गिरिजाघर, मंदिर, जीर्ण–शीर्ण भवन, नालियां, मल–जल आदि का प्रतिनिधि है। दीर्घ जीवन, वैज्ञानिक, अनुसंधानकर्ता, खोजकर्ता, देशभक्त, दार्शनिक, धार्मिक नेता, समाज सुधारक, लेखक आदि का कारक है।

स्थान	गन्दे और अंधेरे स्थान, गुफा, जंगल।
पदार्थ	लोहा, काले चने, भांग, तेल, पेट्रोल, कोयला, केरोसिन।
अंग	दांत, कलाई, पीठ, पैर।

रोग	सारे पुराने लाइलाज रोग, दांत, सांस, क्षय, वातज, गुदा के रोग, जख्म, जोड़ों के दर्द आदि।
धातु / रत्न	नीलम, लोहा, पंच धातु।

4.3.3.8 राहु

छाया ग्रह, दादा, कठोर वाणी, जुआ, भ्रामक तर्क, गतिशीलता, यात्राएं, विजातीय लोग, विदेशी लोग, विदेश यात्रा, विष, चोरी, दुष्टता, विधवा, धार्मिक यात्राएं, षडयन्त्रकारी ।

लगभग सभी ज्योतिर्विदों ने राहु व केतु का वर्णन साथ–साथ किया है। केवल नारायण भट्ट और कालिदास ने उन्हें पृथक् रखा है क्योंकि उनकी कार्यविधि स्वतंत्र होती है। उनके परिणाम स्थान, राशि के स्वामियों, युति करने वाले या दृष्टा ग्रहों के अनुसार होते हैं।

पदार्थ	अण्डे, नारियल, मांस।
अंग	होठ, त्वचा
रोग	कुष्ठ रोग, श्वेत रोग, चेचक, हैजा, संक्रामक रोग।
धातु / रत्न	अष्ट धातु, गोमेद इसका रत्न है।

4.3.3.9 केतु

दर्द, ज्वर, घाव, शत्रुओं को नुकसान पहुंचाना, तांत्रिक तंत्र, जादू–टोना, कुत्ता, सींग वाले पशु, बहुरंगी पक्षी, मोक्ष, अचानक होने वाली घटनाएँ, अशुभ धार्मिक प्रकृति, साम्प्रदायिक कट्टर पन्थी, घमंडी, स्वार्थी।

राहु के गुणों के समान ही केतु की कार्य प्रणाली होती है। दोनों को अलग नहीं किया जा सकता। वे एक धुरी का निर्माण करते हैं जिसके चारों ओर संपूर्ण जीवन घूमता है। उनके बीच में 180° की दूरी होती है। अधिकांशतः ये वक्री होते हैं, कभी भी अस्त नहीं होते।

केतु की पाप ग्रह से युति होने पर पाप ग्रह अधिक अशुभ हो जाता है। शुभ ग्रह से युति होने पर बाधाएं उत्पन्न हो जाती हैं और शुभ फलों का नाश हो जाता है।

रोग	आंत्रिक जोड़ों, चेचक, हैजा तथा संक्रामक रोग

धातु / रत्न	अष्ट धातु, लहसुनिया।

4.4 सारांश

सूर्य के चारों ओर जो पिंड अपनी–अपनी कक्षा में अपनी–अपनी गति से ब्रह्मांड के परस्पर गुरुत्वाकर्षण एवं प्रतिकर्षण बल के कारण निरंतर गतिमान रहते हैं और जिनमें प्रकाश नहीं होता है। साधारणतया उनको ग्रह कहा जाता है। इन ग्रहों का जातक के जीवन पर शुभ और अशुभ प्रभाव जन्म कुंडली में स्थित योग, दशा एवं गोचर के कारण समय–समय पर देखा जा सकता है। इनमें से कुछ ग्रह शुभ होते हैं एवं कुछ अशुभ होते हैं।

ग्रहों की शुभता एवं अशुभता दो प्रकार से निर्भर करती है। पहला – नैसर्गिक एवं दूसरा – तात्कालिक। नैसर्गिक शुभता एवं अशुभता सभी जातकों के लिए समान रहती है। परंतु तात्कालिक शुभता और अशुभता जन्म कुंडली के लग्न एवं राशि स्वामी तथा भावाधिपति के आधार पर निर्धारित होती है। योग, दशा एवं गोचर में ग्रहों का नैसर्गिक गुण एवं स्वभाव समान रहता है। यह उनके रंग, धातु, रत्न, स्त्री–पुरुष, स्वाद, कारकत्व, मंत्रिमंडल, पदार्थ एवं जाति पर निर्भर करता है। इन्हीं गुण स्वभाव के आधार पर जातक का स्वभाव, प्राकृतिक संरचना, शुभ और अशुभ फल निर्भर करते हैं।

4.5 शब्दावली

सात्विक : शुभ आचरण, अनुष्ठान आदि

राजस : कार्य करने में तत्परता

तामस : पाप कर्मों में प्रवृत्ति

अभ्यास प्रश्न

प्रश्न 1. प्रकाशमान ग्रह कौन–कौन से हैं ?

प्रश्न 2. शुभ और अशुभ ग्रहों के नाम बताएं।

प्रश्न 3. भचक्र में नवग्रहों की दैनिक औसत गति क्या है ?

प्रश्न 4. नवग्रहों की अधिष्ठित दिशाएं कौन सी हैं ?

प्रश्न 5. सभी ग्रहों का मंत्रिमंडल व कारकत्व सारणी के रूप में दर्शाएं।

प्रश्न 6. नवग्रहों के रत्न एवं संबंधित धातु क्या है ?

प्रश्न 7. स्त्री, पुरुष एवं नपुंसक ग्रहों के नाम बताएं।

प्रश्न 8. चर, स्थिर एवं द्विस्वभाव ग्रहों के नाम बताएं।

प्रश्न 9. सूर्य एवं शुक्र की जातियां बताएं।

प्रश्न 10. शरीर पर चिह्न, मस्सा आदि का ग्रहों से क्या संबंध है ?

4. 5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्तर 1. सूर्य और चंद्र

उत्तर 2. शुभ ग्रह – गुरु, शुक्र तथा चंद्र (सशर्त) एवं बुध (सशर्त)

अशुभ ग्रह – सूर्य, शनि, मंगल, राहु, केतु तथा चंद्र (सशर्त) एवं बुध (सशर्त)

उत्तर 3. इस इकाई का उपखंड 4.3.12 देखें।

उत्तर 4. इस इकाई का उपखंड 4.3.15 देखें।

उत्तर 5. इस इकाई का उपखंड 4.3.13 एवं 4.3.20 देखें।

उत्तर 6. इस इकाई का उपखंड 4.3.22 एवं 4.3.23 देखें।

उत्तर 7. इस इकाई का उपखंड 4.3.1 देखें।

उत्तर 8. इस इकाई का उपखंड 4.3.3 देखें।

उत्तर 9. इस इकाई का उपखंड 4.3.6 देखें।

उत्तर 10. इस इकाई का उपखंड 4.3.11 देखें।

4.6 संदर्भ ग्रंथ / सूची

1. बृहत् पाराशर होरा शास्त्र – पं. पद्मनाभ शर्मा
2. सरल ज्योतिष – अखिल भारतीय ज्योतिष संस्था संघ
3. प्रश्न शास्त्र – अखिल भारतीय ज्योतिष संस्था संघ

4. घटना का काल निर्धारण – अखिल भारतीय ज्योतिष संस्था संघ

4.7 सहायक /उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. Brihat parashar Hora Shastra

   लेखक – आर. संथानम

   प्रकाशक – रंजन पब्लिकेशंस, दिल्ली

2. मानसागरी

   व्याख्याकार – पं. श्री रूपनारायण झा

   प्रकाशक – श्री ठाकुर प्रसाद गुप्ता भंडार, वाराणसी

3. (सचित्र) ज्योतिष शिक्षा तृतीय फलित खण्ड (प्रथम भाग)

   लेखक – बी. एल. ठाकुर

   प्रकाशक – मोतीलाल बनारसीदास

4.7 निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. सभी शुभ ग्रहों के गुण धर्म विस्तार सहित बताएं।

प्रश्न 2. सभी अशुभ ग्रहों के गुण धर्म विस्तार सहित बताएं।

निबन्धात्मक प्रश्नों के उत्तर

उत्तर 1. इस इकाई का उपखंड 4.3.3 देखें।

उत्तर 2. इस इकाई का उपखंड 4.3.3 देखें।

इकाई – 5 ग्रह–परिचय एवं मैत्री–सम्बन्ध

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 ग्रह–परिचय
5.3.1 शुभ–अशुभ ग्रह
5.3.2 ग्रहों की उच्च नीचादि
5.3.3.1 ग्रहों की स्व राशि
5.3.3.2 ग्रहों की उच्च राशि
5.3.3.3 ग्रहों की नीच राशि
5.3.3.4 ग्रहों की मूलत्रिकोण–राशि
5.3.3 ग्रहों का अस्त–उदय
5.3.3.1 ग्रहों की अस्त–सारणी
5.4 ग्रहों की मैत्री–शत्रुता
5.4.1 नैसर्गिक–मैत्री
5.4.1.1 ग्रहों की नैसर्गिक मित्र–तालिका
5.4.1.2 ग्रहों की नैसर्गिक शत्रु–तालिका
5.4.1.3 ग्रहों की नैसर्गिक सम–तालिका
5.4.2 तात्कालिक मैत्री
5.4.2.1 ग्रहों की तात्कालिक मैत्री–तालिका
5.4.2.2 ग्रहों की तात्कालिक मित्र–सारणी
5.4.2.3 ग्रहों की तात्कालिक शत्रु–सारणी
5.4.3 पंचधा मैत्री
5.5 सारांश
5.6 शब्दावली
5.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.9 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री
5.10 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

विगत अध्याय में ग्रहों के गुण व नैसर्गिक विशेषताओं का अध्ययन आपने किया। ग्रहों के परस्पर सम्बन्ध में उनकी नैसर्गिक विशेषताओं का महत्वपूर्ण स्थान होता है। नैसर्गिक– मैत्री, तात्कालिक–मैत्री फलादेश में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। साथ ही ग्रहों के उच्च नीचादि भी फलादेश को विशेष रूप से प्रभावित करते हैं।

ग्रहों की यही स्थिति जातक के गुण–स्वभाव, शुभ और अशुभ फल तथा भविष्य के लिए जिम्मेदार होते हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि ग्रहों की छाप जातक के जीवन पर हमेशा–हमेशा के लिए पड़ जाती है।

प्रस्तुत इकाई में ग्रह किस राशि में रहने से उच्च राशि का होगा, किस राशि में होने से नीच, मूल त्रिकोण या स्वराशि में होगा इस बात का अध्ययन करेंगे। यहां एक बात और स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि ज्योतिष का उद्भव खगोल विज्ञान से ही हुआ है और खगोल विज्ञान को धर्म से जोड़ दिया गया तो ज्योतिष का प्रारंभ हुआ। यहां ग्रह के उच्च और नीच का तात्पर्य यह बिल्कुल नहीं समझना चाहिए कि ग्रह बहुत महान् है या ग्रह बहुत निकृष्ट हो गया है।

ग्रह का शुभ होना या अशुभ होना तथा ग्रह का बली होना या निर्बल होना बिल्कुल अलग–अलग दो तथ्य हैं। इनका अंतर न समझ पाने पर फलादेश के समय हमेशा ही संशय की स्थिति में रहेगा।

आगामी इकाई में ग्रहों की शयनादि अवस्थाओं और दृष्टियों का अध्ययन करेंगे।

5.2 उद्देश्य

जन्मकुंडली में कौन सा ग्रह बली है और कौन सा ग्रह निर्बल है। इसी के आधार पर किसी कुंडली में किसी विचार के लिए दो या दो से अधिक ग्रहों को देखा जा रहा है तो इस बात का अनुमान लगा सकें कि किसी अमुक घटना के लिए या भाव के लिए कौन सा ग्रह अधिक उत्तरदायी होगा। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप –

- ग्रहों की उच्च राशि का ज्ञान प्राप्त कर पायेंगे।
- ग्रहों की नीच राशियों को लिख पायेंगे।
- ग्रहों की मूल त्रिकोण राशियों का निर्णय कर सकेंगे।
- ग्रहों की स्वराशि का निर्णय कर पायेंगे।
- ग्रहों की अस्त सारणी बना सकेंगे।
- ग्रहों के पारस्परिक संबंध का ज्ञान प्राप्त कर पायेंगे।

- ग्रहों में शुभ और अशुभ ग्रहों का अन्तर कर सकेंगे।

5.3 ग्रह परिचय

5.3.1 शुभ–अशुभ ग्रह

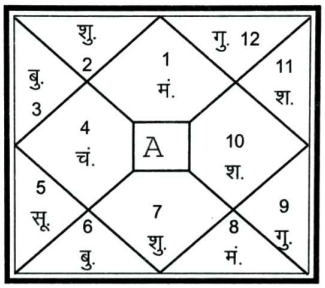
शुभ–चन्द्रमा, शुभ–बुध, शुक्र और गुरु ये क्रम से अधिकाधिक शुभ माने गये हैं, अर्थात् चन्द्रमा से बुध, बुध से शुक्र और शुक्र से गुरु अधिक शुभ हैं। सूर्य, मंगल, शनि व राहु ये क्रम से अधिकाधिक पापी ग्रह कहे गये हैं, अर्थात् सूर्य से मंगल, मंगल से शनि और शनि से राहु अधिक पापी ग्रह हैं।

5.3.2 ग्रहों के उच्च नीचादि

यहां इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि कोई भी ग्रह अपनी उच्च राशि से ठीक 180° अर्थात विपरीत स्थिति में नीच का हो जाता है। अर्थात ग्रहों के उच्च और नीच का तात्पर्य इस प्रकार समझा जाना चाहिए कि ग्रह अमुक राशि में यदि विद्यमान है तो पृथ्वी पर रहने वाले मनुष्यों के लिए सबसे अधिक प्रभावशाली रहेगा और नीच राशि में है तो यह समझना चाहिए इस राशि में ग्रह न्यूनतम प्रभावशाली रह जाता है। इस प्रकार ग्रहों के उच्च और नीच राशि से तात्पर्य यह समझना चाहिए कि ग्रह उच्च राशि में पूर्ण बली होता है और नीच राशि में न्यूनतम बली होता है। इसका तात्पर्य यह बिल्कुल नहीं समझा जाना चाहिए ग्रह शुभ हो गया है या अशुभ हो गया है।

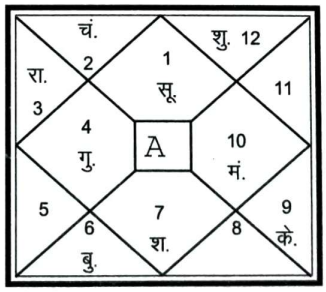
5.3.2.1 ग्रहों की स्व राशि

ग्रह	स्व राशि	परम अंश
सूर्य	सिंह	10°
चन्द्रमा	कर्क	3°
मंगल	मेष एवं वृश्चिक	28°
बुध	मिथुन एवं कन्या	15°
बृहस्पति	धनु एवं मीन	5°
शुक्र	वृष एवं तुला	27°
शनि	मकर एवं कुंभ	20°



5.3.2.2 ग्रहों की उच्च राशि

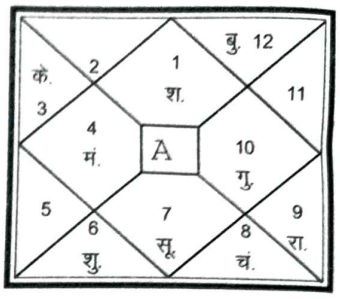
ग्रह	उच्च राशि	परम अंश
सूर्य	मेष	10°
चन्द्रमा	वृष	3°
मंगल	मकर	28°
बुध	कन्या	15°
बृहस्पति	कर्क	5°
शुक्र	मीन	27°
शनि	तुला	20°
राहु	मिथुन	15°
केतु	धनु	15°



प्रत्येक ग्रह जिस राशि में उच्च का होता है उससे सातवीं राशि में नीच का होता है तथा उसके परम अंश समान रहते हैं। ग्रहों के उच्च–नीच बोध से कुण्डली का फलादेश किया जा सकता है।

5.3.2.3 ग्रहों की नीच राशि

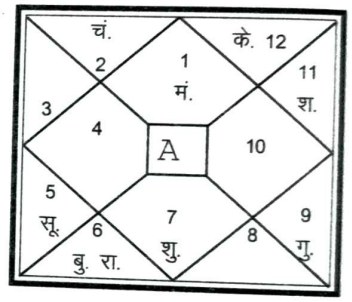
ग्रह	नीच राशि	परम अंश
सूर्य	तुला	10°
चन्द्रमा	वृश्चिक	3°
मंगल	कर्क	28°
बुध	मीन	15°
बृहस्पति	मकर	5°
शुक्र	कन्या	27°
शनि	मेष	20°
राहु	धनु	15°
केतु	मिथुन	15°



5.3.2.4 ग्रहों की मूल त्रिकोण राशि

ग्रह	मूल त्रिकोण	
	राशि	अंश
सूर्य	सिंह	0°–20°
चन्द्रमा	वृष	4°–20°
मंगल	मेष	0°–12°
बुध	कन्या	16°–20°
बृहस्पति	धनु	0°–10°
शुक्र	तुला	0°–15°

ग्रह	मूल त्रिकोण	
	राशि	अंश
शनि	कुंभ	0°–20°
राहु	कन्या	0°–15°
केतु	मीन	0°–15°



5.3.3 ग्रहों का अस्त–उदय

ग्रहों की दो प्रकार की गतियां होती हैं – वक्री गति और सरल गति इन गतियों के आधार पर सभी ग्रह सूर्य से भिन्न भिन्न राशियों पर अस्त होते हैं। जिसकी सारणी निम्न प्रकार है–

5.3.3.1 ग्रहों की अस्त–सारणी

ग्रह	सरल गति (Direct)	वक्र गति (Retrograde)
चंद्र	± 12°	—
मंगल	± 17°	± 8°
बुध	± 14°	± 12°
गुरु	± 11°	± 11°
शुक्र	± 10°	± 8°
शनि	± 16°	± 16°

5.4 ग्रहों की मैत्री–शत्रुता

ग्रहों में पांच प्रकार की मित्रता–शत्रुता मानी गई है– अधिमित्र, मित्र, सम, शत्रु और अधिशत्रु। कुण्डली में ग्रह मित्र के भाव में स्थित हो तो शुभ और शत्रु के भाव में हो तो अशुभ फल देता है।

5.4.1 ग्रहों की नैसर्गिक–मैत्री

5.4.1.1 ग्रहों की नैसर्गिक–मित्र–तालिका

ग्रह	मित्र ग्रह
सूर्य	चंद्र, मंगल, बृहस्पति
चन्द्रमा	सूर्य, बुध
मंगल	सूर्य, चंद्र, बृहस्पति, केतु
बुध	सूर्य, शुक्र
बृहस्पति	सूर्य, चंद्र, मंगल
शुक्र	बुध, शनि, राहु, केतु
शनि	बुध, शुक्र, राहु
राहु	शुक्र, शनि
केतु	मंगल, शुक्र

5.4.1.2 ग्रहों की नैसर्गिक–शत्रु–तालिका

ग्रह	शत्रु ग्रह
सूर्य	शुक्र, शनि, राहु, केतु
चन्द्रमा	राहु, केतु
मंगल	बुध, राहु
बुध	चंद्र
बृहस्पति	बुध, शुक्र
शुक्र	सूर्य, चंद्र
शनि	सूर्य चंद्र मंगल, केतु
राहु	सूर्य, मंगल, चंद्र, केतु
केतु	शनि, राहु, सूर्य, चंद्र

5.4.1.3 ग्रहों की नैसर्गिक–सम–तालिका

ग्रह	सम ग्रह
सूर्य	बुध
चन्द्रमा	शनि, शुक्र, बृहस्पति, मंगल
मंगल	शुक्र, शनि
बुध	मंगल, बृहस्पति, शनि, केतु, राहु
बृहस्पति	शनि, राहु, केतु
शुक्र	बृहस्पति, मंगल
शनि	बृहस्पति
राहु	बुध, बृहस्पति
केतु	बुध, बृहस्पति

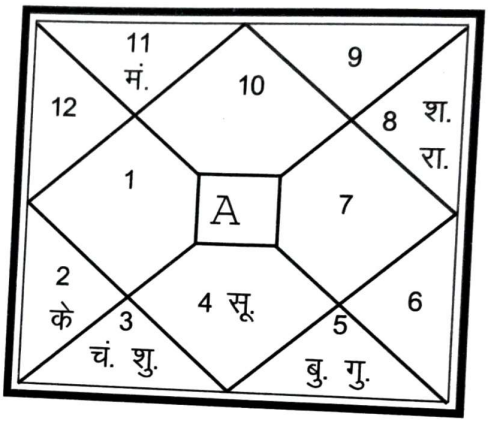
5.4.2 तात्कालिक–मैत्री

नैसर्गिक मैत्री के अलावा तात्कालिक मैत्री का भी विचार करना होता है। दोनों मित्रता (नैसर्गिक और तात्कालिक) के आधार पर पंचधा मैत्री चक्र बनता है।

जिस भाव में ग्रह स्थित होता है उससे 2, 3, 4 तथा 10, 11, 12 स्थानों में स्थित ग्रह तात्कालिक मित्र होते हैं तथा 5, 6, 7 तथा 7, 8, 9 एवं ग्रह के साथ स्थित ग्रह तात्कालिक शत्रु ग्रह होते हैं।

5.4.2.1 ग्रहों की तात्कालिक–मैत्री–तालिका

ग्रहों की तात्कालिक–मैत्री जन्मकुण्डली के आधार पर निर्धारित की जाती है। उदाहरण कुण्डली के आधार पर तात्कालिक–मैत्री निम्न अनुसार होगी।



उदाहरण कुण्डली

5.4.2.2 ग्रहों की तात्कालिक–मित्र–सारणी

ग्रह	तात्कालिक मित्र
सूर्य	चं. शु. के. बु. बृ
चन्द्रमा	के. सू. बु. बृ.
मंगल	के. श. रा.
बुध	सू. चं. शु. के. श. रा.
बृहस्पति	सू. चं. शु. के. श. रा.
शुक्र	सू. के. बृ. बु.
शनि	मं. बु. बृ.
राहु	मं. बु. बृ.
केतु	मं. चं. शु. सू. बु. बृ.

5.4.2.3 ग्रहों की तात्कालिक–शत्रु–सारणी

ग्रह	तात्कालिक शत्रु
सूर्य	मं. श. रा.
चन्द्रमा	शु. मं. श. रा.
मंगल	चं शु. सू. बु. बृ.

ग्रह	तात्कालिक शत्रु
बुध	मं. बृ.
बृहस्पति	मं. बु.
शुक्र	चं. मं. श. रा.
शनि	रा. के. चं. शु. सू.
राहु	के. चं. शु. सू. श.
केतु	श. रा.

5.4.3 पंचधा मैत्री

नैसर्गिक–मैत्री और तात्कालिक–मैत्री के आधार पर पंचधा मैत्री चक्र बनाया जाता है। पंचधा मैत्री चक्र में पांच प्रकार की स्थितियां होती हैं–अतिमित्र, मित्र, सम, शत्रु, अतिशत्रु। जब कोई ग्रह नैसर्गिक मैत्री में मित्र और तात्कालिक मैत्री में भी मित्र हो तो पंचधा मैत्री में वह अतिमित्र होता है। नैसर्गिक मैत्री में सम हो तथा तात्कालिक मैत्री में शत्रु हो तो पंचधा मैत्री में शत्रु हो जाता है। नैसर्गिक मैत्री में शत्रु हो तथा तात्कालिक मैत्री में भी शत्रु हो तो अतिशत्रु हो जाता है।

पंचधा मैत्री में पांच प्रकार की मैत्री होती है – मित्र, सम, शत्रु, अतिमित्र, अतिशत्रु।

जिसको हम निम्न सारणी के अनुसार समझ सकते हैं :

नैसर्गिक मैत्री		तात्कालिक मैत्री		पंचधा मैत्री
मित्र	+	मित्र	=	अतिमित्र
मित्र	+	सम	=	मित्र
मित्र	+	शत्रु	=	सम
सम	+	मित्र	=	मित्र
सम	+	सम	=	सम
सम	+	शत्रु	=	शत्रु
शत्रु	+	मित्र	=	सम

नैसर्गिक मैत्री		तात्कालिक मैत्री		पंचधा मैत्री
शत्रु	+	सम	=	शत्रु
शत्रु	+	शत्रु	=	अतिशत्रु

उदाहरण कुण्डली के लिए पंचधा मैत्री चक्र निम्न अनुसार होगा :–

	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु
सूर्य	—	अति मित्र	सम	मित्र	अति मित्र	सम	अति शत्रु	अति शत्रु	सम
चंद्र	अति मित्र	—	सम	अति मित्र	मित्र	शत्रु	शत्रु	अति शत्रु	सम
मंगल	सम	सम	—	अतिशत्रु	सम	शत्रु	मित्र	सम	अति मित्र
बुध	अति मित्र	सम	शत्रु	—	शत्रु	अति मित्र	मित्र	मित्र	मित्र
गुरु	अति मित्र	अति मित्र	सम	अतिशत्रु	—	सम	मित्र	मित्र	मित्र
शुक्र	सम	अतिशत्रु	शत्रु	अति मित्र	मित्र	—	सम	सम	अति मित्र
शनि	अतिशत्रु	अतिशत्रु	सम	अति मित्र	मित्र	सम	—	सम	अतिशत्रु
राहु	अतिशत्रु	अतिशत्रु	सम	मित्र	मित्र	सम	सम	—	अतिशत्रु
केतु	सम	सम	अति मित्र	मित्र	मित्र	अति मित्र	अति शत्रु	अति शत्रु	—

पंचधा मैत्री के आधार पर ग्रहों के सप्त वर्गी बल का साधन किया जाता है। पंचधा मैत्री के अनुसार अतिमित्र के ग्रह में ग्रह का बल 22 कला 30 विकला होगा। मित्र के घर में 15 कला बल, सम के स्थान में 7 कला 30 विकला, शत्रु के स्थान में 3 कला 45 विकला, अतिशत्रु के स्थान में 1

कला 52 विकला बल, अपने ही भाव में 30 कला बल, मूल त्रिकोण राशि में 45 कला बल और उच्चराशि में 60 कला बल मिलता है।

5.5 सारांश

जिस प्रकार समाज में व्यक्तियों के बीच शत्रुता, मित्रता या सम का संबंध होता है उसी प्रकार ज्योतिष में भी ग्रहों के मध्य संबंध होते हैं। ग्रहों के बीच तीन प्रकार से संबंध देखे जाते हैं। सर्वप्रथम ग्रहों के बीच नैसर्गिक संबंध देखा जाता है, अर्थात् कोई भी कुण्डली हो उनके बीच नैसर्गिक संबंध सभी जातकों के लिए समान ही होगा। इन नैसर्गिक संबंधों में तीन प्रकार के संबंध होते हैं– मित्र, शत्रु और सम। साथ ही यह भी आवश्यक नहीं होता है कि यदि एक ग्रह दूसरे के साथ मित्रता का संबंध रखे तो दूसरा ग्रह भी पहले ग्रह के साथ मित्रता का ही संबंध रखे। संभव है कि दूसरा ग्रह पहले ग्रह के साथ शत्रु का या सम का संबंध रखे।

दूसरे, संबंध तात्कालिक संबंध होते हैं। जो केवल शत्रु या मित्र दो ही संबंध होते हैं और यह संबंध कुण्डली में ग्रहों की परस्पर स्थिति व स्थान के आधार पर निर्भर करते हैं। अर्थात् प्रत्येक कुण्डली में ग्रहों की पारस्परिक तात्कालिक संबंध अलग–अलग हो सकते हैं। साथ ही यहां इसका नैसर्गिक मित्रता से कोई संबंध नहीं होता है। भले ही नैसर्गिक मित्रता में वह शत्रु हो या मित्र, यह ग्रहों के स्थान पर ही संबंध निर्भर करता है। यदि एक ग्रह से दूसरा ग्रह तीन से अधिक भाव दूर होगा या एक ही भाव में स्थित होंगे तो वह परस्पर शत्रु होंगे तथा यदि एक ग्रह से दूसरा ग्रह तीन या तीन से कम भाव दूर होगा तो वह परस्पर मित्र होगा। अर्थात् यदि एक ग्रह से दूसरा ग्रह 2,3,4 या 10,11,12 भाव में स्थित होगा तो परस्पर मित्र होंगे अन्यथा शत्रु होंगे।

तीसरा, संबंध पंचधा मैत्री होता है। यह संबंध उपर्युक्त दोनों के आधार पर निर्भर करता है तथा ये पांच प्रकार के संबंध होते हैं। शत्रु, मित्र, सम, अतिमित्र तथा अतिशत्रु। इसका संबंध निम्न नियम के आधार पर निश्चित होता है।

नैसर्गिक–मैत्री		तात्कालिक–मैत्री		पंचधा–मैत्री
मित्र	+	मित्र	=	अतिमित्र
मित्र	+	शत्रु	=	सम
सम	+	मित्र	=	मित्र
सम	+	शत्रु	=	शत्रु
शत्रु	+	शत्रु	=	अतिशत्रु

नैसर्गिक–मैत्री		तात्कालिक–मैत्री		पंचधा–मैत्री
शत्रु	+	मित्र	=	सम

ग्रहों के इन्हीं संबंधों के आधार पर फलादेश करते समय विंशोत्तरी दशा फल के महादशा और अन्तर्दशा के बीच संबंध देखकर फलादेश किया जाता है। इसी के आधार पर ग्रह की दीप्तादि अवस्था व ग्रह का बल निकाला जाता है।

5.6 शब्दावली

स्वराशि	– अपनी राशि
उच्च राशि	– अधिक प्रभावी राशि
नीच राशि	– प्रभावहीन राशि
मूल त्रिकोण	– स्वराशि से अधिक व उच्च राशि से कम प्रभावशाली राशि
नैसर्गिक	– स्थायी
उदय	– ग्रह का प्रभावी होना
अस्त	– ग्रह का निष्प्रभावी होना
तात्कालिक	– अस्थायी
पंचधा	– पांच प्रकार की

अभ्यास प्रश्न

प्रश्न 1. किसी ग्रह की उच्च राशि और नीच राशि के बीच क्या संबंध होता है ?

प्रश्न 2. मूल–त्रिकोण राशि क्या होती है?

प्रश्न 3. सूर्य और चंद्र की मूल त्रिकोण राशि बताएं।

प्रश्न 4. मूल–त्रिकोण राशि का फलादेश में क्या उपयोग है ?

प्रश्न 5. किसी ग्रह के परम अंश से क्या तात्पर्य है ?

प्रश्न 6. ग्रहों के अस्त होने से क्या अभिप्राय है ?

प्रश्न 7. ग्रहों की वक्री और मार्गी गति में नवग्रहों की अस्त सारणी बनाएं।

प्रश्न 8. ऐसा कौन सा ग्रह है जो बली अस्त नहीं होते ?

प्रश्न 9. ऐसा कौन सा ग्रह है जो कभी वक्री नहीं होता है ?

प्रश्न 10. ऐसे कौन से ग्रह है जिसके अस्त होने से विचार के लिए अशुभ माना जाता है ?

5.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्तर 1. प्रत्येक ग्रह की उच्च राशि से सातवें भाव की राशि नीच राशि होती है।

उत्तर 2. सूर्य और चंद्र को छोड़कर प्रत्येक ग्रह की दो राशियां होती हैं उनमें से एक राशि ग्रह की मूल–त्रिकोण राशि होती है।

उत्तर 3. सूर्य की मूल–त्रिकोण राशि सिंह और चंद्र की मूल–त्रिकोण राशि वृष होती है।

उत्तर 4. जब कोई ग्रह किसी कुण्डली में एक शुभ का और एक अशुभ भाव का स्वामी हो जाये तो ग्रह का शुभाशुभ फल का निर्णय संशयपूर्ण हो जाता है। ऐसी स्थिति में ग्रह का 75 प्रतिशत फल ग्रह की मूल–त्रिकोण राशि के आधार पर प्राप्त होता है और 25 प्रतिशत फल ग्रह की अन्य राशि के भाव पर निर्भर करता है।

उत्तर 5. किसी ग्रह के परम अंश से तात्पर्य है कि ग्रह पूर्ण रूप से शत–प्रतिशत–उच्च राशि के किस अंश पर होता है तथा इसी प्रकार उससे सातवें भाव की राशि में उसी अंश पर वह पूर्ण रूप से 100 प्रतिशत नीच का हो जाता है।

उत्तर 6. जब कोई ग्रह सूर्य के नजदीक आ जाता है तो वह अपना प्रभाव खो देता है और प्रत्येक ग्रह की सूर्य से दूरी के अंश अलग–अलग होते हैं। जिससे इस बात का ज्ञान होता है कि ग्रह अस्त है या नहीं। यह अंश ग्रहों की वक्री गति और मार्गी गति में भिन्न–भिन्न होते हैं।

उत्तर 7. देखें प्रस्तुत इकाई का उपखंड संख्या 8.6.1

उत्तर 8. सूर्य

उत्तर 9. चंद्र

उत्तर 10. गुरु और शुक्र ऐसे ग्रह हैं जिनके अस्त होने से 'तारा डूबा' माना जाता है तथा तारा डूबने पर विवाह अशुभ माने जाते हैं। अतः 'तारा डूबने' के समय विवाह मुहूर्त वर्जित है।

5.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. बृहत् पाराशर होरा शास्त्र

2. सरल ज्योतिष – अखिल भारतीय ज्योतिष संस्था संघ

3. फ्यूचर पंचांग – फ्यूचर पॉइंट प्रा. लि.

5.9 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. भारतीय ज्योतिष

लेखक – नेमिचंद शास्त्री

प्रकाशक – भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नयी दिल्ली

2. (सचित्र) ज्योतिष शिक्षा तृतीय फलित खण्ड (प्रथम भाग)

लेखक – श्री बी एल. ठाकुर,

प्रकाशक – मोतीलाल बनारसी दास

3. ज्योतिष सीखिए

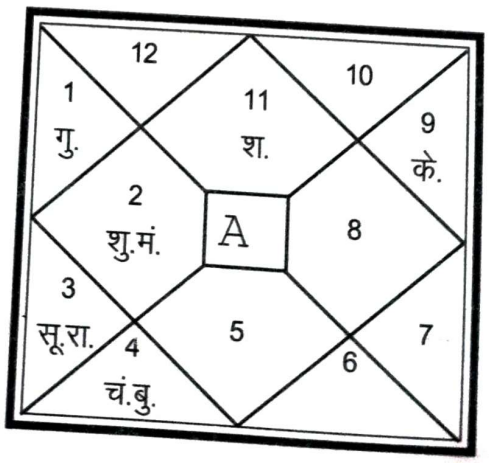
प्रकाशक – रंजन पब्लिकेशन्स

4. Learn Astrology,

Publication - Ranjan Publication

निबंधात्मक प्रश्न

प्रश्न 11. दी गयी कुण्डली के लिए नैसर्गिक, तात्कालिक व पंचधा मैत्री–सारणी बनाएं।



प्रश्न 12. नवग्रहों की नैसर्गिक–मित्रता–सारणी बनाएं।

प्रश्न 13. ग्रहों के नैसर्गिक, तात्कालिक व पंचधा मैत्री से आप क्या समझते हैं ?

9.10 निबन्धात्मक प्रश्नों के उत्तर

उत्तर 11. स्वयं करें।

उत्तर 12. देखें प्रस्तुत इकाई का उपखंड संख्या 8.7

उत्तर 13. देखें प्रस्तुत इकाई का उपखंड संख्या 8.7, 8.8, 8.9

इकाई – 6 ग्रहों की बालादि अवस्थाएं एवं उनकी दृष्टियां

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 ग्रहों की बालादि अवस्थाएं एवं उनकी दृष्टियां

6.3.1 ग्रहों की अवस्था

6.3.1.1 दीप्तादि अवस्था

6.3.1.2 बालादि अवस्था

6.3.1.3 जाग्रदादि अवस्था

6.3.2 ग्रहों के सम्बन्ध

6.3.3 ग्रहों की दृष्टियां

6.3.3.1 ग्रहों का दृष्टि चक्र

6.3.3.2 मंगल, गुरु एवं शनि की दृष्टियां

6.4 सारांश

6.5 शब्दावली

6.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

6.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

6.8 सहायक / उपयोगी ग्रन्थ

6.9 निबन्धात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

ग्रहों की मैत्री सम्बन्ध फल–कथन में महत्वपूर्ण हैं। पूर्व अध्यायों में आपने ग्रहों की विशेषताओं का परिचय प्राप्त किया। फलादेश कथन में इन तथ्यों के साथ–2 ग्रहों की अवस्थाओं का भी प्रयोग किया जाना चाहिए।

ग्रहों के फलादेश करने के लिए सबसे अधिक महत्वपूर्ण विश्लेषण यही होता है कि ग्रह शुभ है या अशुभ तथा दूसरा विश्लेषण यह करना होता है कि ग्रह बली है या निर्बल। यदि कुण्डली के आधार पर कोई ग्रह शुभ होता है तो वह शुभ फल देगा और हमेशा ही शुभ फल देगा और कोई ग्रह यदि कुण्डली के आधार अशुभ है तो हमेशा अशुभ ही फल देगा। यहां यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि कोई ग्रह नैसर्गिक रूप से चाहे शुभ ही क्यों न हो वह कुण्डली के आधार पर अशुभ फल दे सकता है और कोई नैसर्गिक रूप से ग्रह अशुभ ही क्यों न हो वह भी कुण्डली के आधार के अनुसार शुभ फल दे सकता है। कहने का तात्पर्य यह है कि गुरु जैसा शुभ ग्रह शुक्र के लग्नों के लिए मारकत्व का फल दे सकता है और शनि जैसा पापी और अशुभ ग्रह शुक्र के लग्नों के लिए जीवन दायक व शुभ फलदायक हो सकता है। इसी बात का निर्णय ज्योतिषी को अपने ज्ञान और विवेक से करना होता है। अब दूसरा पक्ष यह आता है कि ग्रह बली है या निर्बल। यदि ग्रह बली होगा और शुभ होगा तो बहुत शुभ और बली ग्रह अशुभ है तो बहुत अशुभ फल देगा। इसी प्रकार एक निर्बल ग्रह यदि शुभ होगा तो शुभ फल देने में असमर्थ होगा तथा निर्बल ग्रह यदि अशुभ होगा तो अशुभ फल देने में भी असमर्थ होगा।

प्रस्तुत इकाई में ग्रहों को फल हेतु ग्रहों की अवस्थाओं को आधार मानकर जानने का प्रयास किया गया है। इस इकाई के द्वारा ग्रहों की अवस्था से ग्रहों के बल जानने में सहायता मिलेगी।

6.2 उद्देश्य

ग्रह की शुभता और अशुभता के साथ–साथ ग्रह के बली और निर्बल होने का ज्ञान भी आवश्यक है। ग्रहों के बल जानने की कई विधियां ज्योतिष में प्रचलित हैं। परंतु ग्रहों का आरंभिक बल जानने का मूल उद्देश्य है।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप –

- ग्रहों की बालादि अवस्थाओं का परिचय प्राप्त कर पायेंगे।
- ग्रहों की जाग्रतादि अवस्थाओं का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- ग्रहों की दीप्तादि अवस्थाओं का निर्णय कर पायेंगे।
- ग्रहों की अवस्थानुसार ग्रहों के फल की मात्रा का ज्ञान हो सकेगा।

- ग्रहों की दृष्टियों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- ग्रह एक दूसरे पर कब और किस प्रकार प्रभाव डालते हैं, इसका ज्ञान प्राप्त कर पायेंगे।
- ग्रह के परस्पर संबंध का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

6.3 ग्रहों की बालादि अवस्थाएं एवं उनकी दृष्टियाँ

क्रमाद् बालः कुमारोऽथ युवा वृद्धस्तथा मृतः।
षडंशैरसमे खेटः समे ज्ञेयो विपर्ययात्।।

विषम राशियों में 6–6 अंशों से क्रम से बाल, कुमार, युवा, वृद्ध और मृत– ये पांच अवस्थायें होती हैं। अर्थात् विषम राशि में में प्रथम 6 अंश तक बाल, बाद के 12 अंश तक कुमार, बाद के 18 अंश तक युवा, बाद के 24 अंश तक वृद्ध और इसके पश्चात् 30 अंश तक मृत अवस्था होती है। सम राशियों में इसके विपरीत यानी प्रथम 6 अंश तक मृत, इसके 12 अंशों तक वृद्ध, अंनतर 18 अंशों तक युवा, 24 अंशों तक कुमार और इसके बाद 30 अंशों तक बाल– इस प्रकार से ग्रहों की अवस्थायें होती हैं। ।3।।

अवस्थाफल–विचार

फलं पादमितं बाले फलार्धं च कुमारके।
यूनि पूर्णं फलं ज्ञेयं वृद्धे किंचित् मृते च खम्।।

ग्रह बाल्यावस्था में हो तो 1 चरण फल, कुमारावस्था में 2 चरण फल, युवावस्था में पूर्ण फल, वृद्धावस्था में ग्रह हो तो अत्यंत अल्प फल एवं मृतावस्था में ग्रह हो तो फलाभाव होता है।

जाग्रदादि अवस्था

स्वभोच्चयोः[?] समसुहृद्दयोः[?] शत्रुभनीचयोः।
जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्याख्या अवस्था नामदृक्फलाः।।

ग्रह अपनी राशि या अपने उच्चस्थ हो तो जाग्रदवस्था अपने मित्रगृह में या समगृह में ग्रह बैठा हो तो स्वप्नावस्था एवं अपने शत्रुगृह में या अपनी नीच राशि में ग्रह बैठा हो तो सुषुप्ति नामक अवस्था होती है। इन अवस्थाओं के फल नामसदृश ही जानना चाहिए।

जागरे च फलं पूर्णं स्वप्ने मध्यफलं तथा।
सुषुप्तौ तु फलं शून्यं विज्ञेयं द्विजसत्तम!।।

जाग्रत् अवस्था में पूर्ण फल, स्वप्नावस्था में मध्य फल और सुषुप्ति अवस्था में शून्य फल प्राप्त होता है।

दीप्तादि अवस्था

दीप्तः स्वस्थः प्रमुदितः शान्तो दीनोऽथ दुःखितः।
विकलश्च खलः कोऽपीत्यवस्था नवधाऽपराः।।

दीप्त, स्वस्थ, मुदित, शान्त, दीन, दुःखी, विकल, खल और क्रोधी–इस प्रकार ग्रहों की नौ प्रकार की अवस्थायें होती हैं। ।7।।

दीप्तादि अवस्था का लक्षण

स्वोच्चस्थः खेचरो दीप्तः स्वर्क्षे स्वस्थोऽधिमित्रभे।
मुदितो मित्रभे शान्तः समभे दीन उच्यते।।
शत्रुभे दुःखितः प्रोक्तो विकलः पापसंयुतः।
खलः खलगृहे ज्ञेयः कोपी, स्यादर्कसंयुतः।।
यादृशो जन्मकाले यः खेटो यद्भावगो भवेत्।
तादृशं तस्य भावस्य फलमूह्यं द्विजोत्तम!।।

ग्रह अपने उच्च राशि में हो तो दीप्त, स्वराशिस्थ हो तो स्वस्थ, अपने अधिमित्र की राशि में मुदित, मित्र राशि में शान्त, समराशि में दीन, शत्रुराशि में दुःखी, पाप ग्रह के साथ में हो तो विकल, पाप ग्रह की राशि में खल और सूर्य के साथ रहने पर क्रोधी माना जाता है। इस प्रकार ग्रहों की 9 प्रकार की अवस्थायें होती हैं। जन्मकाल में ग्रह जिस अवस्था में हो, उसी के अनुरूप उस भाव का शुभ या अशुभ फल जानना चाहिए।

6.3.1 ग्रहों की अवस्था

महर्षि पाराशर ने ग्रहों की मात्रात्मक फल देने की क्षमता का अनुमान लगाने के लिये विभिन्न अवस्थाएं बतलाई हैं। मुख्यतः

1. दीप्तादि अवस्था
2. बालादि अवस्था
3. जाग्रदादि अवस्था

6.3.1.1 दीप्तादि अवस्था :

यह नौ अवस्थाएं होती हैं। राशि में ग्रहों की स्थिति के आधार पर 9 अवस्थाएं होती हैं जो निम्न प्रकार हैं :

ग्रह की स्थिति	अवस्था
उच्च राशि	दीप्त
स्वराशि	स्वस्थ
अतिमित्र	मुदित
मित्र	शान्त
सम	दीन
शत्रु	दुःखी
पाप ग्रह	विकल
अति शत्रु	खल
सूर्य से अस्त	कोपी

दीप्त ग्रह की दशान्तर्दशा में राज्य लाभ, अधिकार प्राप्त, धन, वाहन, स्त्री, पुत्रादि का लाभ व आदर सत्कार व राज्य सम्मान प्राप्त होता है।

स्वस्थ अर्थात स्वक्षेत्री ग्रह की दशान्तर्दशा के स्वास्थ्य लाभ, धन, सुख, विद्या यश स्त्री वाहन, भूमि आदि का लाभ होता है।

मुदितावस्था (अधि मित्र की राशि) में स्थित ग्रह की दशान्तर्दशा में वस्त्र, आभूषण, पुत्र, धन, वाहन आदि का लाभ होता है।

शान्तावस्था (मित्रराशि) में स्थित ग्रह की दशान्तर्दशा में सुख, धर्म, भूमि, पुत्र, स्त्री, वाहन, सम्मान प्राप्त होता है।

दीनावस्था (समग्रह की राशि) में स्थित ग्रह की दशान्तर्दशा में स्थान परिवर्तन, बन्धुओं से विरोध, निन्दित, हीन स्वभाव, मित्र साथ छोड़ देते हैं, रोग आदि होने की सम्भावना होती है।

दुःखावस्था (शत्रुक्षेत्री) ग्रह की दशान्तर्दशा में जातक को कष्ट प्राप्त होते हैं। विदेश यात्रा, चोरी, अग्नि या रोगादि से धन हानि होती है।

विकलावस्था में (पापयुक्त ग्रह) की दशान्तर्दशा में मन में हीन भावना, मित्रों की मृत्यु, परिवार जनों की मृत्यु, स्त्री, पुत्र, वाहन, भूमि, वस्त्रादि की हानि होती है।

खलावस्था पाप ग्रह की राशि में स्थित ग्रह की दशान्तर्दशा में कलह, वियोग (बन्धु,माता या पिता आदि की मृत्यु) शत्रुओं से पराजय, धन, भूमि, वाहन की हानि होती है।

कोपी अवस्था सूर्य से अस्त ग्रह की दशान्तर्दशा में अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। विद्या, धन, भूमि, वाहन, पुत्र, स्त्री, बन्धुओं से पीड़ा होती है।

6.3.1.2 बालादि अवस्था :

बालादि अवस्था में हम ग्रह के अंशों के अनुसार फल कथन करते हैं। 6^0–6^0 अंश की यह अवस्था होती है। विषम एवं सम राशियों के अनुसार ग्रहों की अवस्थाएं निम्न प्रकार होती हैं :–

विषम राशि में ग्रह के अंश	अवस्था	सम राशि में ग्रह के अंश
0^0–6^0	बाल	24^0–30^0
6^0–12^0	कुमार	18^0–24^0
12^0–18^0	युवावस्था	12^0–18^0
18^0–24^0	वृद्धावस्था	6^0–12^0
24^0–30^0	मृतावस्था	0^0–6^0

बालावस्था में ग्रह का चौथाई फल, कुमारावस्था में आधा, युवावस्था में पूरा, वृद्धावस्था में मामूली तथा मृतावस्था में शून्य फल प्राप्त होता है।

6.3.1.3 जाग्रदादि अवस्था :

विषम राशि में ग्रह के अंश	विषम राशि	सम राशि में ग्रह के अंश
0^0–10^0	जाग्रत	20^0–30^0
10^0–20^0	स्वप्न	10^0–20^0
20^0–30^0	सुषुप्ति	0^0–10^0

जाग्रत अवस्था में पूर्ण फल, स्वप्न में मध्यम तथा सुषुप्ति अवस्था में शून्य फल मिलता है।

इस प्रकार ग्रह के मात्रात्मक फल का विचार बृहत् पाराशर होरा शास्त्र में मिलता है। महर्षि पाराशर ने ग्रह के मात्रात्मक बल का विचार ग्रह भाव बल (षष्ठ बल) आदि से तथा षष्ठ वर्गीय बल से भी किया है। लिखने का अर्थ केवल इतना ही है कि ग्रह के बल का भी उतना ही महत्व है जितना किसी अन्य बल का। इसलिए फल कथन से पहले ग्रह की अवस्था तथा अंशों का ध्यान रखकर मात्रात्मक फल का अनुमान करना चाहिये। क्योंकि दशान्तर्दशा के द्वारा दोनों तत्त्वों का समावेश करके फल कथन करना चाहिये।

6.3.2 ग्रहों के सम्बन्ध

ग्रहों के चार प्रकार के सम्बन्ध माने हैं। कुछ आचार्यों ने पांच प्रकार के सम्बन्ध भी कहे हैं।

1. दो ग्रहों में परस्पर राशि परिवर्तन का योग हो, अर्थात् 'क' ग्रह 'ख' ग्रह की राशि में बैठा हो और 'ख' ग्रह 'क' ग्रह की राशि में बैठा हो तो यह अति उत्तम सम्बन्ध होता है।

2. जब दो ग्रह परस्पर एक–दूसरे को देख रहे हों अर्थात् 'क' ग्रह 'ख' ग्रह को देख रहा हो और 'ख' ग्रह 'क' ग्रह को देख रहा हो तो यह मध्यम सम्बन्ध माना जाता है।

3. दोनों ग्रहों में से एक ग्रह दूसरे की राशि में बैठा हो और दोनों एक–दूसरे को देखते हों तो यह तीसरा सम्बन्ध माना जाता है।

4. दोनों ग्रह एक ही राशि में संयुक्त होकर बैठे हों तो यह चौथे प्रकार का सम्बन्ध होता है और अधम कहा गया है।

5. जब दो ग्रह एक–दूसरे से त्रिकोण (पांचवें–नवें) स्थान पर स्थित हों तो यह मतान्तर से पांचवां सम्बन्ध होता है।

6.3.3 ग्रहों की दृष्टियां

सभी ग्रह अपने स्थान से सातवें स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं लेकिन मंगल अपने स्थान से चौथे और आठवें स्थानों को, गुरु अपने स्थान से पांचवें और नवें स्थानों को व शनि अपने स्थान से तीसरे और दसवें स्थानों को भी पूर्ण दृष्टि से देखता है।

कुछ प्राचीन आचार्यों ने राहु–केतु की दृष्टि को भी मान्यता दी है, लेकिन महर्षि पाराशर ने इनकी कोई दृष्टि नहीं मानी है। अन्य आचार्यों के मत से राहु अपने स्थान से सातवें, पांचवें और नवें स्थानों को पूर्ण दृष्टि से देखता है। ऐसी ही केतु की भी दृष्टि होती है।

प्रत्येक ग्रह अपने स्थान से तीसरे और दसवें स्थानों को एक पाद दृष्टि से, पांचवें और नवें को दो पाद दृष्टि से तथा चौथे और आठवें स्थान को तीन पाद दृष्टि से देखता है।

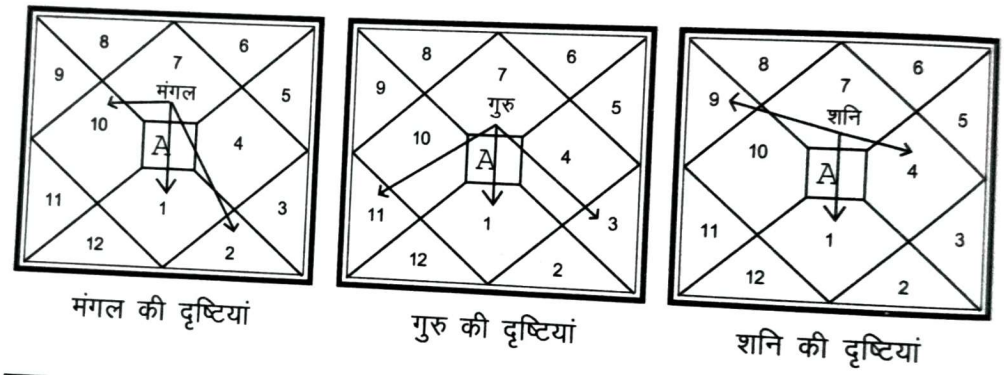
सूर्य और मंगल की ऊर्ध्व दृष्टि है, बुध और शुक्र की तिरछी, चन्द्रमा और गुरु की बराबर (सम) तथा राहु और शनि की नीची दृष्टि है।

6.3.3.1 ग्रहों का दृष्टि–चक्र

ग्रह	दृष्टियां
सूर्य	7

ग्रह	दृष्टियां
चंद्र	7
मंगल	4, 7, 8
बुध	7
बृहस्पति	5, 7, 9
शुक्र	7
शनि	3, 7, 10
राहु	5, 7, 9
केतु	5, 7, 9

6.3.3.2 मंगल, गुरु एवं शनि की दृष्टियां



6.4 सारांश

किसी भी ग्रह का फल दो प्रकार से देखा जाता है। मात्रात्मक एवं गुणात्मक। गुणात्मक फल इस बात पर निर्भर करता है कि ग्रह नैसर्गिक व तात्कालिक रूप से शुभ है या अशुभ। यदि नैसर्गिक शुभ होगा तो योग के अनुसार शुभ फल देगा और यदि तात्कालिक रूप से शुभ होगा तो दशा के अनुसार शुभ फल देगा और ऐसा ही ग्रह के अशुभ होने पर अशुभ फल देगा। अब प्रश्न यह उठता है कि ग्रह कितना शुभ फल देगा या कितना अशुभ फल देगा। इसका अनुमान लगाने के लिए यह देखना पड़ता है कि ग्रह में कितना बल है। बली ग्रह अधिक फल देगा चाहे वह शुभ हो या अशुभ और निर्बल ग्रह कम फल देगा वह भी चाहे शुभ हो या अशुभ। ग्रहों के बल को आंकने के लिए ग्रहों की अवस्थाओं को देखना होता है। यह मुख्यतः तीन प्रकार से देखी जा सकती है। बालादि अवस्था के आधार पर, दीप्तादि अवस्था के आधार पर या जाग्रदादि अवस्था के आधार पर। यह

अवस्थाएं ग्रहों[?] की राशि सम है या विषम तथा उसके अंशों पर निर्भर करती है। जैसे बालादि में पांच प्रकार की अवस्थाएं हैं तो 6–6 अंशों के बराबर विभाग बनाकर उसके आधार पर बाल, कुमार, युवा, वृद्ध और मृत अवस्थाएं होती है। युवा में सर्वाधिक[?] फल तथा बाल व मृत अवस्था में न्यूनतम फल की प्राप्ति होती है एवं कुमार एवं वृद्ध अवस्था में मध्यम फल की प्राप्ति होती है।

इसी प्रकार, ग्रह किस राशि में स्थित है उसके आधार पर दीप्तादि अवस्था, निर्धारित की जाती है। यह नौ प्रकार की होती हैं।

जाग्रदादि तीन प्रकार की अवस्थाएं होती हैं यह 10–10 अंशों में विभाजित होती हैं। ये अवस्थाएं हैं– जाग्रत और सुषुप्ति, स्वप्न। जाग्रत में सर्वाधिक, स्वप्न में उससे कम और सुषुप्ति अवस्था में न्यूनतम फल प्राप्त होता है।

6.5 शब्दावली

बालादि – बाल एवं अन्य
दीप्तादि – दीप्त एवं अन्य
सम – 2 से विभाजित होने वाली संख्याएं
विषम – 2 से विभाजित न होने वाली संख्याएं
अवस्था – स्थिति
युवा – जवान
वृद्ध – बूढ़ा
मृत – मरे हुए के समान
बाल – बालक
सुषुप्त – न सोया न जगा

अभ्यास प्रश्न

प्रश्न 1. ग्रह की अवस्था से क्या तात्पर्य है ?

प्रश्न 2. ग्रह की अवस्थाएं कितने प्रकार की होती हैं ?

प्रश्न 3. बालादि अवस्था किसे कहते हैं ?

प्रश्न 4. बालादि में वह कौन सी अवस्था होती है जब ग्रह 12 से 18 अंश के बीच होता है।

प्रश्न 5. बालादि की किस अवस्था में सर्वाधिक और न्यूनतम फल प्राप्त होता है।

प्रश्न 6. दीप्तादि अवस्थाएं कितने प्रकार की होती हैं ?

प्रश्न 7. यदि ग्रह सूर्य से अस्त हो तो ग्रह की कौन सी दीप्तादि अवस्था होगी ?

प्रश्न 8. यदि गुरु कर्क राशि में हो तो कौन सी दीप्तादि अवस्था होगी ?

प्रश्न 9. ग्रह की 'दीन अवस्था' किस परिस्थिति में होती है ?

प्रश्न 10. जाग्रदादि अवस्था में ग्रह न्यूनतम और अधिकतम फल कब देता है ?

प्रश्न 11. जाग्रदादि अवस्था में एक विभाग कितने अंशों का होता है ?

प्रश्न 12. ग्रह की सुषुप्ति अवस्था किस परिस्थिति में होती है ?

प्रश्न 13. किन ग्रहों की सप्तम दृष्टि के अतिरिक्त भी दृष्टि होती है ?

प्रश्न 14. सभी ग्रहों की कौन सी दृष्टि होती है ?

प्रश्न 15. राहु और केतु की दृष्टियां बताएं।

6.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्तर 1. ग्रह की अवस्था के आधार पर ग्रह के बल का अनुमान लगाया जाता है।

उत्तर 2. ग्रह की अवस्था तीन प्रकार की होती है।

उत्तर 3. इस इकाई का उपखंड 6.1.2 देखें।

उत्तर 4. युवा अवस्था।

उत्तर 5. युवा अवस्था में सर्वाधिक फल एवं बाल तथा मृत अवस्था में न्यूनतम फल की प्राप्ति होती है।

उत्तर 6. दीप्तादि अवस्थाएं नौ प्रकार की होती हैं।

उत्तर 7. कोपी अवस्था।

उत्तर 8. दीप्त अवस्था।

उत्तर 9. ग्रह सम राशि में स्थित हो तो ग्रह की दीन अवस्था होती है।

उत्तर 10. जाग्रत में सर्वाधिक और सुषुप्ति अवस्था में न्यूनतम फल मिलता है।

उत्तर 11. जाग्रदादि अवस्था में एक विभाग 10 अंशों का होता है।

उत्तर 12. जब ग्रह विषम राशि में 20 से 30 अंश और सम राशि में 0 से 10 अंश पर होता है।

उत्तर 13. गुरु, मंगल, शनि मतांतर से राहु और केतु।

उत्तर 14. सभी ग्रहों की सप्तम दृष्टि होती है।

उत्तर 15. राहु और केतु की मतांतर से 5, 7, 9 दृष्टियां होती है।

6.7 संदर्भ ग्रंथ / सूची

1. बृहत् पाराशर होरा शास्त्र

2. सरल ज्योतिष – अखिल भारतीय ज्योतिष संस्था संघ

6.8 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. भारतीय ज्योतिष

लेखक – नेमिचंद्र शास्त्री

2. वृहत् पाराशर होरा शास्त्र

3. अखिल भारतीय ज्योतिष संस्था संघ द्वारा प्रकाशित 'सरल ज्योतिष'

निबंधात्मक प्रश्न

प्रश्न 16. ग्रहों की बालादि, जाग्रदादि, दीप्तादि अवस्थाओं का विस्तार सहित वर्णन करें।

प्रश्न 17. नवग्रहों की दृष्टियों का वर्णन करें।

6.9 निबन्धात्मक प्रश्नों के उत्तर

उत्तर 16. इस इकाई का उपखंड 6.1 देखें।

उत्तर 17. इस इकाई का उपखंड 6.3 देखें।

ब्लॉक - 3

भाव व राशिस्थ भावेश एवं ग्रह- फल

इकाई–7 तन्वादि द्वादश भाव–कारकत्व

7.1 प्रस्तावना
7.2 उद्देश्य
7.3 भाव परिचय
7.3.1 प्रथम भाव
7.3.2 द्वितीय भाव
7.3.3 तृतीय भाव
7.3.4 चतुर्थ भाव
7.3.5 पंचम भाव
7.3.6 षष्ठ भाव
7.3.7 सप्तम भाव
7.3.8 अष्टम भाव
7.3.9 नवम भाव
7.3.10 दशम भाव
7.3.11 एकादश भाव
7.3.12 द्वादश भाव
7.5 शब्दावली
7.4 सारांश
7.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
7.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
7.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
7.9 निबन्धात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

पूर्व इकाईयों में आपने ग्रहों व राशियों की विशेषताओं व गुण–धर्म के विषय में पढ़ा। ग्रहों के उच्च–नीच उनकी बालादि अवस्थाओं तथा राशियों के प्रकृति तत्वादि जानने के बाद जन्म पत्रिका के 12 भावों के कारकत्व के विषय में ज्ञान होना आवश्यक है।प्रस्तुत इकाई में द्वादश भावों में व्यक्ति के जीवन से सम्बन्धी तत्त्वों और जातक की पत्रिका में बारह भावों की विशेषताओं का अध्ययन किया जाएगा। आगामी इकाई में केन्द्र त्रिकोण व त्रिषडायादि भावों के विभाजन पर प्रकाश डाला जाएगा।

7.2 उद्देश्य

जातक की जन्मपत्रिका माध्यम से फलादेश के लिए राशि व ग्रह स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करने के बाद यह आवश्यक हो जाता है कि शिक्षार्थी शरीर–प्रतिष्ठा–व्यक्तित्व के परिचायक प्रथम भाव, धन, कुटुम्ब–वाणी के प्रतीक द्वितीय भाव तथा इसी प्रकार सभी 12 भावों का परिचय प्राप्त करें।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

- लग्न से परिचित हो सकेंगे।
- भाव की परिभाषा लिख पायेंगे।
- भावों का विभाजन कर पायेंगे।
- भावों के उदय–अस्त स्थानों का परिचय प्राप्त कर पायेंगे।
- प्रथम भाव से द्वादश भाव पर्यन्त 12 भावों की विशेषताओं व उनके कारकत्व का ज्ञान प्राप्त कर पायेंगे।

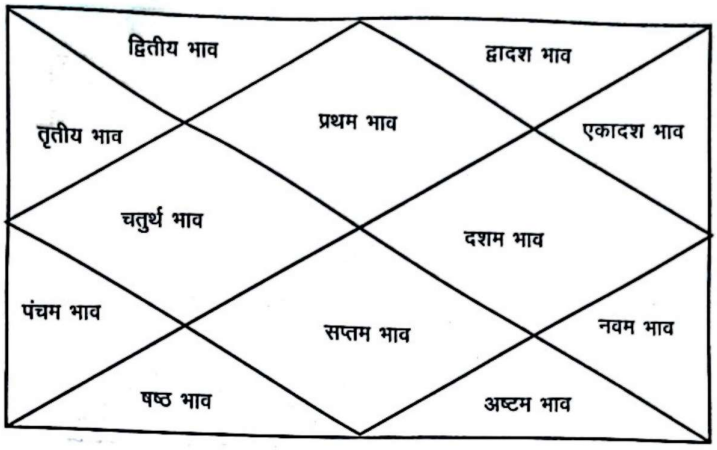
7.3 भाव–परिचय

किसी समय विशेष पर पूर्वी क्षितिज में उदित होने वाली राशि उस समय का लग्न है। यह समय यदि बालक के जन्म का है तो इसे जन्म–लग्न किसी कार्य विशेष का है तो मुहूर्त लग्न कहलाता है। इसी लग्न, स्थान को प्रथम भाव कहते हैं। लग्न की राशियाँ पृथ्वी की गति के अनुसार परिवर्तित होती रहती हैं और लगभग 2–घण्टे बाद उदय क्षितिज पर दूसरी राशि होती है।

जैसा कि प्रथम पुस्तक में स्पष्ट किया गया है कि एक भाव में 30° होते हैं। लग्न स्पष्ट से 15° पूर्व और 15° बाद एक भाव प्रथम भाव होता है। यदि भाव मध्य में राशि का मध्य होगा तो सम्पूर्ण भाव में एक राशि होगी। लेकिन लग्न मध्य में यदि राशि के आरम्भ या अन्त के अंश रहेंगे

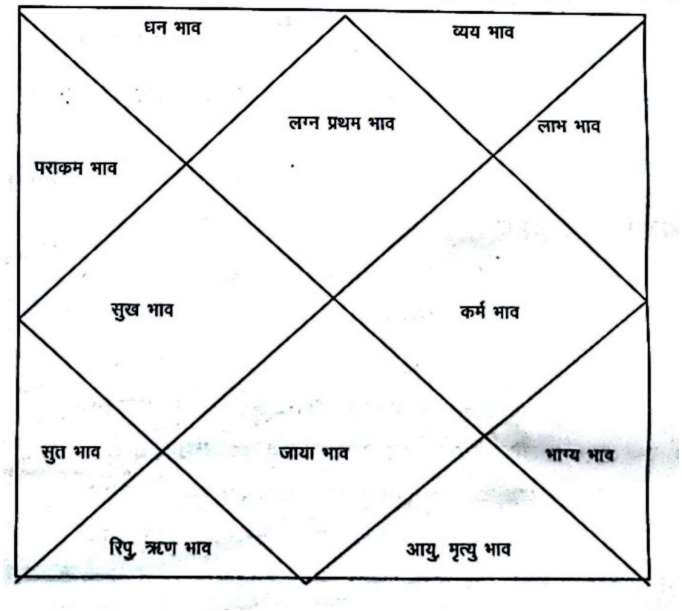
तो दो राशियों के लगभग समान अंश भाव में पड़ेंगे और भाव मध्य में पड़ने वाली राशि का स्वामी भावेश अर्थात् लग्नेश माना जाएगा।

उदाहरण के लिए यदि लग्न स्पष्ट मेष राशि के 28 अंश 20 अंश कला पर हो तो प्रथम भाव मेष राशि के 13 अंश 20 अंश कला से आरम्भ होगा और प्रथम भाव का अन्त व द्वितीय भाव का आरम्भ वृष राशि के 13 अंश 20 कला से हुआ इस प्रकार 30 अंश में प्रत्येक भाव का विभाजन होता है। भाव विस्तार ज्ञात करने की प्रक्रिया की व्याख्या प्रथम पुस्तक में लग्न व भाव स्पष्ट प्रकरण में की गई है।

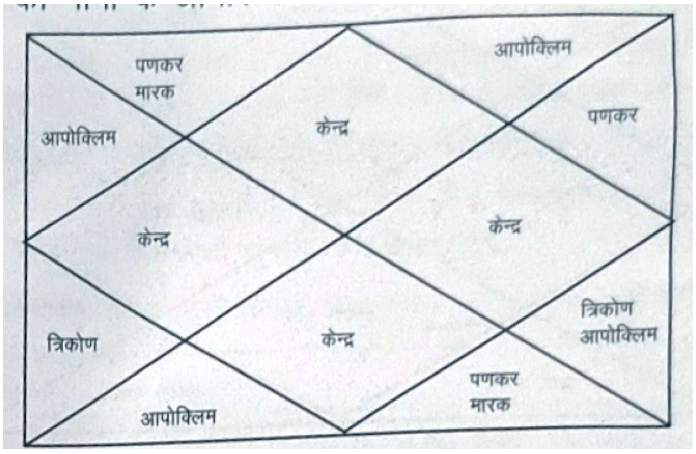


प्रथम भाव अर्थात् लग्न स्थान को तनु भाव कहते हैं।

प्रथम भाव से आगे कोण में दूसरे स्थान को द्वितीय भाव धन स्थान अथवा कुटुम्ब स्थान कहते हैं। इससे आगामी भाव तृतीय स्थान अर्थात् सहोदर भाव या पराकम भाव है चतुर्थ भाव द्वितीय केन्द्र है, इसे सुख स्थान व माता का स्थान कहा जाता है। पंचम भाव चतुर्थ से आगे त्रिकोण में है इसे सुत स्थान कहते हैं। षष्ठ स्थान रोग रिपु व ऋण स्थान कहलाता है। लग्न के सामने सप्तम स्थान जाया स्थान कहा गया है। अष्टम भाव सप्तम से आगे का कोण स्थान है, इसे आयु और मृत्यु भाव कहते हैं। इसका आगामी त्रिकोण स्थान नवम भाव भाग्य भाव के नाम से प्रसिद्ध है। दशम स्थान को कर्म स्थान या राज्य स्थान की संज्ञा दी गई है। एकादश भाव आय अथवा लाभ का प्रतीक हैं। द्वादश भाव व्यय को इंगित करता है। इस प्रकार बारह भावों का विभाजन किया गया है एवं भाव सम्बन्धी किसी मुख्य वस्तु से इसका नाम रखा गया है। इस भाव विभाजन को चित्र के माध्यम से अधिक आसानी से सीखा जा सकता है



12 भावों को नामों के आधार पर विभाजित भी किया गया है



केन्द्र स्थान– प्रथम भाव, चतुर्थ, सप्तम भाव व दशम भाव केन्द्र स्थान कहे गये हैं प्रथम भाव, चतुर्थ, सप्तम भाव व दशम भाव उत्तरोत्तर बली केन्द्र हैं। चारों केन्द्र जीवन के लिए महत्वपूर्ण हैं–

प्रथम केन्द्र शरीर सुख, द्वितीय केन्द्र–अर्थात् चतुर्थ भाव–मातृसुख, भूमि, भवन, सम्पूर्ण ऐश्वर्य, तृतीय केन्द्र अर्थात सप्तम भाव भार्या सुख, चतुर्थ केन्द्र अर्थात पितृ सुख और राज्य लाभ को इंगित करते हैं। केन्द्र स्थानों को विष्णु स्थान कहा गया है।

त्रिकोण स्थान–पंचम स्थान व नवम को त्रिकोण की संज्ञा दी गई है। प्रथम स्थान त्रिकोण व केन्द्र दोनों माना गया है। पंचम भाव व नवम भाव भी उत्तरोत्तर बली हैं। पंचम भाव बुद्धि और नवम भाव भाग्य है। प्रथम स्थान केन्द्र होने के साथ–2 त्रिकोण भी है। त्रिकोण भावों को लक्ष्मी स्थान कहा है। इस प्रकार प्रथम विष्णु व द्वितीय लक्ष्मी रूप है।

पणफर – द्वितीय भाव, पंचम भाव, अष्टम व एकादश भाव को पणफर कहा गया है।

आपोक्लिम –तृतीय भाव, षष्ठ भाव, नवम भाव व द्वादश भाव आपोक्लिम कहलाते है।

त्रिक स्थान–षष्ठ भाव, अष्टम भाव व द्वादश भाव त्रिक स्थान कहे गये हैं।

उपचय स्थान –तृतीय भाव, शष्ठ भाव, दशम व एकादश भाव उपचय स्थान हैं। इनके अतिरिक्त अन्य भाव अनुपचय स्थान हैं।

भावों की विविध नाम संज्ञायें अध्ययन में पुनः–2 उपयोग होने पर सुविधा की दृष्टि से उल्लिखित हैं।

लग्न स्थान को उदय स्थान भी कहते हैं। इससे सप्तम स्थान अस्त लग्न है। चतुर्थ भाव को पाताल तथा दशम स्थान आकाश को कहते हैं।

देहं रूपं च ज्ञानं च वर्णं चैव बलाऽबलम्।
सुखं दुःखं स्वभावं च लग्नभावान्निरीक्षयेत्।।

1. शरीर, रूप, ज्ञान बलाबल, सुख–दुख और स्वभाव का लग्न भाव से विचार किया जाता है।

धनधान्यं कुटुम्बं च मृत्युजालममित्रकम्।
धातुरत्नादिकं सर्वं धनस्थानान्निरीक्षयेत्।।3।।

2. धन, धान्य, कुटुम्ब, मृत्यु, शत्रु, धातु रत्नादि को धन–भाव से देखा जाता है।

विक्रमं भृत्यभ्रात्रादि चोपदेशप्रयाणकम्।
पित्रोर्वै मरणं विज्ञो दुश्चिक्याच्च निरीक्षयेत्।।

3.पराक्रम, नौकर–चा कर, भाई, उपदेशादि, यात्रा, पिता की मृत्यु तृतीय भाव द्वारा ज्ञात की जाती है।

वाहनान्यथ बन्धूंश्च मातृसौख्यादिकान्यपि।
निधिं क्षेत्रं गृहं चापि चतुर्थात् परिचिन्तयेत्।।

4. वाहनादि, बन्धु–बान्धव, माता का सुख, एकत्रित धन, खेती और भवन का विचार चतुर्थ भाव से किया जाता है।

यन्त्र–मन्त्रौ तथा विद्यां बुद्धेश्चैव प्रबन्धकम्।
पुत्रराज्यापभ्रंशादीन् पश्येत् पुत्रालयाद् बुधः।।

5. यन्त्र, मन्त्र विद्या, बुद्धि प्रबन्धन, सन्तान, राज्यच्युति आदि को पुत्र भाव से देखा जाता है।

मातुलान्तकशङ्कानां शत्रूंश्चैव व्रणादिकान्।
सपत्नीमातरं चापि षष्ठमावान्निरीक्षयेत्।।7।।

6. मामा की मृत्यु, शंका, रोग, शत्रु, फोड़ा–फुन्सी, सौतेली माता का विचार षष्ठ भाव से किया जाता है।

जायामध्वप्रयाणं च वाणिज्यं नष्टवीक्षणम्।
मरणं च स्वदेहस्य जायामावान्निरीक्षयेत्।।

7. पत्नी–पति, यात्रा, व्यापार, नष्ट वस्तु, मारक विचार सप्तम भाव से करना चाहिए।

आयू रणं रिपुं चापि दुर्गं मृतघनं तथा।
गत्यनुकादिकं सर्वं पश्येद्रन्ध्राद्विचक्षणः।।

8. आयु, युद्ध, शत्रु, दुर्ग, वसीयत से प्राप्त धन, पूर्व जन्म व इस जन्म का विवरण ये सब अष्टम भाव से विचार करना चाहिए।

भाग्यं श्यालं च धर्मं च भ्रातृपत्न्यादिकांस्तथा।
तीर्थयात्रादिकं सर्वं धर्मस्थानान्निरीक्षयेत्।।

9. नवम भाव से भाग्य, साला, भाई की स्त्री तथा तीर्थ यात्रा आदि का विवेचन धर्म स्थान से किया जाता है।

राज्यं चाकाशवृत्तिं च मानं चैव पितुस्तथा।
प्रवासस्य ऋणस्यापि व्योमस्थानान्निरीक्षणम्।।

10. दशम भाव से राज्य, आकाश, सम्मान; प्रतिष्ठा, पिता व प्रवास का विचार किया जाता है।

नानावस्तुभवस्यापि पुत्रजायादिकस्य च।
आयं वृद्धिं पशूनां च भवस्थानान्निरीक्षणम्।12।।

11. लाभ भाव से विविध वस्तुओं की प्राप्ति, पुत्र, स्त्री पशुओं की वृद्धि तथा लाभ आदि का ज्ञान किया जाता है।

व्ययं च वैरिवृत्तान्त–रिःफमन्त्यादिकं तथा।
व्ययाच्चैव हि ज्ञातव्यमिति सर्वत्र धीमता।।

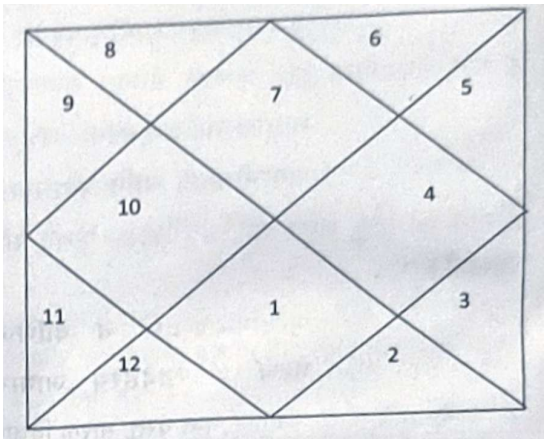
12. व्यय, शत्रु विवरण एवं सभी खर्च सम्बन्धी विचार विद्वान् द्वादश भाव से करें। किसी भी भाव का फल जानने के लिए भाव की राशि, भाव में बैठे ग्रह, भाव स्वामी की स्थिति, भाव स्वामी के साथ में बैठे ग्रह और भाव स्वामी को देखने वाले ग्रहों को देखा जाता है।

भाव–भावेश–विशेष

किसी भाव विशेष का स्वामी भावेश कहलाता है। यथा लग्न भाव में स्थित राशि के स्वामी को लग्नेश कहते हैं। धन भाव अर्थात् द्वितीय भाव में स्थित राशि के स्वामी को द्वितीयेश या धनेश कहते हैं। इसी प्रकार प्रत्येक भाव स्वामी के सम्बन्ध में कहा गया है। यदि तुला लग्न की जन्म पत्रिका है तो जन्म कुण्डली के भावेश की स्थिति निम्नवत् रहेगी।

1. लग्नेश– तुला राशि स्वामी शुक्र
2. द्वितीयेश या धनेश–मंगल
3. तृतीयेश या पराक्रमेश –गुरु
4. चतुर्थेश या सुखेश–शनि
5. पंचमेश या सुतेश–शनि
6. षष्ठेश–गुरु
7. सप्तमेश या जामेश–मंगल
8. अष्टमेश–शुक्र
9. नवमेश या भाग्येश–बुध
10. दशमेश या कर्मेश–चन्द्रमा
11. एकादशेश या लाभेश –सूर्य

12 द्वादशेश या व्ययेश–बुध



यो यो भावपतिर्नष्टस्त्रिकेशाद्यैश्च संयुतः।
भावं न वीक्षते सम्यग्ग्रहो वापि मृतो यदा।।
स्थविरो वा भवेत् खेटः सुप्तो वापि प्रपीड़ितः।
तदा तद्भावजं सौख्यं नष्टं ब्रूयाद्विशङ्कितः।।

यदा सौम्यग्रहैर्दृष्टो भावो भावेशसौम्ययुक्।
युवा प्रबुद्धराजस्थः कुमारो वापि तद् भवेत्।।
ईशेक्षणवशात्तत्र भावसौख्यं वदेद् बुधः।
एवं हि सर्वभावेषु ज्ञेयो साधारणो नयः।।

जिन–जिन भावों के स्वामी अस्त हों त्रिकेश (6,8,12 के स्वामी) से युत हों भाव को नहीं देखते हो, अवस्था में मृत, वृद्ध तथा सुप्त या पीड़ित हो तो उन भावों के फल नष्ट हो जाते हों। जो भाव शुभ ग्रह से दृष्ट हो, अपने स्वामी शुभ ग्रह से युत हो जो भाव भावेश युवा, प्रबुद्ध, कुमार अवस्था में हो ऐसे भावेश द्वारा देखे जाने पर भाव की वृद्धि होती है। प्रत्येक भाव के लिए यह सिद्धान्त लागू होते हैं।

इस आधार पर आगामी भावों के फलादेश पढ़ने में सुविधा होगी।

7.3.1 प्रथम अर्थात् तनु भाव फल

सपापो देहपाऽष्टारिव्ययगो देहसौख्यहृत् ।
केन्द्रे कोणे स्थितोऽङ्गेशः सदा देहसुखं दिशेत्।।
लग्ने सौम्ये सुरूपः स्यात् क्रूरे रूपविवर्जितः।
सौम्यखेटैर्युते दृष्टे लग्ने देहसुखान्वितः।।

लग्न भाव का स्वामी पाप ग्रह से युक्त होकर आठवें, बारहवें या छठे भाव में स्थित हो तो शरीर सुखी नहीं होता। यही नियम प्रत्येक भाव के लिए है अर्थात् जिस भाव का स्वामी पाप ग्रह के साथ 6,8,12 भाव में स्थित हो उस भाव के फल का अभाव होता है।

लग्नेश, पापग्रह चन्द्रमा से युक्त हो और लग्न में ही स्थित हो तो बालक रोगी होता है। वही लग्नेश आदि केन्द्र त्रिकोण और लाभ भाव में हो तो रोग का नाश करता है।

लग्नेश अस्त, नीच, शत्रुग्रही होने पर रोग कारक होता है शुभ ग्रहों के केन्द्र त्रिकोण में स्थित होने पर सभी रोगों को नष्ट कर देता है।

लग्न और चन्द्रमा क्रूर ग्रह से दृष्ट हो या पाप ग्रह के साथ हो और शुभ ग्रह की दृष्टि में न हों तो व्यक्ति को शरीर सुख नहीं होता। लग्न सौम्य ग्रह से युक्त होने पर जातक सुन्दर रूप वाला होता है। और लग्न में पाप ग्रह स्थित होने पर व्यक्ति देखने में सुरूप नहीं होता। लग्न शुभ ग्रह से युत तथा शुभ ग्रह से देखा जाता हो तो शरीर का सुख होता है।

7.3.2 धन अर्थात् द्वितीय भाव

धनभावफलं वच्मि श्रृणु तत्त्वं[?] द्विजसत्तम।
धनेशो धनभावस्थः केन्द्रकोणगतोऽपि वा।
धनवृद्धिकरो ज्ञेयस्त्रिकस्थो धनहानिकृत्।।

धनेश यदि धन भाव में ही स्थित हो तो या धनेश केन्द्र–त्रिकोण में गया हो तो धन–वृद्धि होती है धन भाव का स्वामी त्रिक स्थान अर्थात् 6,8,12 भाव में स्थित हो तो धन की हानि होती है। धन भाव में शुभ ग्रह धनदायी और पाप ग्रहों की स्थिति धन की हानि करती है।

नेत्रेशे बलसंयुक्ते शोभनाक्षो भवेन्नरः।
षष्ठाष्टमव्ययस्थे च नेत्रवैकल्यवान् भवेत्।।
धनेशे पापसंयुक्ते धने पापसमन्विते।
पिशुनोऽसत्यवादी च वातव्याधिसमन्वितः।।

द्वितीयेश बली होकर सौम्य ग्रह से सम्बन्ध बनाए तो मनुष्य सुन्दर नेत्र वाला होता है। द्वितीयेश लग्न से छठे, आठवें व बारहवें भाव में गया हो तो जातक नेत्र रोगी होता है। धन भाव का स्वामी पाप ग्रह के साथ हो और धन भाव में भी पाप ग्रहों की स्थिति हो तो जातक मिथ्या बोलने वाला और वात रोगी होता है।

7.3.3 सहज अर्थात् तृतीय भाव

अथ विक्रमभावस्य फलं वक्ष्यामि भो द्विज।
सहजे सौम्ययुग्दृष्टे भ्रातृमान् विक्रमी नरः।।
स–मौमो[?] भ्रातृभावेशो भ्रातृभावं प्रपश्यति।
भ्रातृक्षेत्रगतो वाऽपि भ्रातृसौख्यं विनिर्दिशेत्।।
पापयोगेन तौ पापक्षेत्रयोगेन वा पुनः।
उत्पाट्य सहजान् सद्यो निहन्तारो न संशयः।।
स्त्रीग्रहो भ्रातृभावेशः स्त्रीग्रहो भ्रातृभावगः।
भगिनी स्यात् तथा भ्राता पुंगृहे पुंगृहो[?] यदि।।
मिश्रे मिश्रफलं वाच्यं बलाबलविनिर्णयात्।
मृतौ कुजतृतीयेशौ सहोदरविनिर्णयात्।।

केन्द्रे त्रिकोणगे वाऽपि स्वोच्चमित्रस्ववर्गजे।
कारके सहजेशे वा भ्रातृसौख्यं विनिर्दिशेत्।।

तृतीय भाव का स्वामी शुभ ग्रह सम्बन्धी हो अर्थात् शुभ ग्रह के साथ हो या शुभ ग्रह के द्वारा देखा जाता हो तो व्यक्ति भाइयों से युक्त व पराक्रमशील होता है। भ्रातृ भाव का स्वामी और मंगल दोनों ही भाव को देखते हों या इसी भाव में स्थित हों तो जातक को भाई बहिनों का सुख उत्तम होता है।

जिस व्यक्ति की जन्म पत्रिका में तृतीय भाव का स्वामी और मंगल पाप ग्रह के साथ और पाप राशि में हो तो शीघ्र ही सहोदरों का नाश करने वाले होते हैं। तीसरे भाव के स्वामी स्त्री ग्रह हों अथवा इस भाव में स्त्री राशि हो तो व्यक्ति की बहिनें अधिक होंगी इसके विपरीत पुरुष ग्रह होने पर भाई अधिक होंगे। स्त्री पुरुष मित्र स्थिति होने पर भाई बहिनों का सुख होता है।

मंगल व तीसरे भाव का स्वामी आठवें भाव में हो तो सहोदरों की हानि इंगित करता है। यदि मंगल और तृतीय भाव स्वामी केन्द्र त्रिकोण अपने उच्च स्थान स्व मित्र स्थान और.स्व वर्ग में हो तो व्यक्ति को सहोदरों का सुख होता है।

7.3.4 सुख अर्थात् चतुर्थ भाव

सुखेशे सुखभावस्थे लग्नेशे तद्गतेऽपि वा।
शुभदृष्टे च जातस्य पूर्ण गृहसुखं वदेत्।।
स्वगेहे स्वांशके स्वोच्चे सुखस्थानाधिपो यदि।
भूमियानगृहादीनां सुखं वाद्यभवं तथा ।।
कर्माधिपेन संयुक्ते केन्द्रे कोणे गृहाधिपे ।
विचित्रसौधप्राकारैर्मण्डितं तद्गृहं वदेत्।।
बन्धुस्थानेश्वरे सौम्ये शुभग्रहयुतेक्षिते।
शशिजे लग्नसंयुक्ते बन्धुपूज्यो भवेन्नरः।।

सुखेश सुख स्थान अर्थात् चतुर्थ में लग्नेश के साथ हो तथा शुभ ग्रह द्वारा देखा जाता हो तो व्यक्ति को घर सम्बन्धी उत्तम सुख होता है। चतुर्थेश अपने भाव अपने नवांश तथा स्वोच्च राशि में स्थित हो तो व्यक्ति को भूमि, वाहन, भवन का उत्तम सुख होता है। चतुर्थ भाव का स्वामी दशमेश के साथ केन्द्र या त्रिकोण में हो तो जातक के पास उत्तम भवन होता है। चतुर्थ स्वामी स्वयं शुभ ग्रह हो, शुभ ग्रह के साथ हो अथवा शुभ ग्रह द्वारा देखा जाता हो और लग्न में बुध हो तो जातक बन्धुओं से पूज्य होता है। लग्नेश व सुख भाव का स्वामी केन्द्र त्रिकोण में हो तो सुन्दर ग्रह प्राप्त होता है।

मातुःस्थाने शुभयुते तदीशे स्वोच्चराशिगे।
कारके बलसंयुक्ते मातुर्दीर्घायुरादिशेत्।।
शुभं शुभत्वे भावस्य पापत्वे फलमन्यथा।

चतुर्थ स्थान में सौम्य ग्रहों की स्थिति तथा चतुर्थ भाव का स्वामी उच्चस्थ होने के साथ माता कारक ग्रह बली हो तो उस व्यक्ति की माता दीर्घायु होती है और माता का उत्तम सुख होता है। सुख भाव में शुभ ग्रह हो तो चतुर्थ भाव का शुभ फल व पाप ग्रहों की स्थिति हो तो भाव का अशुभ फल जानना चाहिए।

भवन की चिन्ता सुखेश से, बृहस्पति से सुख की चिन्ता कही गई है। स्त्री, वाहन, आभूषण की चिन्ता शुक्र से, आयु की चिन्ता राहु व शनि, पिता की चिन्ता सूर्य तथा माता की चिन्ता चन्द्रमा से कही गई है। बुद्धि की चिन्ता बुध से करनी चाहिए। जब यह कारक उन–2 भावों में आवेशों से युत हो तो सम्बन्धित पदार्थों की वृद्धि कहनी चाहिए। सुख भाव का स्वामी यदि केन्द्र त्रिकोण में उच्चस्थ ग्रहों से दृष्ट हों। अपनी राशि, स्वउच्च व अपने नवांश में स्थित होकर सुख स्थान में हो तो विचित्र प्रकार से सज्जित गृह होता है। सुख भाव का स्वामी केन्द्रस्थ हो तथा शुक्र भी केन्द्रगत हो, बुध उच्चस्थ हो तो बालक विद्वान् व पण्डित होता है।

7.3.5 सुत अर्थात् पंचम भाव

लग्नपे सुतमावस्थे सुतपे च सुते स्थिते।
केन्द्रत्रिकोणसंस्थे वा पूर्ण पुत्रसुखं वदेत्।।
षष्ठाष्टमव्ययस्थे तु सुताधीशे त्वपुत्रता।
सुतेशेऽस्तं गते वाऽपि पापाक्रान्ते च निर्बले।।
तदा न जायते पुत्रो जातो वा म्रियते ध्रुवम्।
सुताधीशो हि नीचस्थो व्ययषष्ठाष्टमस्थितः।।

लग्नेश पंचम भाव में अथवा पंचमेश पंचम में स्थित हो अथवा दोनों पंचम भाव में स्थित हों तो पूर्ण सुख होता है। पंचमेश छठे, आठवें या बारहवें स्थान में निर्बल हो तो पुत्र रहित होता है। पंचमेश अस्त, पापाक्रान्त व निर्बल हो तो व्यक्ति के पुत्र नहीं होता या होकर मर जाता है। पंचमेश नीचस्थ होकर छठे, आठवें व बारहवें स्थित हो तो जातक की स्त्री काकबन्ध्या होती है।

षष्ठाष्टमव्ययस्थो वा नीचो वा शत्रुराशिगः।
सुतेशश्च सुते तस्य कष्टात् पुत्रं विनिर्दिशेत्।।8।।
पुत्रस्थानाधिपे स्वोच्चे लग्नाद्वा द्वित्रिकोणगे ।
गुरुणा संयुते दृष्टे पुत्रभाग्यमुपैति सः।।16।।
त्रिचतुःपापसंयुक्ते सुते सौम्यविवर्जिते।
सुतेशें नीचराशिस्थे नीचसंस्थो मवेच्छिशुः।।17।।

पुत्र स्थान का स्वामी यदि छठे, आठवें बारहवें भाव में स्थित हो या शत्रु राशि या नीचस्थ होकर पुत्र भाव में ही स्थित हो तो व्यक्ति को कष्ट से पुत्र प्राप्त होता है। पंचमेश उच्चस्थ होकर 2,3,1,5 ,9 वें भाव में स्थित हो और गुरु से युत हो अथवा गुरु द्वारा देखा जाता हो तो व्यक्ति को पूर्ण पुत्र सुख प्राप्त होता है। यदि 3 या 4 पाप ग्रह पंचम भावस्थ हों, शुभ ग्रह पंचम में नहीं हों, पंचम भाव स्वामी नीचस्थ हो तो व्यक्ति को नीच कर्म करने वाला पुत्र प्राप्त होता है।

7.3.6 षष्ठ अर्थात् शत्रु भाव

षष्ठाधिपः स्वगेहे वा देहे वाऽप्यष्टमे स्थितः।
तदा व्रणो भवेद् देहे षष्ठराशिसमाश्रिते।।2।।

षष्ठ भाव का स्वामी लग्न, अष्टम भाव अथवा स्वगृही हो तो शरीर में व्रण होते हैं। छठे भाव की राशि के अंग विशेष में व्रण होते हैं। इसी प्रकार अन्य भावेश यथा दशम भाव का स्वामी छठे भाव के स्वामी के साथ छठे या आठवें हो तो उस भाव सम्बन्धी को व्रण कहा गया है। साथ ही ग्रह शरीर के जिस अंग का कारक है उस स्थान पर ही व्रण कहा गया है। यथा सूर्य छठे भाव का स्वामी होकर छठे या आठवें भाव में स्थित हो तो मस्तक में व्रण कहा है।

इन्दुना च मुखे कण्ठे मौमेन ज्ञेन नाभिषु।
गुरुणा नासिकायां च भृगुणा नयने पदे।
शशिना राहुणा कुक्षौ केतुना च तथा मवेत्।।

इसी प्रकार चन्द्रमा से मुख में, मंगल से गले में, बुध से नाभि में, गुरु से नासिका में, शुक्र से नेत्र में, शनि से पैर एवं राहु अथवा केतु से पेट में घाव कहना चाहिये।

रोगस्थानगते पापे तदीशे पापसंयुते।
राहुणा संयुते मन्दे सर्वदा रोगसंयुतः।।

रोगस्थान अर्थात् छठे भाव में पाप ग्रह और षष्ठेश भी पाप ग्रह से युक्त हो तो व्यक्ति सदैव रोगी रहता है।

7.3.7 सप्तम अर्थात् जाया भाव

जायाधिपे स्वमे स्वोच्चे स्त्रीसुखं पूर्णमादिशेत्।
कलत्रपो विना स्वर्क्ष व्ययषष्ठाष्टमस्थितः।
रोगिणीं कुरुते नारीं तथा तुङ्गादिकं विना।
जायाधीशः शुभैर्युक्तो दृष्टो वा बलसंयुतः।
तदा जातो धनी मानी सुखसौभाग्यसंयुतः।

नीचे शत्रुगृहेऽस्ते वा निर्बले च कलत्रपे।
तस्यापि रोगिणी मार्या बहुमार्यो नरो मवेत्।

सप्तम भाव का स्वामी स्व राशि, स्वोच्च में स्थित हो व्यक्ति को पत्नी–पति सुख पूर्ण होता है सप्तम भावेश स्व राशिस्थ या उच्चस्थ न होकर व्यय, रिपु या अष्टम भाव में गया हो तो व्यक्ति का जीवन साथी रोगी होता है।

सप्तमेश शुभ ग्रह से युत हो या शुभ ग्रह द्वारा देखा जाता हो साथ ही बली भी हो तो जातक धन–मान–युक्त और सौभाग्य व सुख से परिपूर्ण होता है। इसके विपरीत सप्तम भाव का स्वामी नीच राशि का हो अथवा शत्रु गृही, अस्त, निर्बल हो तो उस व्यक्ति का जीवन साथी रोगी होता है। अथवा एक से ज्यादा स्त्री होगी।

7.3.8 अष्टम अर्थात् आयुभाव

आयुःस्थानाधिपः केन्द्रे दीर्घमायुः प्रयच्छति ।
आयुःस्थानाधिपः पापैः सह तत्रैव संस्थितः।।1।।
एवं हि शनिना चिन्ता कार्या तर्कैर्विचक्षणैः।
कर्माधिपेन च तथा चिन्तनं कार्यमायुषः।।2।।
षष्ठे व्ययेऽपि षष्ठेशो व्ययाधीशो रिपौ व्यये ।
लग्नेऽष्टमे स्थितो वाऽपि दीर्घमायुः प्रयच्छति।।3।।
स्वस्थाने स्वांशके वाऽपि मित्रेशे मित्रमन्दिरे।
दीर्घायुषं करोत्येव लग्नेशोऽष्टमपः पुनः।।4।।
लग्नाष्टमपकर्मेशमन्दाः केन्द्रत्रिकोणयोः।
लाभे वा संस्थितास्तद्वद् दिशेयुर्दीर्घमायुषम्।।5।।
एवं बहुविधा विद्वन्नायुर्योगाः प्रकीर्तिताः।
एषु यो बलवांस्तस्याऽनुसारादायुरादिशेत्।।6।।
लग्नेशे स्वोच्चराशिस्थे चन्द्रे लाभसमन्विते।
रन्ध्रस्थानगते जीवे दीर्घमायुर्न संशयः।।7।।

लग्नेशोऽतिबली दृष्टः केन्द्रसंस्थैः शुभग्रहैः।
घनैःसर्वगुणैः सार्द्ध दीर्घमायुः प्रयच्छति।।8।।

आयु स्थान का स्वामी केन्द्र में स्थित हो तो व्यक्ति दीर्घायु होता है। अष्टम भाव का स्वामी पाप ग्रह के साथ अष्टम में ही गया हो तो व्यक्ति अल्पायु होता है। लग्न भाव का स्वामी भी यदि अष्टम में हो तो जातक अल्पायु होता है। छठे भाव का स्वामी या व्यय का स्वामी षष्ठ या व्यय स्थान में

अथवा लग्न, या अष्टम भाव में स्थित हो तो दीर्घायु देने वाला होता है। लग्नेश, अष्टमेश, दशमेश और शनि केन्द्र त्रिकोण में हो अथवा लाभ स्थान में स्थित हो तो दीर्घ आयु देने वाले होते हैं। इस प्रकार विविध प्रकार से आयु का विचार किया जाता है। सभी में जो सब से बलवान् हो उसी प्रकार आयुर्दय का विचार करना चाहिए।

लग्नेश उच्चस्थ हो, चन्द्रमा लाभ स्थान में बैठा हो और अष्टम स्थान में बृहस्पति हो तो दीर्घ आयु होती है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। लग्न भाव का स्वामी अति बलवान् हो और केन्द्रस्थ शुभ ग्रहों द्वारा देखा जाता हो तो धन और समस्त गुणों से युक्त दीर्घायु देने वाला योग होता है।

जब जन्म पत्रिका में केन्द्र त्रिकोण भाव में पाप ग्रह नहीं हो और लग्नेश तथा गुरु केन्द्र में हो तो बालक पुण्यकर्त्ता, अनेक प्रकार के सुखों को भोगने वाला और लम्बी आयु वाला होता है।

7.3.9 नवम अर्थात् भाग्य भाव

सबले भाग्यपे भाग्ये जातो भाग्ययुतो भवेत्।
भाग्येशे नीचराशिस्थे पिता निर्धन एव हि।
भाग्येशे केन्द्रमावस्थे गुरुणा च निरीक्षिते।
तत्पिता वाहनैर्युक्तो राजा वा तत्समो भवेत्।
भाग्येशे कर्ममावस्थे कर्मेशे भाग्यराशिगे।
शुभदृष्टे धनाढ्यश्च कीर्तिमांस्तत्पिता भवेत्।

भाग्य भाव का स्वामी बली होकर भाग्य भाव में ही स्थित हो तो जातक परम भाग्यशाली होता है भाग्य भाव में बृहस्पति हो तथा भाग्य भाव का स्वामी केन्द्र में गया हो तथा लग्न भाव का स्वामी बली हो तो व्यक्ति अधिक भाग्यवान् होता है भाग्य भाव का स्वामी बल युक्त होकर शुक्र के साथ भाग्य स्थान में हो और लग्न से केन्द्र में बृहस्पति हो तो उस व्यक्ति के पिता भाग्यशाली होते हैं। भाग्य भाव से दूसरे भाव अर्थात् दशम या चौथे भाव में मंगल हो और भाग्य भाव का स्वामी अपनी नीच राशि का हो तो व्यक्ति का पिता निर्धन होता है।

भाग्य भाव स्वामी केन्द्रस्थ हो और बृहस्पति द्वारा देखा जाता हो तो जातक के पिता के पास अनेक वाहन होते हैं और वह राजा या राजा के समान होता है। भाग्य भाव का स्वामी भाग्य में स्थित हो और शुभ ग्रह से देखा जाता हो तो व्यक्ति के पिता धनी एवं यशस्वी होते हैं।

भाग्य स्थान से नवम में राहु और भाग्य भाव का स्वामी अष्टम भाव में स्थित हो या अपनी नीच राशि में हो तो व्यक्ति भाग्यहीन होता है। भाग्यभाव में शनि व चन्द्रमा हों, लग्न का स्वामी नीचस्थ हो तो व्यक्ति भिक्षा मांग कर अपना जीवन चलाता है।

7.3.10 दशम अर्थात् कर्म भाव

सबले कर्मभावेशे स्वोच्चे स्वांशे स्वराशिगे।
जातस्तातसुखेनाढ्यो यशस्वी शुभकर्मकृत्।।2।।
कर्माधिपो बलोनश्चेत् कर्मवैकल्यमादिशेत्।
सैहिः केन्द्रत्रिकोणस्थो ज्योतिष्टोमादियागकृत्।।3।।
कर्मेशे शुभसंयुक्ते शुभस्थानगते तथा।
राजद्वारे च वाणिज्ये सदा लाभोऽन्यथाऽन्यथा।।4।।
दशमे पापसंयुक्ते लाभे पापसमन्विते।
दुष्कृतिं लमते मर्त्यः स्वजनानां विदूषकः।।5।।

दशम भाव स्वामी बल युक्त होकर उच्चस्थ, स्वनवांश या अपनी राशि में स्थित हो तो व्यक्ति पिता के सुख से युक्त, यशवान् और शुभ कार्य करने वाला होता है। दशम भाव का स्वामी बली नहीं हो तो व्यक्ति कर्म रहित होता है। राहु (वही) यदि केन्द्र त्रिकोण में गया हो तो ज्योतिष्टोम आदि करने वाला होता है।

कर्म अर्थात् दशम भाव का स्वामी शुभ ग्रह से युक्त हो और शुभ स्थान में स्थित हो तो व्यक्ति को राजा के दरबार और व्यापार से सदैव लाभ होता है। दशम भाव में पाप ग्रह बैठे हों और लाभ स्थान में भी पाप ग्रह स्थित हो तो व्यक्ति को लाभ नहीं होता।

7.3.11 एकादश अर्थात् लाभ भाव

लाभभावफलं चाथ कथयामि द्विजोत्तम!।
श्रूयतां जातको लोके यच्छुभत्वे सदा सुखी।।1।।
लाभाधिपो यदा लाभे तिष्ठेत् केन्द्रत्रिकोणयोः।
बहुलाभं तदा कुर्यादुच्चे सूर्याशगोऽपि वा।।2।।
लाभेशे धनराशिस्थे धनेशे केन्द्रसंस्थिते।
गुरुणा सहिते भावे गुरुलाभं विनिर्दिशेत्।।3।।
लाभेशे नीचभेऽस्ते वा त्रिके पापसमन्विते।
कृते भूरिप्रयत्नेऽपि नैव लाभः कदाचन।।4।।
लाभेशे कर्मराशिस्थे कर्मेशे लग्नसंयुते।
तावुभौ केन्द्रगौ वापि सुखजीवनभाग्भवेत्।।5।।

लाभ का स्वामी केन्द्र स्थान या त्रिकोण भाव में स्थित हो अस्त होने पर भी उच्चस्थ हो तो अधिक लाभ देने वाला होता है। लाभेश धन स्थान में हो और धन भाव का स्वामी गुरु के साथ केन्द्र में बैठा हो तो अधिक लाभ देने वाला होता है।

लाभ भाव का स्वामी नीचस्थ हो, अस्त या छठे, आठवें बारहवें भाव में पाप ग्रहों के साथ हो तो बहुत प्रयत्न करने पर भी व्यक्ति को लाभ नहीं होता। लाभेश कर्म भाव में स्थित हो और कर्म भाव का स्वामी लग्न में हो या दोनों केन्द्र स्थान में स्थित हो तो व्यक्ति सुखी जीवन वाला होता है।

7.3.12 द्वादश अर्थात् व्यय भाव

व्यये च शुभसंयुक्ते शुभकार्ये व्ययस्तदा।
एवं स्वशत्रुनीचांशेऽष्टमांशे वाऽष्टमे रिपौ।

व्यय भाव का स्वामी शुभ ग्रह के साथ हो या अपनी राशि में या उच्चस्थ हो और व्यय स्थान में शुभ ग्रह स्थित हो तो शुभ कार्य में व्यय होता है। चन्द्रमा व्यय भाव का स्वामी हो कर नवम, एकादश या पंचम भाव में स्थित हो या अपने उच्च स्वराशि या स्वनवांश में या 5,9,11 भाव के नवांश में हो तो ऐसा व्यक्ति सुन्दर भवन, शय्या एवं सुगन्धित वस्तुओं का भोग करने वाला होता है।

द्वादश भाव का स्वामी अपनी शत्रु राशि, नीच राशि के नवांश या अष्टम भाव या छठे भाव में गया हो या उसके नवांश में हो तो व्यक्ति सुख से रहित एवं अधिक व्यय होने से दुःखी होता है व्यय भाव का स्वामी केन्द्र त्रिकोण में हो तो सन्तुलित व्यय सुख होता है।

बारहवें भाव में राहु, मंगल, सूर्य हो या सूर्य के साथ द्वादश भाव स्वामी हो तो जातक नरक में जाता है। व्यय स्थान में शुभ ग्रह हो और व्यय का स्वामी उच्चस्थ होकर शुभ ग्रह के साथ अथवा शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो व्यक्ति मोक्ष प्राप्त करता है।

व्यय भाव का स्वामी पाप ग्रह के साथ हो और व्यय स्थान में पाप ग्रह बैठा हो या पांप ग्रह के द्वारा दृष्ट हो तो वह व्यक्ति देश विदेश में भ्रमण करने वाला होता है।

7.4 सारांश

ज्योतिषीय फलादेश में विविध भावों से देखे जाने वाले विविध तत्वों का महत्वपूर्ण स्थान है। किसी भी भाव विशेष का फल भावेश की स्थिति व उस भाव में स्थित ग्रहों के आधार पर किया जाता है।

इस अध्याय के माध्यम से लग्नादि द्वादश भावों से विचारणीय विषयों के ज्ञान के साथ–2 तनु आदि इन भावों के सम्बन्ध में फलादेश के महत्वपूर्ण बिन्दुओं की ओर संकेत किया गया है। इन बिन्दुओं का फलादेश कथन की पृष्ठभूमि में महत्वपूर्ण स्थान है।

7.5 शब्दावली

लग्नेश– लग्न भाव की राशि का स्वामी

भावेश–भाव में स्थित राशि का स्वामी।

अभ्यास प्रश्न :

बहु विकल्प

1. प्रथम का नाम है

(अ) तनु (ब) सुख (स) कर्म (द) भाग्य

2. तृतीय भाव का कारक ग्रह है।

(अ) बुध (ब) शुक्र (स) सूर्य (द) मंगल

3. निम्न में से केन्द्र स्थान है।

(अ) पंचम (ब) अष्टम (स) तृतीय (द) लग्न

4. त्रिकोण स्थान कौन से हैं,

(अ) 5,8 (ब) 4,8 (स) 9,11 (द) 5,9

5. नवम भाव को त्रिकोण के अतिरिक्त किस नाम से जानते हैं।

(अ) कारक (ब) पणफर (स) केन्द्र (द) आपोक्लिम

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. लग्न किसे कहते हैं।
2. किस भाव को आकाश की संज्ञा दी गई है।
3. चतुर्थ भाव का क्या नाम है।
4. भाग्य स्थान किस भाव को कहते हैं।
5. किस भाव को केन्द्र व त्रिकोण दोनों की संज्ञा प्राप्त है।
6. पंचम भाव से किस–2 विषय का विचार किया जाता है।
7. केन्द्र स्थान कौन–2 से हैं। इनसे जीवन के किन प्रमुख स्थानों का विवेचन करते हैं।
8. निम्न विषयों को समझाइये।

(1) त्रिक स्थान (2) सप्तम भाव (3) कर्म स्थान (4) भाव

7.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. (अ) तनु

2. (द) मंगल

3. (द) लग्न

4. (द) 5, 9

5. (द) आपोक्लिम

लघूत्तर प्रश्नों के उत्तर :

1. चित्र भाव विषय विचार व पंचम भाव देखें।

2. प्रथम, चतुर्थ, सप्तम, दशम (1) शरीर प्रतिष्ठा (4) माता, भूमि, भवन, सुख (7) पति पत्नी व मारक स्थान (10) कर्म, राज्य, प्रतिष्ठा – शेष भाव फल देखे।

3. त्रिकोणदि स्थान व भाव विचार देखें।

7.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. वृहत् पाराशर होराशास्त्र

2. फलदीपिका

7.8 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री :

वृहत् पाराशर होरा शास्त्र – पं. पद्मनाभ शर्मा

प्रकाशन : चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

मानसागरी – पं. रूपनारायण झा

7.9 निबन्धात्मक प्रश्न :

1. भावों का अध्ययन किस प्रकार किया जाता है। बारह भावों की विस्तृत व्याख्या कीजिए।

इकाई – 8 द्वादश भावेशों व सूर्यादिग्रहों का लग्नादि भावों में फल

8.1 **प्रस्तावना**

8.2 **उद्देश्य**

8.3 **द्वादश भावेशों का लग्नादि भावों में फल**

8.3.1 लग्नेश का द्वादश भाव में फल

8.3.2 द्वितीयेश का द्वादश भाव में फल

8.3.3 तृतीयेश का द्वादश भाव में फल

8.3.4 चतुर्थेश का द्वादश भाव में फल

8.3.5 पंचमेश का द्वादश भाव में फल

8.3.6 षष्ठेश का द्वादश भाव में फल

8.3.7 सप्तमेश का द्वादश भाव में फल

8.3.8 अष्टमेश का द्वादश भाव में फल

8.3.9 नवमेश का द्वादश भाव में फल

8.3.10 दशमेश का द्वादश भाव में फल

8.3.11 एकादशेश का द्वादश भाव में फल

8.3.12 द्वादशेश का द्वादश भाव में फल

8.4 सूर्यादि ग्रहों का द्वादश भावों में फल

8.4.1 सूर्य का द्वादश भाव में फल

8.4.2 चन्द्रमा का द्वादश भाव में फल

8.4.3 मंगल का द्वादश भाव में फल

8.4.4 बुध का द्वादश भाव में फल

8.4.5 गुरु का द्वादश भाव में फल

8.4.6 शुक्र का द्वादश भाव में फल

8.4.7 शनि का द्वादश भाव में फल

8.4.8 राहु का द्वादश भाव में फल

8.4.9 केतु का द्वादश भाव में फल

8.5 **सारांश**

8.6 **शब्दावली**

8.7 **अभ्यास प्रश्नों के उत्तर**

8.8 **सन्दर्भग्रन्थ–सूची**

8.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

8.10 निबन्धात्मक प्रश्न

8.1 प्रस्तावना

ज्योतिष फलादेश में भाव–फल का महत्वपूर्ण स्थान है। भाव–फल व राशि–फल के उपरान्त ही सामान्य फल के बाद विशेष फल की प्रक्रिया आरम्भ होती है। पिछले अध्याय में आपने तनु आदि द्वादश भावों के कारकत्व व उनसे विचार किये जाने वाले विविध बिन्दुओं का अध्ययन किया।

प्रस्तुत इकाई में आप लग्न सहित 12 भावों के स्वामियों अर्थात् लग्नेश, धनेश, पराक्रमेश के 12 भावों में स्थिति के फल का अध्ययन करेंगे। इसी अध्याय में सूर्य–चन्द्र आदि नव ग्रहों की द्वादश भावों में स्थिति के फल का अध्ययन करेंगे।

आगामी अध्ययन में फलादेश के प्रमुख बिन्दु मेष–वृष–मिथुन सहित 12 राशियों में सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु व केतु के फल का निरूपण करने के साथ–साथ राजयोग के सम्बन्ध में विचार करेंगे।

8.2 उद्देश्य

1. लग्नेश का द्वादश भावों में फल बता सकेंगे।
2. पंचमेश की विविध भाव–स्थिति के परिणामों का वर्णन कर पायेंगे।
3. नवमेश के 12 भावों में स्थित होने के प्रभाव को लिख सकेंगे।
4. द्वादशेश की द्वादश भाव स्थिति के फल का वर्णन कर सकेंगे।
5. सूर्य के लग्न सहित 12 भावों में स्थित होने के प्रभाव को बता सकेंगे।
6. 12 भावों में मंगल की स्थिति के प्रभाव को स्पष्ट कर पायेंगे।
7. सभी नव ग्रहों की द्वादश भाव गत स्थिति के परिणामों की व्याख्या कर सकेंगे।

8.3 द्वादश भावेशों का लग्नादि–भावों में फल

8.3.1 लग्नेश

लग्नेश यदि लग्न भाव में स्थित हो तो व्यक्ति स्वस्थ शरीर वाला, शुभ कार्यों में परिश्रमी, स्थिर चित्त वाला, स्वाभिमानी, चंचल विचार युक्त, द्वि पत्नी और अन्य स्त्री में रुचि रखने वाला होता है।

- द्वितीय भाव स्वामी यदि लग्न भाव में हो तो व्यक्ति लाभ प्राप्त करने वाला, विद्वान्, सुखी, सुशील, धर्मज्ञ, सम्मान युक्त एवं अनेक स्त्रियों वाला लेकिन गुणवान् होता है।

- तृतीय भाव में लग्नेश स्थित होने पर सिंह के समान पराक्रम वाला, समस्त सम्पत्ति युक्त, स्वाभिमानी, दो पत्नी युक्त, बुद्धिमान् व सुखी होता है।
- चतुर्थ भाव में लग्नेश होने पर व्यक्ति माता–पिता से सुखी, अनेकभ्रातृयुक्त, कामी, गुण व रूप सम्पन्न होता है।
- लग्नेश के पंचम भाव में होने पर पुत्र के मध्यम सुख वाला, प्रथम सन्तान की आयु कम . होती है। वह अभिमान युक्त, क्रोध करने वाला तथा राजा का प्रिय होता है। लग्नेश छठे भाव में हो तो शारीरिक सुख में कमी वाला तथा छठे भाव में पाप ग्रह के साथ होने पर तथा सौम्य ग्रह से दृष्ट न होने पर शत्रुओं से पीड़ित होता है। सप्तम भाव में पापी लग्नेश होने पर पत्नी का नाश करने वाला तथा शुभ ग्रह होने पर भ्रमण करने वाला अथवा प्रसिद्ध विरक्त कभी राजा भी हो सकता है।
- लग्न भाव स्वामी अष्टम में स्थित हो तो व्यक्ति की रुचि सिद्ध होती है। सामान्यतः रोगी, चोर, जुआ खेलने वाला तथा अन्य स्त्री में आसक्त होता है।
- लग्नेश नवम भाव में होने पर व्यक्ति भाग्य युक्त, लोकप्रिय, विष्णुभक्तिरत, अच्छा वक्ता, स्त्री, पुत्र व धन सम्पन्न होता है।
- दशम भाव में लग्न भाव का स्वामी स्थित हो तो व्यक्ति पितृसुख से युक्त, राजा से सम्मान पाने वाला, विख्यात, गुण–सम्पन्न व अपने परिश्रम से धनार्जन करने वाला होता है।

• लाभ भाव में लग्नेश स्थित हो तो सदा लाभ प्राप्त करने वाला, शील–सम्पन्न, प्रसिद्ध कीर्तिवान्, अनेक स्त्री वाला व गुणी होता है।

• लग्न का स्वामी द्वादश में शुभ ग्रह नष्ट न हो तो शरीर के लिए प्रतिकूल अनावश्यक व्यय करने वाला, क्रोधी होता है। शुभ ग्रह नष्ट होने पर विपरीत होता है।

8.3.2 धनेश

• धन भाव का स्वामी लग्न में गया हो तो व्यक्ति कुटुम्ब के विपरीत, धनवान्, पुत्रवान् कठोर हृदय वाला, कामी और दूसरों के कार्य करने वाला होता है।

• धनेश धन भाव में ही होने से व्यक्ति धनी, अहंकारी दो या दो से अधिक स्त्रियों में आसक्त तथा पुत्र रहित होता है।

• धन भाव का स्वामी शुभ ग्रह युक्त होकर तृतीय भावस्थ हो तो व्यक्ति पराक्रमी, बुद्धिमान्, गुण सम्पन्न, कामी व लोभ करने वाला, पाप ग्रह युक्त होने पर देवताओं की निन्दा करने वाला होता है।

- चतुर्थ भाव से धन भाव का स्वामी हो तो सभी सम्पत्तियों से सम्पन्न होता है। धन भाव का स्वामी गुरु युक्त हो कर उच्च राशि में भी हो तो व्यक्ति राजतुल्य होता है।

- धन भाव का स्वामी पंचम में हो तो व्यक्ति धनवान् तथा धनार्जन करने वाले पुत्रों से युंक्त होता है।

- छठे भाव में स्थित धनेश शुभ ग्रह से युक्त हो तो व्यक्ति को शत्रु से लाभ होता है। यदि पाप ग्रह के साथ हो तो या दृष्ट हो तो शत्रु से हानि होती है तथा पैरों में विकलता या कमजोरी होती है।

- धन भाव स्वामी सप्तम में हो तो व्यक्ति दूसरे की स्त्री में रुचि रखने वाला, यदि पाप युक्त व दृष्ट भी हो तो जातक की स्त्री भी व्याभिचारिणी होती है।

- अष्टम भाव में धनेश होने पर मनुष्य बहुत धन, भूमि सम्पत्ति वाला, न्यून पत्नी सुख वाला, बड़े भाई के सुख से रहित होता है।

- नवम भावस्थ धनेश होने से व्यक्ति धनवान् सदा परिश्रमी बाल्यावस्था में रोगी बाद में सुखी होता है तथा तीर्थ, व्रत, धर्म में संलग्न होता है।

- दशम भाव में धन भाव स्वामी गया हो तो व्यक्ति स्वाभिमान युक्त, विद्वान्, बहुत धनी, कामी, स्वाभिमानी, विद्वान् अधिक स्त्रियों वाला लेकिन पुत्र सुख में कमी वाला होता है।

- धनेश एकादश अर्थात् लाभ भाव में हो तो सब लाभ प्राप्त करने वाला, सदा श्रम करने वाला, सम्मान व कीर्तिवान् होता है।

- द्वादश भाव में धन भावेश होने पर जातक पराक्रमी, धनहीन, पराश्रित होता है। कहीं–कहीं राजा के निकट से रोजगार पाने वाला भी कहा है। प्रथम सन्तान की हानि कही गई है।

8.3.3 सहजेश

- तृतीय भाव का स्वामी लग्न में स्थित हो तो व्यक्ति स्वशक्ति से धनार्जन करने वाला, सेवा, चतुर, विद्याहीन होकर भी बुद्धिमान् होता है।

- तृतीय भाव का स्वामी द्वितीयस्थ हो तो व्यक्ति स्थूल शरीर वाला, साहस रहित, दुखी, अल्पकार्य आरम्भ करने वाला व अन्य स्त्री में आसक्त होता है।

- तृतीयेश स्वयं सहज भाव में होता है तो व्यक्ति सहोदरों से सुखी, धनवान्, पुत्रवान्, प्रसन्न चित्त एवं बहुत सुख भोग करने वाला होता है।

- सहजेश चतुर्थ भावस्थ हो तो व्यक्ति सुखी, धनवान्, बुद्धिमान्, लेकिन दुष्टधारणा वाला होता है। सहज भाव का स्वामी पंचम भाव में गया होने पर व्यक्ति पुत्रयुक्त, गुणवान् और पाप ग्रह से संयुक्त हो तो दुष्ट स्त्री का पति होता है।

- तृतीय भावेश षष्ठ भाव में गया हो तो व्यक्ति भाइयों से बैर रखने वाला, अतिधनी मामाओं से शत्रुता रखने वाला और मामी से प्रेम करने वाला होता है।

- सहज भावेश सप्तम हो तो व्यक्ति राज सेवक, अल्पावस्था में दु:खी व अन्तिम अवस्था में सुखी होता है। इस तथ्य में संशय नहीं है।

- तृतीय भाव का स्वामी भाग्य अष्टमस्थ होने पर व्यक्ति चौरकार्यरत, नौकरी करने वाला, राजा से पोषित होता है।

- भाग्य भावस्थ सहजेश हो, तो व्यक्ति पिता के सुख से वंचित, स्त्री के कारण भाग्योदय प्राप्त करने वाला व पुत्र–पौत्रों से सुखी होता है।

- सहज भाव का स्वामी दशमस्थ होने पर व्यक्ति सभी सुखों से युक्त स्वपराक्रम से धनार्जन करने वाला तथा दुष्टा स्त्री का पोषण करने वाला होता है।

- लाभ भाव में यदि तृतीय भावेश हो तो व्यक्ति व्यापार से धन प्राप्त कर्त्ता, कम पढ़े लिखे होने पर भी बुद्धिमान्, साहस युक्त व पर कार्य करने वाला होता है।

- व्यय भावस्थ सहजेश हो तो बुरे कार्यों में व्यय करने वाला, क्रूर पिता की सन्तान तथा स्त्री के कारण भाग्योदय प्राप्त करने वाला होता है।

- चतुर्थेश लग्नस्थ होने पर व्यक्ति विद्यावान्, गुणवान् भूमि व वाहनों से सुखी तथा माता के सुख से युक्त होता है।

- चतुर्थ भावेश द्वितीयस्थ हो तो व्यक्ति भोग करने वाला समस्त धन–धान्यों (अर्थात् पुत्रधन, यशोधन, संचितधन, पशु व वाहन) से युक्त अधिक परिवार वाला, सम्मान व साहस युक्त तथा दिखावा करने वाला होता है।

- चतुर्थ भाव का स्वामी सहज भावस्थ हो तो पराक्रमयुक्त, नौकर–चाकरों से युक्त, उदार नीरोगी, गुणवान्, दानी एवं स्वबाहुबल से प्राप्त धन वाला होता है।

- चतुर्थ भाव स्वामी चतुर्थ में ही हो तो व्यक्ति मंत्री समस्त सम्पत्ति से युक्त, चतुर, सुन्दर चरित्रवान्, स्वाभिमानी, ज्ञानवान अपनी पत्नी का प्रिय व सुखी होता है।

- चतुर्थ भाव का स्वामी पंचमस्थ हो तो सुखी, सभी का प्रिय (लोकप्रिय), देवभक्ति में रत, स्वाभिमानी, शुभगुणयुक्त व स्वोपार्जित धन वाला होता है।

- चतुर्थ भाव का स्वामी षष्ठ भाव में गया हो तो जातक माता के सुख से रहित, क्रोधी, चोरी करने वाला, तन्त्रादि दूषित क्रिया वाला, स्वेच्छाचारी, अन्य स्त्री में आसक्त और दुष्ट होता है।

- सप्तमभाव में चतुर्थ भावेश स्थित हो तो व्यक्ति विद्वान्, पैतृक धन का स्वेच्छा से त्याग करने वाला व सभा में कम बोलने वाला होता है।

- अष्टम भाव में चतुर्थ भाव स्वामी स्थित हो तो व्यक्ति घर के सुख से हीन, माता–पिता के अल्प सुख वाला व क्षीण होता है।

- नवम भाव में चतुर्थ भाव का स्वामी स्थित हो तो व्यक्ति सभी जनों का प्रिय, देव व पितृभक्त, गुणी, स्वाभिमानी व समस्त सुखों से युक्त होता है।

- चतुर्थ भाव स्वामी दशम भाव में हो तो व्यक्ति राजा से सम्मान पाने वाला, सुखी, रसायन अर्थात् पुष्टिकारक दवाओं को जानने वाला, सदा प्रसन्न हृदय, सुखी और इन्द्रियजित् होता है।

- चतुर्थ भाव का स्वामी एकादश में हो तो व्यक्ति गुप्तारोगी, उदारचित्त, गुणवान्, दानी और दूसरे का उपकार करने वाला होता है।

- चतुर्थ भाव का स्वामी व्यय भाव में स्थित हो तो व्यक्ति भवन सुख से रहित, दुर्व्यसनी, मूर्ख व आलसी होता है।

8.3.5 पंचमेश

- पंचम भाव पंचमेश लग्न भावस्थ हो तो व्यक्ति विद्वान्, पुत्रसुख–सम्पन्न, कुटिल एवं सदा धन संग्रह में तत्पर होता है।

- पंचमेश धन भाव में हो तो व्यक्ति अधिक पुत्र वाला धनवान्, कुटुम्ब (बड़े परिवार) का पालन करने वाला, स्वाभिमानी व लोकप्रिय होता है।

- सहज भाव में स्थित पंचम भाव स्वामी भाइयों का प्रिय, चुगली करने वाला, कंजूस, दिखावा करने वाला होता है।

- चतुर्थ भाव में पंचम भाव स्वामी की स्थिति में व्यक्ति सुखी, दीर्घ काल तक माता के सुख से युक्त, धनवान्, सुबुद्धि, लक्ष्मीवान्, राजा का मंत्री या गुरु होता है।

- पंचमेश पंचम भाव में ही स्थित हो और शुभ–ग्रह युक्त हो तो व्यक्ति पुत्रवान् एवं पाप ग्रह युक्त होने पर सन्तान नहीं होती लेकिन गुणवानों व मित्रों का प्रिय होता है। "क्षणे तुष्टः क्षणे रुष्टः" की कहावत इस पर लागू होती है।

- पंचम भाव स्वामी छठे भाव में हो तो व्यक्ति पुत्र से शत्रुता करने वाला या पुत्र होकर मर जाते हैं या वह दत्तक पुत्र वाला होता है।

- सप्तम भाव में स्थित सुतेश होने पर व्यक्ति स्वाभिमानी, सभी धर्मों का आदर करने वाला, पुष्ट शरीर वाला, धर्मपालक, तेजस्वी, परिवार सुख युक्त व भक्तिमान् होता है।

- पंचम का स्वामी अष्टमस्थ हो तो व्यक्ति कम पुत्रों वाला या पुत्र सुख में कमी वाला, श्वास या कास रोग युक्त, क्रोधी व सुख रहित होता है। यह व्यक्ति रसायन जानने वाला डॉक्टर होता है।

- पंचमेश नवम भाव में हो तो व्यक्ति का पुत्र राजा के समान, राजा और कुलदीपक होता है। स्वयं ग्रन्थ रचना करने वाला, कार्यों में दक्ष व अधिक पुत्र वाला होता है।

- पंचम का स्वामी दशम भाव में स्थित होने पर व्यक्ति राजयोग युक्त, सन्तान से सुखी, विविध सुख भोगने वाला व प्रसिद्ध होता है।

- पंचमेश एकादश भाव में स्थित हो तो व्यक्ति विद्वान्, लोकप्रिय, दक्ष, ग्रन्थों की रचना करने वाला धनवान् होता है।

- सुतेश द्वादश भावस्थ होने पर पुत्र सुख नहीं होता, कहीं–कहीं दत्तक पुत्र युक्त भी कहा है। सन्तान सुख में कमी होती है। शुभ पंचमेश अथवा शुभ युक्त हो तो भक्तिमान् व पुत्रवान् होता है।

8.3.6 षष्ठ भावेश

- षष्ठेश लग्न भाव में स्थित हो तो व्यक्ति रोगी, यशस्वी, स्वयं अपनी हानि करने वाला धनवान्, स्वाभिमानी, गुणवान् व साहसी होता है।

- द्वितीय भाव में स्थित षष्ठेश से व्यक्ति साहसी, कुल में अग्रणी व प्रसिद्ध परदेश में निवास करने वाला सुखी, अच्छा वक्ता व सदैव कार्यरत होता है।

- सहज भावस्थ षष्ठेश व्यक्ति को क्रोधी लेकिन पराक्रम रहित, नौकरों को वश में न रख सकने वाला एवं भ्रातृशत्रु होता है।

- षष्ठभाव का स्वामी चतुर्थ में हो तो व्यक्ति माता के सुख से हीन, अतिस्वाभिमानी, चुगली करने वाला, द्वेष युक्त, चंचल मन वाला व अतिधनी होता है।

- षष्ठेष पंचम भाव में गया हो तो व्यक्ति का धन स्थिर नहीं रहता। पुत्र से विरोध रहता है यह व्यक्ति स्वयं सुखी, करुण हृदय परन्तु स्वार्थी होता है।

- षष्ठेष षष्ठ में होने पर व्यक्ति अपने बन्धुओं से विरोध रखने वाला, अन्य लोगों के साथ मैत्री युक्त रहता है।

- षष्ठेष सप्तम में होने पर स्त्रीसुख में कमी होती है, ऐसा व्यक्ति कीर्तियुक्त, गुणवान्, स्वाभिमानी, साहसी एवं धनवान् होता है।

- षष्ठेष अष्टम में स्थित होने पर व्यक्ति रुग्ण, पण्डितों का शत्रु, दूसरे के धन का लोभी, अन्य स्त्री में आसक्त और अपवित्र होता है।

- षष्ठ भाव स्वामी नवम भावस्थ हो तो व्यक्ति लकड़ी व पत्थर बेचने वाला तथा व्यापार में कहीं लाभ कहीं हानि प्राप्त करता है।

- षष्ठेश के दशम भाव में स्थित होने पर अपने कुल में दीपक, पिता का विरोधी, अच्छा वक्ता एवं परदेश में सुखी होता है।

- षष्ठ भाव का स्वामी लाभ भाव में स्थित होने पर व्यक्ति शत्रु के धन को पाने वाला, गुणवान्, साहसी, स्वाभिमानी परन्तु पुत्र सुख से रहित होता है।

- द्वादश भाव में स्थित षष्ठेश होने पर व्यक्ति व्यसन में व्यय करने वाला, विद्वानों से वैर भाव रखने वाला एवं जीवों के लिए हिंसक होता है।

8.3.7 सप्तमेश

- सप्तमेश लग्न में स्थित हो तो व्यक्ति अन्य स्त्री में आसक्त, दुष्ट प्रकृति, तीव्रबुद्धिवाला, अधैर्यवान्, वातरोग से पीड़ित होता है।

- द्वितीय भाव में सप्तमेश होने पर व्यक्ति अधिक स्त्रियों में आसक्त होता है। स्त्री के माध्यम से धन प्राप्त करने वाला व दीर्घ सूत्री होता है।

- सप्तमेश तृतीय भाव में होने पर सन्तान होकर मर जाती है। प्रयत्न करने पर पुत्र सन्तति जीवित रहती है।

- चतुर्थ भाव में सप्तमेश होने पर पत्नी वश में नहीं होती अर्थात् स्वेच्छाचारिणी होती है। व्यक्ति स्वयं सत्यप्रिय, बुद्धिमान्, धर्मात्मा और दाँत सम्बन्धी रोगों से पीड़ित होता है। तथा सब प्रकार की सम्पत्तियों से युक्त होता है।

- सप्तमेश पंचम भाव में स्थित होने पर व्यक्ति स्वाभिमानी, सभी गुणों से युक्त, सदा प्रसन्न चित्त व सभी धनों से सम्पन्न होता है।

- षष्ठ भाव में स्थित सप्तमेश होने पर व्यक्ति की पत्नी रोगिणी होती है। अथवा स्त्री के साथ विरोध रखने वाला स्वयं क्रोधी व सुखहीन होता है।

- सप्तम भाव का स्वामी सप्तम भाव में स्थित हो तो पत्नी से सुखी, धैर्यवान्, तीव्र बुद्धि वाला लेकिन कामी और हृदय रोग युक्त होता है। सप्तमेश अष्टम भाव में होने पर व्यक्ति को पत्नी सुख भी कम मिलता है अथवा पत्नी रोगिणी, दुश्चरित्रा और स्वछन्द होती है।

- सप्तमेश नवम भाव में स्थित हो तो अधिक स्त्रियों में आसक्त अथवा स्त्रियों से लाभ वाला, स्त्री के अधीन हृदय वाला, बहुत कार्य आरम्भ करने वाला होता है।

- सप्तमेश दशम में स्थित होने पर स्वेच्छाचारिणी स्त्री युक्त किन्तु व्यक्ति स्वयं धर्म परायण और धनवान् व पुत्रवान् होता है।

- सप्तमेश एकादश भाव में हो तो मनुष्य पत्नी से धन लाभ प्राप्त करने वाला, पुत्र सुख में कमी व अधिक कन्या सन्तान होता है।

- सप्तम भाव स्वामी द्वादश भाव में स्थित हो तो जातक दरिद्र, कृपण, कपड़े से आजीविका प्राप्त करने वाला, सुन्दर लेकिन व्ययशील स्वभाव पत्नी होती है।

8.3.8 अष्टमेश

- अष्टमेश लग्नस्थ हो तो व्यक्ति को अल्प शरीर का सुख, देवताओं व ब्राह्मणों का आलोचक, सदा व्रण युक्त व रोगी होता है।

- अष्टम भाव स्वामी द्वितीय भाव में होने पर बाहुबल हीन, अल्पधनी होता है। ऐसे व्यक्ति की गई सम्पत्ति नहीं लौटती।

- अष्टम भावेश तृतीय भावस्थ हो तो भाइयों के सुख से रहित, आलसी, भृत्य व पराक्रम रहित होता है।

- अष्टम भाव स्वामी चतुर्थ भाव में स्थित हो तो मातृरहित, भवन व भूमि सम्पत्ति से रहित तथा मित्रद्वेषी होता है।

- अष्टम भाव स्वामी पंचम में हो तो मूढ़, अल्प पुत्र, लम्बी आयु वाला, धनवान् होता है।

- अष्टमेश छठे भाव में गया हो तो रोगी, शत्रुजित् एवं प्रभावशाली होता है तथा इसे सर्प व जल से भय होता है।

- अष्टमेश सप्तमस्थ होने पर दो पत्नी वाला होता है उसे व्यापार में हानि होती है। सप्तम भाव में पाप ग्रह होने पर व्यापार हानि विशेष होती है।

- अष्टमेश अष्टम भाव में ही होने की स्थिति में व्यक्ति लम्बी आयु वाला, द्यूत क्रीडा में रत, चोर तथा पापी या गुरु का आलोचक होता है।

- अष्टमेश नवम भाव में हो तो व्यक्ति धर्म विरोधी, पापी, ईश्वर पर विश्वास न करने वाला, दुष्ट पत्नी वाला व परद्रव्यहारक होता है।

- दशम भाव में अष्टमेश हो तो पिता के सुख से रहित, चुगली करने वाला, अकर्मण्य व कर्त्तव्यहीन होता है। शुभ ग्रह से युक्त होने पर यह फल कम होता है।

- अष्टम भाव स्वामी आय भावस्थ पाप युक्त होने पर धनरहित, बचपन में दु:खी, अनन्तर सुखी तथा दीर्घायु होता है।

- द्वादश भाव में अष्टमेश स्थित होने पर बुरे कार्यों में व्यय करने वाला तथा पाप ग्रह युत होने पर अल्पायु होता है।

8.3.9 भाग्येश

- नवम भाव स्वामी, लग्नस्थ हो तो व्यक्ति भाग्यवान् राजा द्वारा पूज्य, सुशील, सौम्य व्यक्तित्व वाला, विद्यावान् व लोगों द्वारा पूज्य होता है।

- भाग्येश धन भावस्थ हो तो स्त्री पुत्रादि सुख युक्त, पण्डित, लोक प्रिय व कामी होता है।

- भाग्येश भाव स्वामी तृतीय भाव में हो तो भ्रातृसुख युक्त, धनवान्, पराक्रमी, रूपवान, गुणवान् व शीलयुक्त होता है।

- भाग्येश चतुर्थ भाव में होने पर व्यक्ति भवन व वाहन के सुख से सम्पन्न, समस्त सम्पत्तियों से युक्त पुण्यवान्, वाक् चतुर, प्रसिद्ध, लोकपूज्य व साहसी होता है।

- भाग्य भाव का स्वामी पंचम भावस्थ होने पर व्यक्ति पुत्रवान्, भाग्यवान्, गुरुभक्त, धैर्ययुक्त, धर्मात्मा व पण्डित होता है।

- षष्ठ भावस्थ भाग्य भाव का स्वामी मामा के सुख से रहित तथा शत्रुओं से सदैव पीड़ा प्रदान करता है।

- सप्तम भाव में भाग्येश हो तो पत्नी से भाग्योदय, गुणवान्, कीर्तिमान्, ब्राह्मणों से श्रेष्ठ, कामी तथा कभी–कभी सफलता में बाधा वाला होता है।

- भाग्य भाव का स्वामी अष्टमस्थ हो तो व्यक्ति भाग्यरहित, बड़े भाई के सुख से हीन तथा भाग्य के उतार चढ़ाव से दु:खी होता है।

- नवम भावस्थ भाग्येश के होने पर व्यक्ति अत्यन्त भाग्यशाली, गुणवान्, सौन्दर्यशाली व भ्रातृ–सुख से युक्त होता है।

- भाग्येश यदि दशम भाव में स्थित हो तो राजा या राजा के समान, मन्त्री या सेनापति, गुणवान्, लोकप्रसिद्ध अथवा पूजनीय होता है।

- लाभ–भाव में भाग्य भावेश स्थित हो तो प्रतिदिन लाभ पाने वाला, गुरुभक्त, स्नेही हृदय वाला, स्वाभिमानी, गुणवान् व पुण्यशील होता है।

- भाग्यभाव का स्वामी द्वादश भाव में हो तो भाग्य रहित, शुभ कार्यों में अधिक व्यय वाला होता है। द्वादश भाव में तुला में नवमेश हो तो विशेषतया भाग्यहीन होता है।

8.3.10 कर्मेश :

- दशम भाव का स्वामी लग्न में हो तो जातक विद्वान्, ख्यातिमान्, धनवान्, कवि, बाल्यकाल में रोगी तथा तत्पश्चात् सुखी एवं प्रतिदिन लाभ प्राप्त करने वाला होता है।

- कर्मेश के द्वितीय भाव में स्थित होने से जातक धनवान्, गुणवान् राजा द्वारा मान्य, दानी व पित्रादि सुख से युक्त होता है।

- दशम भाव का स्वामी तृतीय भाव में हो तो जातक भाई तथा नौकरों के सुख से युक्त पराक्रमी, गुणसम्पन्न तथा सत्यवान् होता है।

- दशमेश चतुर्थ भाव में हो तो जातक सुखी, माता का भक्त, वाहन, भूमि व भवन का स्वामी, गुणवान् तथा धनवान् होता है।

- कर्म भाव का स्वामी पंचम भाव में स्थित हो तो जातक सभी विद्याओं से युक्त, सदैव प्रफुल्लित रहने वाला, धन तथा पुत्रों से युक्त होता है।

- दशमेश षष्ठ भाव में होने पर जातक पिता के सुख से रहित, चतुर होते हुए भी धनहीन तथा शत्रुओं द्वारा पीड़ा प्राप्त करता है।

- दशम भाव का स्वामी सातवें भाव में हो तो जातक पत्नी के सुख से युक्त, प्रज्ञावान्, गुणवान्, सत्य बोलने वाला तथा सदैव सत्य धर्म का पालन करने वाला होता है।

- कर्म भाव का स्वामी आठवें भाव में स्थित हो तो जातक कर्त्तव्य विमुख, दीर्घजीवी परनिन्दा करने वाला होता है।

- कर्मेश नवम भाव में स्थित हो तो जातक राजकुल में जन्म लेने पर राजा तथा अन्य कुल में जन्म लेने पर राजा के समान तथा धन, वैभव, पुत्रादि के सुख से युक्त होता है।

- कर्म भाव का स्वामी दशमस्थ होने पर जातक सभी कार्यों में चतुर, सुखी, पुरुषार्थी, सत्य बोलने वाला तथा गुरु का भक्त होता है।

- दशमेश लाभ भाव में स्थित हो तो व्यक्ति धन व पुत्र सुख से युक्त, प्रसन्न, गुणवान्, सत्यवक्ता तथा सदैव सुखी रहता है।

- कर्मेश व्ययभाव में हो तो व्यक्ति को शत्रु से भय होता है और बुद्धिमान् होते हुए भी उसे चिन्तायुक्त रहना पड़ता है।

8.3.11 लाभेश

- **एकादश भाव :** लाभ भाव का स्वामी लग्नस्थ हो तो जातक सत्यवादी, गुणसम्पन्न, धनी, सुखी, दूसरों के दु:ख को अपना दु:ख समझने वाला, कवि, वाक्पटु तथा सदैव लाभ से युक्त होता है।

- लाभेश धन भाव में हो तो व्यक्ति समस्त सम्पत्तियों से युक्त, सभी सिद्धियों को प्राप्त करने वाला, दानी, धार्मिक व सदैव सुखी होता है।

- लाभेश सहज भाव में हो तो व्यक्ति सभी कर्मों में कुशल, धनवान् व भ्रातृसुख से युक्त होता है तथा उसे कभी–कभी पीड़ा का भय होता है।

- लाभ भाव का स्वामी सुख भाव में हो तो जातक माता के कुल से लाभ प्राप्त करने वाला, तीर्थाटन करने वाला तथा भवन–भूमि के सुख से युक्त होता है।

- एकादशेश पंचम भाव में हो तो जातक के पुत्र सुखी होते हैं। तथा वह स्वयं विद्वान्, सुशील, धर्मपरायण तथा सुखी होता है।

- लाभेश षष्ठ भाव में स्थित हो तो जातक रोगी, कुटिलबुद्धि, परदेश में रहने वाला होकर शत्रुओं द्वारा पीड़ित होता है।

- एकादश भाव का स्वामी सप्तम भाव में स्थित हो तो जातक पत्नी के कुल से सदैव लाभ प्राप्त करने वाला, उदार, गुणवान्, कामी तथा पत्नी के वश में रहने वाला होता है।

- लाभेश अष्टम भाव में स्थित हो तो जातक दीर्घजीवी होता है। उसे अपने कार्यों में हानि तथा प्रथम पत्नी के लिए कष्टप्रद होता है।

- लाभ भाव का स्वामी नवम भाव में हो तो जातक भाग्यशाली, चतुर, सत्यवक्ता, राजा द्वारा पूज्य तथा समस्त प्रकार की सम्पत्तियों का स्वामी होता है।

- एकादशेश दशम भाव में स्थित हो तो जातक राजा द्वारा पूज्य, गुणवान्, स्वधर्म में रत, सत्यवादी तथा इन्द्रियजित् होता है।

- लाभ भाव का स्वामी एकादश भाव में स्थित हो तो व्यक्ति सभी कार्यों से लाभ, प्राप्त करने वाला, विद्वान् व दिन प्रतिदिन उसके सुख में वृद्धि होती है।

- लाभेश व्यय स्थान में हो तो व्यक्ति सदैव सत्कर्मों पर व्यय करने वाला, कामी, अधिक पत्नियों वाला और निम्न जाति से सम्बन्ध रखने वाला होता है।

8.3.12 व्यय भावेश

- व्यय भाव का स्वामी लग्न में स्थित होने पर अधिक व्यय करने वाला, क्षीणकाय या अल्पबली, कफरोगी, धन और विद्या कष्ट से प्राप्त होती है।

- व्ययेश के द्वितीय भाव में स्थित होने पर व्यक्ति सदैव शुभ–कार्य पर व्यय करने वाला, धर्म परायण–प्रिय बोलने वाला, गुणवान् एवं सुखी होते हैं।

- व्यय भाव स्वामी तृतीय भावस्थ हो तो व्यक्ति को भ्रातृसुख कम होता है। दूसरों से विरोध रखने वाला यह जातक अपने शरीर का पोषण करने वाला होता है।

- व्यय भावेश चतुर्थ भाव में स्थित होने पर माता का अल्प सुख होता है। भूमि–भवन, वाहन सुख से हीन होता है।

- व्यय भाव का स्वामी पंचम भावस्थ हो तो व्यक्ति अल्प पुत्र व विद्या वाला, पुत्र के लिए व्यय करने वाला तथा तीर्थाटन में व्यस्त रहता है।

- षष्ठ भाव में स्थित व्ययेश हो तो व्यक्ति स्वजनों से विरोध रखने वाला, क्रोध करने वाला, पापी, दु:खी तथा अन्य स्त्री में आसक्त होता है।

- सप्तम भाव में स्थित व्यय भाव का स्वामी व्यक्ति को स्त्री के लिए व्यय करने वाला, वस्तु स्त्रीसुख से व विद्या–बल से रहित होता है।

- व्यय भाव का स्वामी यदि अष्टमस्थ हो तो व्यक्ति को सदा लाभ होता है तथा वह मधुर व प्रिय वाणी युक्त, मध्यम आयु समस्त गुणों से युक्त होता है।

- व्यय भाव का स्वामी नवम में स्थित होने पर व्यक्ति गुरु से द्वेष करने वाला, मित्रविरोधी परन्तु अपना कार्य करने में संलग्न होता है।

- दशमेश व्यय भाव स्वामी हो तो व्यक्ति राज कुल में व्यय करने वाला, पिता के अल्प सुख वाला होता है।

- एकादश भाव में व्यय भाव का स्वामी स्थित होने पर व्यक्ति को लाभ में हानि तथा कभी–कभी दूसरे के द्वारा सुरक्षित धन की प्राप्ति भी होती है।
- व्यय भाव का स्वामी व्यय में ही स्थित होने पर व्यक्ति को व्यय अधिक करना पड़ता है, साथ ही ऐसे व्यक्ति को शरीर का सुख भी नहीं होता।

8.4 सूर्यादि ग्रहों का द्वादश भावों में फल

8.4.1 सूर्य

यदि जन्म के समय सूर्य लग्न में हो जातक अल्प केश तथा रूखे नेत्र वाला, आलसी, उग्र स्वभाव युक्त, लम्बा, अहंकारी, साहसी, क्रूर तथा क्षमा न करने वाला होगा। यदि जन्म लग्न कर्क हो और उसमें सूर्य हो तो मनुष्य की आंखो में व्रण हाता है। यदि मेष में स्थित सूर्य लग्न में हो तो भी व्यक्ति नेत्र रोगी होता है। यदि सिंह राशि का सूर्य लग्न में हो तो व्यक्ति को रतौंधी रोग होता है। यदि तुला राशि का सूर्य लग्न में हो तो अनिष्ट फल देता है। मनुष्य दरिद्र रहता है। सूर्य द्वितीय भाव में हो तो मनुष्य विद्या, विनम्रता तथा धन से हीन, दोषयुक्त, वाणी (हकलाना या इसी प्रकार का दोष) वाला होता है। यदि सूर्य तृतीय में हो तो मनुष्य बलवान्, शूरवीर, समृद्ध तथा उदार होता है। किन्तु अपने स्वजनों से शत्रुता रखता है। यदि चौथे स्थान में सूर्य हो तो व्यक्ति सुख, बन्धु–बान्धव, मित्र तथा भूमि से रहित होता है। वह भवनहीन भी होता है। बन्धु, मित्र, भूमि, भवन आदि का विचार चतुर्थ भाव से किया जाता है और चतुर्थ में क्रूर ग्रह होने का फल इनके विषय में नकारात्मक होता है। ऐसा व्यक्ति अपने पिता से प्राप्त सम्पत्ति को व्यय कर देता है। ऐसा व्यक्ति राजा (सरकार) की सेवा करता है। अगर सूर्य पंचम में हो तो व्यक्ति सुखहीन, धनहीन, आयुहीन, पुत्रहीन हो। पंचम भाव का सूर्य ज्येष्ठ पुत्र के लिए घातक होता है। किन्तु जातक बुद्धिमान् तथा वन में विचरण करने का शौकीन होता है। यदि षष्ठ स्थान में सूर्य हो तो मनुष्य राजा की तरह वैभव से युक्त, प्रसिद्ध, धनवान्, विजयी व गुणवान् होता है। यदि सूर्य सप्तम में हो तो दोष युक्त अथवा विकारयुक्त शरीर वाला हो। यह जातक राजविरुद्ध अर्थात् सरकार विरोधी कार्य करता है। ऐसा व्यक्ति व्यर्थ भ्रमण करता रहता है तथा अपमान को प्राप्त होता है। सप्तम में सूर्य स्त्री सुख को भी कम करता है। यदि अष्टम में सूर्य हो तो व्यक्ति धनहीन, अल्पायु तथा मित्रहीन हो। जातक के नेत्रों की ज्योति मन्द हो जाती है। यदि सूर्य नवम भाव में हो तो पिता के सुख में कमी होती है। नवम में सूर्य सन्तान व बन्धु सुख प्रदान करता है। ऐसा जातक ब्राह्मण व देवताओं का आदर करता है। दशम में सूर्य हो तो जातक बुद्धिमान्, बलवान्, धनवान् व यशस्वी और राजा के समान वैभवशाली होता है। यदि सूर्य ग्यारहवें भाव में हो तो मनुष्य धनवान् व दीर्घायु होता है ऐसा जातक शोकरहित व सुखी होता है तथा व्यक्तियों के बहुत बड़े समूह का नेतृत्व करता है। यदि सूर्य बारहवें भाव में हो तो व्यक्ति पितृविरोधी होता है। ऐसा जातक नेत्ररोगी, पुत्रहीन तथा धनहीन होता है।

8.4.2 चन्द्रमा

यदि शुक्ल पक्ष का चन्द्र लग्नस्थ हो तो मनुष्य साहसी, दृढ़ शरीर वाला, बलशाली, धनवान् व दीर्घजीवी होता है। किन्तु यदि कृष्णपक्ष का चन्द्रमा हो तो इसके विपरीत फल समझना चाहिए। शुक्ल व कृष्ण पक्ष के साथ–साथ चन्द्रमा की कलाओं अर्थात् चन्द्रबल का भी ध्यान रखना चाहिए। यदि चन्द्रमा धन स्थान में हो तो मनुष्य मृदुभाषी, ऐश्वर्यशाली व धनाढ्य होता है। किन्तु उसकी वाणी में कुछ विकलता होती है। यदि तीसरे भाव में चन्द्रमा हो तो भाईयों का सुख हो। ऐसा व्यक्ति अहंकारी, बलवान्, शूरवीर तथा अत्यन्त कंजूस होता है। यदि चतुर्थ भाव में चन्द्रमा हो तो जातक, सुखी भोगी, त्यागी, उत्तम मित्रों से युक्त, वाहन सुख से सम्पन्न और यशस्वी होता है। यदि पंचम में चन्द्रमा हो तो व्यक्ति मन्द गति वाला, बुद्धिमान् तथा उत्तम पुत्रों से युक्त हो। ऐसा व्यक्ति राजा के समान होता है। यदि चन्द्रमा छठे भाव में स्थित हो तो मनुष्य अल्पायु, अल्पबुद्धि व उदर रोगी होता है तथा पराभव को प्राप्त होता है। यदि सप्तम में चन्द्रमा हो तो व्यक्ति सौम्य व रूपवान् हो। उसकी पत्नी भी अत्यन्त सुन्दर हो तथा पति–पत्नी में प्रेम भी होता है। चन्द्रमा अष्टम में होता है तो जातक रोगी व अल्पायु होता है। चन्द्रमा नवम में होने पर जातक पुत्रवान् तथा धार्मिक आचरण करने वाला होता है। यदि दशम में चन्द्रमा हो तो ऐसा व्यक्ति जो भी कार्य करता है उसमें उसे प्रारम्भ में ही सफलता मिल जाती है। ऐसा जातक शुभ कार्य करता है तथा सज्जनों की सहायता करता है। ग्यारहवें भाव में चन्द्रमा होने पर मनुष्य विद्वान्, दीर्घायु, धनसम्पन्न, पुत्रयुक्त और नौकर चाकरों वाला होता है। व्यय भावगत चन्द्रमा का निकृष्ट फल मिलता है और अन्य व्यक्तियों की ईर्ष्या से पीड़ित होता है।

8.4.3 मंगल

मंगल लग्न में होने पर व्यक्ति अत्यन्त क्रूर व साहसी होता है। किन्तु ऐसे व्यक्ति के शरीर में चोट लगती है तथा वह अल्पायु होता है। यदि द्वितीय भाव में मंगल हो तो या तो व्यक्ति का चेहरा सुन्दर नहीं होता या वह बोलने में कुशल नहीं होता। ऐसा जातक विद्याहीन, निर्धन और बुरे लोगों की नौकरी करने वाला होता है। तृतीय भाव में मंगल होने पर व्यक्ति सद्गुणी, धनवान्, शूरवीर व सुखी होता है। ऐसे व्यक्ति किसी की अधीनता स्वीकार नहीं करता। ऐसे जातक को छोटे भाइयों का सुख नहीं मिलता। यदि चतुर्थ में मंगल हो तो मनुष्य माता, मित्रों, वाहन तथा भूमि के सुख से रहित होता है। अर्थात् चतुर्थ भाव से जिन–जिन बातों का विचार करते हैं उन सबके सुख में कमी करता है। यदि पंचम में मंगल हो तो सन्तानहीन या सन्तान के सुख से रहित होता है। उसके जीवन में प्रायः अनिष्ट होते रहते हैं। ऐसा व्यक्ति चुगलखोर और अल्पबुद्धि होता है। छठे भाव में मंगल होने पर मनुष्य धनी, प्रसिद्ध शत्रुजित् तथा राजा के समान ऐश्वर्यशाली होता है। सप्तम में हो तो अनुचित कार्य करने वाला, रोगी, रास्ते में भटकने वाला हो तथा उसकी पत्नी के लिए कष्ट हो।

सप्तम पत्नी का स्थान है सप्तम में मंगल होने पर जातक प्रबल मांगलिक होता है, ऐसे में विवाह देर से होता है तथा ऐसा मंगल पत्नी के लिए कष्टकारी होता है। किन्तु यदि पत्नी मांगलिक हो तो सप्तम के मंगल का दोष निवारण हो जाता है। अष्टम में मंगल भी निकृष्ट फल देता है। ऐसा जातक रोगी, खराब शरीर वाला, निर्धन और अल्पजीवी होता है और उसे निन्दा भी सहन करनी पड़ती है। मंगल नवम भाव में हो तो मनुष्य राजा का प्रिय पात्र होता है तथा अन्य व्यक्ति उससे द्वेष करते हैं। ऐसे जातक के पितृसुख में कमी होती है। ऐसा व्यक्ति लोगों को पीड़ा भी पहुँचाता है। यदि दशम में मंगल हो तो व्यक्ति क्रूर, दानी, राजा के समान पराक्रमी तथा विशिष्ट व्यक्तियों द्वारा प्रशंसित होता है। यदि मंगल द्वादश में हो तो ऐसा व्यक्ति नेत्रविकारयुक्त, चुगलखोर, निर्दयी, पत्नी रहित तथा नीच होता है।

8.4.4 बुध

बुध लग्न भाव में स्थित हो तो व्यक्ति दीर्घायु, शास्त्रज्ञ, मधुर वाणी बोलने वाला व चतुर वक्ता होता है। यदि द्वितीय भाव में बुध हो तो व्यक्ति अपनी बुद्धि से धनोपार्जन करता है। ऐसा व्यक्ति निर्मल वाणी वाला, बुद्धिमान् तथा कविता करने वाला होता है। ऐसे व्यक्ति को प्रायः भोजन में मिष्ठान्न प्राप्त होते हैं। यदि तृतीय भाव में बुध हो तो मनुष्य वीर तथा मध्य आयु होता है। उसके भाई बहिन अच्छे होते हैं। ऐसे व्यक्ति को अत्यधिक परिश्रम करना पड़ता है और वह दरिद्र होता है। यदि बुध चौथे भाव में हो तो मनुष्य विज्ञ एवं खुशामद करने वाला होता है। उसे मित्र, क्षेत्र, धन–धान्य, आदि का सुख प्राप्त होता हैं। पंचम में बुध होने पर विद्या के कारण उसके सुख और प्रतिष्ठा में वृद्धि होती है। उसके बहुत पुत्र होते हैं तथा व मन्त्रों का ज्ञाता होता है। यदि छठे में बुध हो तो व्यक्ति आलसी, कठोर वचन बोलने वाला, शत्रुओं का नाश करने वाला होता है किन्तु विवाद होने पर शीघ्र व अत्यधिक क्रोधित हो जाना है। सप्तम में बुध होने पर मनुष्य विद्वान्, सुन्दर वेषभूषा धारण करने वाला तथा पूर्ण महिमा को प्राप्त होता है। ऐसे जातक का विवाह धनवान् कुल की कन्या से होता है। अष्टम में बुध हो तो व्यक्ति सुप्रसिद्ध, दीर्घजीवी तथा अपने कुल के नियमों का पालन करने वाला श्रेष्ठ व्यक्ति होता है। नवम में बुध होने पर मनुष्य, ज्ञानी, धनवान्, धार्मिक और सद्गुणी होता है। ऐसा व्यक्ति अधिक बोलने वाला एवं कुशल वक्ता होता है। बुध दशम स्थान में हो तो व्यक्ति को कार्य आरम्भ करने के साथ ही सफलता प्राप्त हो जाती है। ऐसा जातक विद्वान्, बलशाली, प्रज्ञावान्, सुखी, सदाचरण करने वाला तथा सत्यमार्गी होता है। ग्यारहवें भाव में बुध हो तो व्यक्ति दीर्घायु, सत्यान्वेषी, अपार धन सम्पत्ति तथा अनुचरों का सुख प्राप्त करने वाला होता है। द्वादश भाव में बुध निकृष्ट फल देता है। ऐसा व्यक्ति दीन, विद्या से रहित, अपमान का पात्र, क्रूर तथा आलसी होता है।

8.4.5 बृहस्पति

बृहस्पति लग्नस्थ हो तो जातक सुन्दर, सत्कर्मी, चिरंजीवी व निर्भय होता है तथा उसे पुत्र सुख भी प्राप्त होता है। द्वितीय में बृहस्पति हो तो व्यक्ति बुद्धिमान्, सुन्दर मुखमण्डल वाला, कुशलवक्ता, उत्तम भोजन प्राप्त करने वाला तथा धनवान् होता है। तृतीय में बृहस्पति हो तो व्यक्ति पाप कर्म करने वाला, दुष्ट, कृपण और अनादर सहित हो। ऐसे जातक का भाई किसी उच्च पद पर होगा या सुप्रसिद्ध व्यक्ति होगा। चतुर्थ में बृहस्पति माता, सखा, अनुचर, पुत्र, पत्नी, धान्य आदि का सुख भी प्रदान करता है। पंचम में बृहस्पति मिश्रित फल देता है। जातक बुद्धिमान् तथा राजा का मन्त्री होता है किन्तु पुत्राभाव, पुत्रसंतति की मृत्यु अथवा पुत्रों के बुरे आचरण के कारण दु:खी होता है। छठे स्थान में बृहस्पति होने पर व्यक्ति शत्रुहन्ता, अपमान का पात्र, आलसी किन्तु मंत्रो का अनुष्ठान हो तो उत्तम पत्नी वाला, पुत्रवान, शोभावान् तथा अपने पिता से अधिक उदार हृदय वाला होता है। कुण्डली के सप्तम भाव में बृहस्पति हो तो व्यक्ति सौन्दर्य युक्त, भाग्यशाली, सुन्दर इच्छित स्त्री का पति पिता से अधिक वाकपटु, कवि, प्रधान–पण्डित और प्रसिद्ध होता है। अष्टम में बृहस्पति निकृष्ट फल कारक है। ऐसा व्यक्ति दीन होता है और नौकरी से आजीविका चलाता है। अष्टम में बृहस्पति वाला जघन्य कर्म करने वाला किन्तु दीर्घायु होता है। नवम में बृहस्पति हो तो जातक धनवान्, पुत्रवान्, प्रसिद्ध, धार्मिक तथा शुभ कार्यों के लिए तत्पर, राजा का मन्त्री होता है। दसवें भाव में बृहस्पति हो तो जातक अत्यन्त धनवान्, राजा का प्रिय, सदाचारी और यशस्वी होता है। यदि ग्यारहवें भाव में बृहस्पति हो तो मनुष्य धनवान्, निर्भय तथा दीर्घजीवी होता है। ऐसा व्यक्ति वाहन सुख प्राप्त करता है किन्तु उसके सन्तान कम होती है। यदि बृहस्पति बारहवें स्थान में हो तो ऐसे व्यक्ति से लोग द्वेष करते हैं। ऐसा जातक अपशब्द बोलने वाला, सन्तानरहित, पाप कर्म करने वाला, आलसी तथा सेवक होता है।

8.4.6 शुक्र

लग्न में शुक्र हो तो जातक सुन्दर शरीर वाला, दर्शनीय, सुखी तथा चिरंजीवी होता है। द्वितीय स्थान में शुक्र हो तो मनुष्य धन सम्पदा से युक्त तथा कवि होता है। शुक्र तृतीय स्थान में होने पर निकृष्ट फल देता है। ऐसा व्यक्ति कंजूस, अप्रिय, सुख–सम्पत्ति रहित तथा स्त्रीविहीन होता है। यदि चतुर्थ में शुक्र हो तो अच्छा वाहन, मकान, आभूषण, वस्त्र तथा सुगन्धित पदार्थो से सम्पन्न होता है। शुक्र पंचम भाव में हो तो मनुष्य समस्त सम्पत्ति से युक्त राजा के समान वैभव वाला, पुत्रों से सख प्राप्त करने वाला तथा बहुत बुद्धिमान् होता है। शुक्र छठे स्थान में हो तो जातक का कोई शत्रु नहीं होगा किन्तु वह धनरहित होगा। वह अनेक स्त्रियों में आसक्ति रखने वाला तथा दु:खी होता है। सप्तम स्थान में शुक्र हो तो व्यक्ति की पत्नी अच्छी होगी किन्तु यदि सप्तम भाव स्वामी की स्थिति अच्छी नहीं हो तो पत्नी की मृत्यु हो जाती है। अष्टम भाव में शुक्र हो तो जातक धनवान् दीर्घजीवी तथा भूमिपति होता है। नवम में शुक्र हो तो व्यक्ति को स्त्री, पुत्र व मित्रों का सुख प्राप्त होता है। ऐसा व्यक्ति धनवान् तथा देवता, अतिथि व गुरु का आदर करने वाला होता है। राजा

(सरकार) की कृपा से ऐसे जातक का भाग्योदय होता है। दशम भाव में शुक्र हो तो जातक सुखी उच्च पदासीन, यशस्वी, अत्यन्त बुद्धिमान् तथा मित्रों से युक्त होता है। एकादश भाव में शुक्र हो तो व्यक्ति धनी, दुःख रहित तथा पर स्त्रियों में आसक्ति रखने वाला होता है। शुक्र बारहवें भाव में हो तो मनुष्य आलसी, धन–सम्पदा युक्त, पतित, तथा यदि शनि अपनी उच्च राशि (तुला) अथवा स्वराशि (मकर या कुम्भ) में स्थित होकर लग्न में हो तो व्यक्ति राजा के समान किसी देश या नगर का अधिपति होता है।

8.4.7 शनि

शनि लग्न में हो तो जातक बाल्यकाल में दुःखी, पीडित, आगे के जीवन में भी दरिद्र, आलसी व दुखी होता है। मानसागरी के अनुसार यदि शनि धनु में हो तो बहुत अच्छा फल देता है। शनि दूसरे घर में हो तो जातक कुरूप, धनहीन तथा अन्यायी होगा। जीवन के उत्तरार्द्ध में वह अपना निवास स्थान छोड़कर अन्यन्त्र चला जाएगा तथा वहाँ उसे धन, वाहन तथा समस्त सुख के साधनों की प्राप्ति होगी। शनि तीसरे स्थान में हो तो जातक अत्यधिक बुद्धिमान्, उदार तथा स्त्री से सुख प्राप्त करता है परन्तु वह आलसी व दुःखी होता है। जन्म कुण्डली में शनि चौथे स्थान में हो तो मनुष्य को भवन, वाहन तथा माता का सुख नहीं मिलता। ऐसा व्यक्ति बाल्यकाल में रोगी भी होता है। चौथा स्थान सुख स्थान है, इसमें शनि का होना सुखों को नष्ट करता है इसलिए जातक सदैव दुःखी रहता है। पंचम स्थान में शनि हो तो मनुष्य दुष्ट तथा कुबुद्धि होता है। यह शनि ज्ञान, पुत्र, धन तथा प्रसन्नता इन सब के सुख में कमी करता है। ऐसा मनुष्य भ्रमणशील होता है अथवा उसकी बुद्धि भ्रान्त होती है। छठे घर में शनि होने पर जातक बहुभोजी, धनी शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने वाला, धृष्ट तथा अहंकारी होता है। सप्तम में शनि होने पर जातक कुत्सित स्त्री में आसक्त, दरिद्र, दुःखी होता है। अष्टम स्थान में शनि होने पर जातक मलिन, बवासीर का रोगी, भूखा, क्रूर तथा मित्रों द्वारा अवहेलना कर पात्र होता है। नवें भाव में शनि हो तो मनुष्य भाग्यहीन, धर्महीन, धन से रहित, सन्तान रहित, तथा पितृसुख से रहित होता है। नवम भाव में शनि होने पर व्यक्ति दुर्जन भी होता है। दशम में शनि उत्कृष्ट फलदायक है। ऐसा व्यक्ति राजा या राजा का मन्त्री होता है, अथवा अत्यन्त धनवान्, शूरवीर कृषिकर्म करने वाला व प्रसिद्ध होता है। प्राचीन समय में कृषि सबसे उत्तम व्यवसाय माना जाता था। वर्तमान समय में इसके स्थान पर उत्तम व्यवसाय समझना चाहिए। ग्यारहवें भाव में शनि हो तो व्यक्ति स्वस्थ, वीर, धनवान्, दीर्घजीवी तथा स्थिर सम्पत्ति तथा आय वाला होता है। बारहवें भाव में शनि अनिष्ट फल देता है ऐसा जातक धनहीन, निर्लज्ज, विकलांग, मूर्ख तथा पुत्रसुख से वंचित होता है।

8.4.8 राहु

लग्न में राहु हो तो व्यक्ति अल्पायु, धनवान् व बलवान् होता है। परन्तु ऐसे जातक के शरीर के ऊपरी भाग में कोई रोग होता है। यदि द्वितीय स्थान में राहु हो तो व्यक्ति गुप्त बात बोलने वाला अथवा द्वि–अर्थी बातें बोलने वाला होता है। ज्योतिष शास्त्र में राहु को चोर माना गया है इसलिए द्वितीय अर्थात् वाणी स्थान में राहु होने पर व्यक्ति कपटपूर्ण वाणी बोलता है। राहु तीसरे स्थान में हो तो जातक अंहकारी, भ्रातृविरोधी, धनवान्, दीर्घायु तथा दृढ़बुद्धि वाला होता है। चतुर्थ स्थान में राहु हो तो जातक बुद्धिहीन, दुख देने वाला मित्रों से युक्त, अल्पायु तथा कभी–कभी ही सुखी होता है। राहु पाँचवें भाव में हो तो व्यक्ति कठोर हृदय, नाक से बोलने वाला पेट का रोगी तथा पुत्रहीन होता है। छठे स्थान में राहु होने पर जातक धनवान् तथा दीर्घायु होता है, किन्तु वह शत्रु द्वारा या क्रूर ग्रह द्वारा पीड़ित होता है। ऐसा जातक गुदा रोग से भी पीड़ित होता है। सप्तम में राहु हो तो जातक स्वतन्त्र हीनबुद्धि होता है। ऐसे व्यक्ति स्त्री पर अपना धन खर्च कर देता है। अष्टम स्थान में राहु हो तो जातक विकलांग वात रोग से पीड़ित, अल्प आयु, कम पुत्रों वाला, दुष्ट कर्म करने वाला होता है। नवम स्थान में राहु हो तो मनुष्य अरुचिकर तथा अप्रिय वचन बोलने वाला तथा पुण्य कर्म न करने वाला होता है किन्तु किसी समुदाय, नगर या गाँव का नेतृत्व करता है। दशम स्थान में राहु होने पर व्यक्ति अल्प पुत्र वाला, दूसरे लोगों के कार्य में लगा रहने वाला, सत्कर्म हीन, निडर तथा प्रसिद्ध होता है। यदि एकादश में राहु हो तो व्यक्ति धनी, दीर्घायु, कम पुत्रों वाला तथा कान में किसी रोग वाला होता है। बारहवें स्थान में राहु बुरा फल देता है। ऐसा व्यक्ति जल रोग से पीड़ित, अत्यधिक खर्च करने वाला तथा छिपे हुए पाप कर्म करने वाला होता है।

8.4.9 केतु

केतु लग्न में हो तो जातक कृतघ्न, सुख से रहित, चुगली करने वाला, दुष्ट व्यक्तियों के साथ रहने वाला, विकलांग, स्थानच्युत तथा विवर्ण होता है। वर्ण शब्द के दो अर्थ होते हैं। जाति तथा शरीर। अतः विवर्ण का अर्थ जातिभ्रष्ट अथवा जिसके शरीर का रंग अच्छा न हो इनमें से कोई एक समझा जा सकता है। केतु दूसरे स्थान में होने पर व्यक्ति विद्या व धन से रहित, निकृष्ट वचन बोलने वाला तथा दूसरे व्यक्ति के यहाँ भोजन करने में निरत होता है। तृतीय स्थान में केतु मनुष्य को धनवान्, बलवान्, दीर्घायु तथा यशस्वी बनाता है। ऐसे व्यक्ति को स्त्री तथा अन्न का सुख भी प्राप्त होता है किन्तु तीसरे भाव का केतु भाई के लिए कष्टकारी होता है। चौथे स्थान में केतु हो तो व्यक्ति दूसरे के घर में रहता है। ऐसे व्यक्ति की भूमि, खेत, माता आदि के सुख में कमी होती है। उसे अपना जन्म स्थान भी छोड़ना पड़ता है। पाँचवें स्थान में केतु पुत्र के लिए कष्टप्रद होता है। व्यक्ति को पेट का रोग भी होता है। ऐसा जातक खल प्रवृत्ति का तथा दुर्बुद्धि होता है। उसे पिशाच बाधा भी होती है। षष्ठ में केतु होने पर जातक उदार, उत्तम गुणों से युक्त, अटल प्रसिद्ध श्रेष्ठ पद प्राप्त करने वाला तथा शत्रुजित् होता है। ऐसे जातक को प्रायः इष्ट सिद्धि होती है। सप्तम में केतु हो तो जातक को अपमानित होना पड़ता है। ऐसा व्यक्ति व्यभिचारिणी स्त्रियों में आसक्त होता है तथा

अपनी पत्नी से दूर रहना है। उसे आँतों का तथा धातु का रोग भी होता है। अष्टम में केतु होने पर व्यक्ति अल्पायु होता है उसका इष्टजनों से वियोग तथा कलह होता है। ऐसे जातक को सभी कार्यों में विरोध सहना पड़ता है। उसे प्रायः शस्त्र से चोट लगती है। केतु नवम भाव में हो तो व्यक्ति पापप्रवृत्ति से युक्त, अशुभ कार्यों को करने वाला, भाग्यहीन, दरिद्र, सद्गुणी व्यक्तियों की निन्दा करने वाला तथा पिता के सुख से रहित होता है। दशम स्थान में केतु हो तो सत्कर्मों में विघ्न होता है या व्यक्ति स्वयं सत्कर्मों में विघ्न उपस्थित करता है। ऐसा जातक तेजस्वी तथा अपने शौर्य के लिए प्रसिद्ध होता है। किन्तु दुष्ट कर्म भी करता है। केतु लाभ स्थान में होने पर जातक के पास सभी प्रकार की भोग सामग्री होती है तथा उसे प्रत्येक कार्य में सफलता प्राप्त होती है। द्वादश भाव का केतु बुरा फल प्रदान करता है। ऐसा व्यक्ति गुप्त रूप से पाप कर्मों में लिप्त रहता है तथा दुष्ट कार्यों में धन खर्च करता है।

8.5 सारांश

द्वादश भावों के कारकत्व के साथ–साथ लग्नेश– द्वितीय तृतीय सभी की 12 भावों में स्थिति के फल का ज्ञान फलादेश में अति महत्वपूर्ण है। इसी फलादेश क्रम में 12 भावों में सूर्य–चन्द्रादि विभिन्न भावों में ग्रहों की स्थिति के प्रभाव का अध्ययन आपने किया।

8.6 शब्दावली

राज–तुल्य : राजा के समान

समस्त–सम्पत्ति–सम्पन्न : भूमि–भवन–वाहनादि से सम्पन्न

सहजेश : तृतीय भाव का स्वामी

चिरंजीवी : दीर्घायु

कृतघ्न : किये हुए को न मानने वाला

अभ्यास प्रश्न

1. लग्नेश की सप्तम भाव मे स्थिति का फल बताइयें।
2. चतुर्थ भाव का स्वामी सप्तम में स्थित होने का क्या प्रभाव होगा?
3. पंचम भावेश के अष्टम भाव में होने का प्रभाव बताइये।
4. नवम भावेश के नवम में ही स्थित होने पर किस प्रकार का प्रभाव होगा?
5. सूर्य की पंचम भाव में स्थिति का फल क्या होगा?
6. गुरु के सप्तम भाव में होने पर किस प्रकार का प्रभाव पड़ेगा?

7. शनि की तृतीय भाव में स्थिति का फल स्पष्ट करें।

8. शुक्र के चतुर्थ भावस्थ होने का क्या प्रभाव होता है?

8.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. सप्तम भाव में पापी लग्नेश होने पर पत्नी का नाश करने वाला तथा शुभ ग्रह होने पर भ्रमण करने वाला अथवा प्रसिद्ध, विरक्त तथा कभी राजा भी हो सकता है।

2. सप्तमभाव में चतुर्थ भावेश स्थित हो तो व्यक्ति विद्वान्, पैतृक धन का स्वेच्छा से त्याग करने वाला व सभा में कम बोलने वाला होता है।

3. पंचम का स्वामी अष्टमस्थ हो तो व्यक्ति कम पुत्रों वाला या पुत्रसुख में कमी वाला, श्वास या कास रोग युक्त, क्रोधी व सुख रहित होता है। यह व्यक्ति रसायन जानने वाला डॉक्टर होता है।

4.नवम भावस्थ भाग्येश के होने पर व्यक्ति अत्यन्त भाग्यशाली, गुणवान्, सौन्दर्यशाली व भ्रातृ–सुख से युक्त होता है।

5. अगर सूर्य पंचम में हो तो व्यक्ति सुखहीन, धनहीन, आयुहीन, पुत्रहीन हो। पंचम भाव का सूर्य ज्येष्ठ पुत्र के लिए घातक होता है। किन्तु जातक बुद्धिमान् तथा वन में विचरण करने का शौकीन होता है।

6. कुण्डली के सप्तम भाव में बृहस्पति हो तो व्यक्ति सौन्दर्य युक्त, भाग्यशाली, सुन्दर इच्छित स्त्री का पति पिता से अधिक वाक्पटु, कवि, प्रधान–पण्डित और प्रसिद्ध होता है।

7. शनि तीसरे स्थान में हो तो जातक अत्यधिक बुद्धिमान्, उदार तथा स्त्री से सुख प्राप्त करता है परन्तु वह आलसी व दुःखी होता है।

8.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. फल दीपिका– गोपेश कुमार झा

2. बृहत् पाराशर होरा शास्त्र– पद्मनाभ शास्त्री

3. सारावली– सोमेश्वर नाथ झा

8.9 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. विविध जन्म पत्रिकाओं में ग्रहों की लग्नादि स्थिति का फल विचार करना।

2. भाव फल निर्णय

3. भावार्थ रत्नाकर

8.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. लग्नेश, दशमेश तथा द्वादशेश की स्थिति का फल का विस्तार से वर्णन करिये।

2. सूर्य–मंगल, शनि तथा राहु की द्वादश भाव गत स्थिति का फल का वर्णन करें।

इकाई – 9 द्वादश राशियों में सूर्यादिग्रह–फल एवं राजयोग

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 द्वादश राशियों में सूर्यादि ग्रहों का फल

9.3.1 सूर्य का द्वादश राशियों में फल

9.3.2 चन्द्रमा का द्वादश राशियों में फल

9.3.3 मंगल का द्वादश राशियों में फल

9.3.4 बुध का द्वादश राशियों में फल

9.3.5 गुरु का द्वादश राशियों में फल

9.3.6 शुक्र का द्वादश राशियों में फल

9.3.7 शनि का द्वादश राशियों में फल

9.4 राजयोग

9.4.1 मेषादि द्वादश लग्नों में राजयोग कारक ग्रह

9.5 सारांश

9.6 शब्दावली

9.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

9.8 सन्दर्भग्रन्थ–सूची

9.9 उपयोगी व सहायक पाठ्य सामग्री

9.10 निबन्धात्मक प्रश्न

9.1 प्रस्तावना :

ज्योतिषीय फलादेश में विभिन्न भावों में सूर्यादि ग्रहों के फलादेश व विविध भावों में लग्नेश, द्वितीयेशादि भावेशों का फल महत्वपूर्ण होने के साथ–साथ द्वादश राशियों में सूर्यादि ग्रहों के फल का ज्ञान भी महत्वपूर्ण है।

प्रस्तुत इकाई में मेषादि द्वादश राशियों में सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुध, गुरु व शुक्र व शनि का फल वर्णन किया गया है। पूर्व अध्यायों में कथित फलों के साथ ऊहापोह कर इन राशि फलादेशों को मिश्रित करते हुए ज्योतिषी को व्यक्ति के व्यक्तित्व का फल किस प्रकार कहना चाहिए, इस सम्बन्ध में वर्णन किया गया है। साथ ही विभिन्न लग्नों में राजयोग का सामान्य विचार करने की प्रक्रिया का भी वर्णन किया गया है।

इस इकाई का फल–सम्बन्ध इकाईयों से सामंजस्य कर ज्योतिष के महत्वपूर्ण फलादेश किये जा सकते हैं।

9.2 उद्देश्य :

ज्योतिषशास्त्र में फलादेश कथन होरा शास्त्र का महत्वपूर्ण अंग है। विभिन्न पृथक्–पृथक् फलादेशों को सम्मिलित कर ही सम्पूर्ण फलादेश ऊहापोह द्वारा जातक को कहा जा सकता है।

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप :–

- द्वादश राशियों में स्थित सूर्य का फल लिख पायेंगे।
- चन्द्रमा के द्वादश राशियों में फल का वर्णन कर पायेंगे।
- विभिन्न राशियों में स्थित मंगल के प्रभाव का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- द्वादश राशियों में बुध की स्थिति के परिणाम का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- गुरु के द्वादश राशिस्थ होने का प्रभाव वर्णित कर सकेंगे।
- द्वादश राशियों में शुक्र की स्थिति का फल बता पायेंगे।
- शनि के द्वादश राशिस्थ होने के प्रभाव का वर्णन कर सकेंगे।
- राजयोग के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- विविध लग्नों में राजयोग बनाने वाले ग्रहों के सम्बन्धों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

9.3 द्वादश राशियों में सूर्यादि ग्रहों का फल

9.3.1 द्वादश राशियों में सूर्य :

मेष राशि में स्थित सूर्य व्यक्ति को शास्त्र की इच्छा रखने वाला, ग्रन्थ रचना के लिए विख्यात, युद्ध प्रेमी, कठिन कार्य को करने के लिए प्रेरित, भ्रमण प्रेमी, शक्तिशाली, मजबूत हड्डी वाला, साहस पूर्ण कार्य करने में सफल, पित्त और रक्त के कष्ट युक्त लेकिन राजा बनाता है।

वृष राशि में सूर्य के स्थित होने पर व्यक्ति मुख और आंखों के रोगों से पीड़ित, कलह सहन करने वाला तथा अल्प शत्रु, पुत्र वाला, देव भक्त, व्यवहार करने में कुशल, बुद्धिमान्, भोजन, आभूषण, सुन्दर वस्त्र तथा गन्ध से युक्त संगीतकलाओं का ज्ञाता, जल से भयभीत होता है।

सूर्य के मिथुन राशि में स्थित होने पर व्यक्ति बुद्धिमान्, मधुरवाणी वाला, स्नेहशील गुणों से युक्त, शास्त्रीय आचरण वाला, विज्ञान शास्त्र में कुशल, धनवान्, उदार हृदय वाला, चतुर, ज्योतिषी, दो माताओं वाला, सौन्दर्य व नम्रता युक्त होता है।

कर्क राशि में स्थित सूर्य व्यक्ति को कार्यों में चंचल, राजा के समान गुण होने के कारण प्रसिद्ध, स्वजनों का शत्रु, भाग्यरहित स्त्री का पति, रूपवान्, कफ व पित्त से पीड़ित, परिश्रम करने के कारण क्लेशयुक्त, मद्य आदि की इच्छा रखने वाला, अभिमानी, अच्छा वक्ता, दशाओं का ज्ञाता, धर्मात्मा, माता–पिता से विरोध रखने वाला होता है।

सिंह राशि में सूर्य स्थित हो तो व्यक्ति, शत्रुओं का हन्ता, क्रोधयुक्त, जंगल व किले में विचरण करने वाला, उत्साहयुक्त, शूरवीर, तेजवान्, मांस भक्षण करने वाला, गम्भीर, सदा बलवान्, बहरा या अधिक बोलने वाला, राजा, धन सम्पन्न एवं विख्यात होता है।

सूर्य अगर कन्या राशि में स्थित हो तो स्त्री के समान शरीर वाला, लज्जावान्, लिपियों का ज्ञाता, अल्पबल, मधुर भाषण करने वाला, मेधावान्, देवताओं और गुरुजनों का भक्त, सेवा करने में चतुर, वेदाध्ययन आदि एवं गाने–बजाने से सन्तुष्ट, कोमल और दीनतायुक्त वचन बोलने वाला होता है।

तुला राशि में सूर्य की स्थिति हो तो व्यक्ति की पराजय, मित्रता की हानि व अनावश्यक व्यय से दुःखी होता है। परदेश गमन में अभिरुचि रखने वाला, चंचल, निकृष्ट, प्रेम रहित, स्वर्ण व लौह से जीविका चलाने वाला, ईर्ष्या युक्त, दूसरों के कार्य में संलग्न, अन्य स्त्री में आसक्त, गन्दा, राजा से तिरस्कार पाने वाला व अड़ियल होता है।

वृश्चिक राशि में सूर्य होने पर व्यक्ति युद्ध के लिए प्रेरित, वेदादि धर्म में संलग्न लेकिन असत्य भाषी, मूर्ख, कलह कारिणी स्त्री वाला व उसकी आज्ञा का पालन कर्त्ता, शस्त्र, अग्नि अथवा विष से पीड़ित तथा माता और पिता का शत्रु होता है।

धनु राशि में सूर्य स्थित होने पर व्यक्ति धन सम्पन्न, राजा का प्रिय, विज्ञ ब्राह्मण व देवताओं का भक्त, विद्वानों द्वारा पूज्य, शस्त्र–अस्त्र व हस्त शिक्षा में दक्ष, प्रशान्त, धनवान्, सौन्दर्य युक्त, बन्धु–बान्धवों का कल्याण करने वाला एवं शक्ति सम्पन्न होता है।

मकर राशि में सूर्य स्थित होने पर जातक लोभ युक्त, दुश्चरित्रा स्त्री में आसक्त, बुरे कर्मों से अग्रसर होने वाला, लालच करने वाला, अनेक कार्यों में व्यस्त, भयभीत, बान्धव से हीन, अस्थिर धन वाला, भ्रमण प्रिय, कम बली एवं अपने पक्ष के विरोध के कारण नष्ट होने वाला होता है।

कुम्भ राशि में स्थित सूर्य होने पर व्यक्ति हृदय रोगी, शान्ति सम्पन्न, सज्जनों की निन्दा को प्राप्त, अत्यन्त क्रोध करने वाला, अन्य स्त्रियों के लिए सुन्दर, कार्य करने में निश्चिन्त, दुःखी अल्प धनयुक्त, चालाक, अस्थिर मित्रता वाला, अपवित्र शरीर वाला, चुगली करने वाला एवं झूठ बोलने वाला होता है।

मीन राशि में सूर्य की स्थिति होने पर व्यक्ति मित्रों का संग्रहकर्त्ता, स्त्री के प्रेम के कारण सुख संसाधनों की प्राप्ति वाला, विद्वान्, अनेक शत्रुओं को नष्ट करने वाला, प्रसिद्धि के लिए धन व्यय करने वाला, सौन्दर्य युक्त, पुत्र वा भृत्यों से यश प्राप्त करने वाला, मधुर बोलने वाला, ओजवान्, गुप्त लोगों से कष्ट को प्राप्त व भाईयों की अधिक संख्या वाला होता है।

9.3.2 चन्द्रमा

चन्द्रमा मेष राशि में स्थित होने पर व्यक्ति कान्ति युक्त शरीर वाला, स्थिर सम्पत्ति वाला, भ्रातृरहित, पराक्रमी, कुत्सित नख व शरीर वाला, मानधनी, कमल के समान आभायुक्त हाथ पैर वाला, अनेक पुत्रों युक्त, गोल नेत्रों वाला, स्नेह युक्त, जल से भयभीत, घाव से युक्त नसों वाला व स्त्री के आधीन होता है।

वृष राशि में चन्द्रमा स्थित होने पर बड़े वक्षस्थल वाला, अति दानशील, घने घुंघराले बालों वाला, कामुक, यशस्वी, सौन्दर्य युक्त, कन्या सन्तति वाला, उचित अनुचित का विवेक रखने वाला, जीवन के मध्यकाल व अन्तकाल में सुख का उपभोग करने वाला, बड़ी कमर–पैर–कन्धे और जंघाओं वाला, मुख–पीठ व कन्धों पर निशान वाला, सुन्दर चाल वाला तथा क्षमाशील होता है।

जन्म का चन्द्रमा यदि वृषभ राशि के पूर्वार्द्ध में स्थित हो तो व्यक्ति माता की मृत्यु का कारण बनता है। चन्द्रमा के वृषभ राशि के उत्तरार्द्ध में होने पर पितृवियोग होता है। मिथुन राशि में चन्द्रमा स्थित होने पर व्यक्ति उन्नत नासिका वाला, कृष्णनेत्र, सुरति विधियों व कलाओं का जानकार, कवि, विषय भोग करने वाला, मत्स्याधिप हस्त– चिह्नों से युक्त, ज्ञान में प्रवीण, शिराओं से युक्त, मनोहर, सौभाग्यशाली, हास्ययुक्त एवं प्रिय वचन बोलने वाला, स्त्री के अधीन रहने वाला,

विस्तृत शरीर वाला, नपुसंकों से मैत्री सम्बन्ध स्थापित करने वाला तथा दो माताओं द्वारा पालन–पोषण किया जाता है।

कर्क राशिस्थ चन्द्रमा होने पर व्यक्ति सौभाग्यशाली, भवन–मित्र–पर्यटन व ज्योतिष ज्ञान वाला, कामासक्त, किये हुए उपकार को मानने वाला, राजा का मन्त्री, सत्य आचरणवान्, परदेश में जाने वाला, उन्मादी, अधिक केशयुक्त, जल व पुष्पों में रुचि रखने वाला हानि एवं लाभ से अनुगत, महल–उपवन, बावड़ी का प्रेमी अथवा इनका निर्माण करने वाला एवं मोटे कण्ठ युक्त होता है।

चन्द्रमा जन्म समय पर सिंह राशिस्थ हो तो व्यक्ति स्थूल अस्थियों वाला, अल्प लोभ युक्त, मोटे मुख व कण्ठ वाला, छोटी व पीली दोनों आंखों वाला, स्त्री द्वेषी, क्षुधा–पिपासा से युक्त उदरवान्, दन्त–रोग पीड़ित, मांस–भक्षण करने वाला, दाता, तीक्ष्ण स्वभाव वाला, पुत्र–रहित अथवा कम–पुत्रों वाला, जंगलों एवं पहाड़ों का प्रेमी, माता का आज्ञाकारी, सुन्दर छाती वाला, पराक्रमी, स्वयं के कार्य की प्रशंसा करने वाला तथा सर्वत्र गम्भीर दृष्टि वाला होता है।

चन्द्रमा के कन्या राशिस्थ होने पर व्यक्ति स्त्री से प्रेम करने वाला, लम्बी भुजाओं, मनोहर शरीर, मुख तथा सुन्दर दांतों, आंखों व कर्ण युक्त, विद्वान्, आचार्य, धर्म पालनकर्त्ता, मधुर स्वर युक्त, सत्य एवं पवित्रता में प्रधान, धैर्यशाली, जीवों के प्रति दया युक्त, दूसरों का हितकारी, क्षमा एवं सौभाग्यशाली, अधिक कन्याओं व कम पुत्रों वाला होता है।

चन्द्रमा तुला राशिस्थ होने पर व्यक्ति उन्नत नासिका, विशाल नेत्र, दुर्बल मुख व शरीर, अधिक स्त्रियों व बैलों से सम्पन्न, गायों एवं भूमि से पवित्र बल वाला, वृषभ तुल्य अण्डकोष युक्त, देव ब्राह्मण भक्त, अति वैभव सम्पन्न, स्त्री के वशीभूत, हीनांग, अन्न ग्रहण करने में तत्पर एवं बन्धु वर्ग का उपकारी होता है।

चन्द्रमा वृश्चिक राशिस्थ हो तो व्यक्ति लालची, गोले ऊरुओं[?] एवं विशाल जंघा वाला, कठोर देह धारी, ईश्वर में अविश्वासी, क्रूर कर्मा, चोर, बचपन में रोग–पीड़ित, क्रोधी व नाखूनों में चोट वाला, सुनेत्र, समृद्धिशाली, कर्म में तत्पर, अत्यन्त निपुण, परदाररत, बन्धुरहित, प्रमादी, क्रोधी, राजा के द्वारा हरण किये गये धन वाला, मोटे पेट व नसों वाला होता है।

धनुराशि में जन्मकालिक चन्द्रमा होने पर व्यक्ति कुबड़ा, वर्तुल नेत्र, स्थूल हृदय–कटि व भुजाओं वाला, अच्छा वक्ता, लम्बे–कन्धे व गर्दन वाला, जलाशय तटवासी, शिल्पज्ञ, गूढ़ विषयों को छुपा कर रखने वाला, वीर, प्रसन्न चित्त, दृढ़ हड्डियों[?] वाला, विस्तृत व अधिक बल वाला, स्थूल कण्ठ–ओष्ठ व नासिका युक्त, बन्धुओं का स्नेही, कृतज्ञ, चतुर एवं संहत चरणों वाला होता है।

जन्म कालिक चन्द्रमा के मकर राशिस्थ होने पर जातक गीतों का ज्ञाता, शीत से भयभीत, स्थूल सिर वाला, सत्य एवं धर्म का सेवन करने वाला, ऊँचा, प्रसिद्ध, कम क्रोध करने वाला, मन में विकार युक्त, क्रूर, लज्जाहीन, सुन्दर आंखों व दुर्बल शरीर युक्त, गुरु–पत्नी में आसक्त, सत् कवि, वर्तुल जंघा वाला, मन्दोत्साही, अधिक लालची, लम्बी गर्दन व बड़े कानों वाला होता है।

जन्मकालिक चन्द्रमा कुम्भ राशिस्थ होने पर जातक उन्नत नासिका,रूखा शरीर, स्थूल हस्त–पाद वाला, मद्यपान प्रेमी, सज्जन द्रोही, धर्महीन, पर पुत्र का उत्पन्न कर्त्ता, मोटे मस्तक एवं कुत्सित आंखों वाला, दुष्टता एवं आलस्य युक्त, बड़े मुख एवं कटि वाला, शिल्प विद्या निष्णात, दुराचारी, दुष्टचित्त व धनहीन होता है।

मीन राशिस्थ चन्द्र होने पर जातक शिल्पशास्त्रज्ञ, विजय प्राप्त करने में निपुण, शास्त्रज्ञ, सुदहेवान्, गाने में चतुर, धार्मिक, अनेक स्त्रियों में आसक्त, सुखी, राजा का सेवक, अल्पकोपी, बड़े सिर वाला, सरलता से खजाने का धन प्राप्त करने वाला, स्त्री से हारने वाला, सत् स्वभाव, सामुद्रिक जहाज की यात्रा में रुचि रखने वाला और दानकर्त्ता होता है।

9.3.3 मंगल :

मेष राशिस्थ मंगल होने पर व्यक्ति तेजवान्, सत्यवादी, शूर, पृथ्वीपालक अर्थात् राजा, युद्ध का प्रशंसक, साहसिक कार्यों में रत, सेना एवं ग्रामीणों का स्वामी, भयंकर अथवा वेगवान्, दान करने में तत्पर, अत्यधिक यात्रा में रहने वाला, गाय–बकरी–भेड़ एवं अनाज रखने वाला, क्रोधी स्वभाव व अनेक स्त्रियों में आसक्त होता है।

वृष राशिस्थ मंगल होने पर व्यक्ति सती स्त्री के सतीत्व को भंग करने वाला, बहुत बोलने वाला, धन एवं पुत्रों से रहित, द्वेष रखने वाला, बहुत लोगों का भरण–पोषण करने वाला, विश्वास न करने वाला, उत्कट वक्ष एवं क्रीड़ा वाला, अत्यधिक दुष्ट वचन बोलने वाला, संगीत प्रेमी, पापी, बन्धु विरोधी एवं कुल नाशक होता है।

मिथुन राशिस्थ मंगल होने पर व्यक्ति सुन्दर, क्लेशों को सहन करने वाला, अनेक विषयों का ज्ञानी, काव्य निर्माण में दक्ष, विविध शिल्पकलाओं में निपुण, अनेक बार विदेश यात्रा करने वाला, धर्मपरायण, सुबुद्धि, पुत्र व मित्रों का हितकारी, अनेक क्रियाओं में तत्पर रहता है।

जन्मकालिक मंगल कर्क राशिस्थ हो तो जातक परगृहवासी, विकलता व रोग पीड़ित, कृषि धन वाला बचपन में राजा की भांति भोजन एवं वस्त्रों का अभिलाषी, पर गृह में भोजन करने वाला, जलाशयों से समृद्ध, अनेक बार वर्धमान पीड़ाओं से दुःखी, कोमल तथा सब प्रकार से दीन स्वभाव वाला होता है।

जन्मकालिक मंगल सिंह राशिस्थ हो तो व्यक्ति सहनशक्ति से रहित, भयंकर, वीर, पर धन व सन्तान का संग्रहकर्त्ता, वनवासी, गोमांस की रुचि वाला, मृत प्रथम पत्नी वाला, हाथी–सर्प तथा हरिण हन्ता, पुत्र रहित, धर्म–फल से हीन, अच्छे बल वाला, कार्यरत तथा सौन्दर्य युक्त शरीर वाला होता है।

जन्मकालिक मंगल कन्या राशिस्थ हो तो सज्जनों का पूज्य, अधिक धनवान्, रति एवं गीत रूपी धनवाला, मधुर एवं प्रिय भाषी, विविध प्रकार व्यय कर्त्ता, अल्पशौर्यवान्, विद्वान्, दृढ़, पार्श्व भाग युक्त, शत्रुजनों से भयभीत, वेद, स्मृति तथा धर्म से युक्त, अनेक शिल्पकलाओं का ज्ञाता, स्नान एवं चन्दन इत्यादि के लेप का उपयोग करने वाला सुन्दर होता है।

जन्मकालिक मंगल तुला राशिस्थ हो तो व्यक्ति पर्यटन करने वाला, दोषी, पाप युक्त वाक्यों को बोलने वाला, सुन्दर, आत्म प्रशंसक, किसी अंग से रहित, न्यून परिवार जनवाला, युद्ध की इच्छा वाला अन्य व्यक्ति की वस्तुओं का उपभोगकर्त्ता, स्त्री, गुरु एवं मित्रों में सुन्दर व मनोहर, मृत पूर्व पत्नी वाला, जुआरियों और वेश्या के सामीप्य से नष्ट धनवाला होता है।

जन्मकालिक मंगल वृश्चिक राशिस्थ होने पर व्यक्ति व्यापार में सत्य व्यवहार कर्त्ता, चोरों के गिरोह का स्वामी, कार्य दक्ष, युद्ध करने में तत्पर, अत्यधिक पाप कर्म कर्त्ता, अधिक अपराध करने वाला, शत्रुता में धूर्तता करने वाला, द्रोह व हत्या करने में अहित बुद्धि वाला, चुगली कर्त्ता, भूमि एवं पुत्र का स्वामी, विष–अग्नि–हथियार व शस्त्र के घावों से संतप्त होता है।

जन्मकालिक मंगल धनु राशिस्थ होने पर अनेक घावों से दुर्बल शरीर वाला, निष्ठुर (कठोर) वचन बोलने वाला, शठ, परवश, रथ–हाथी व पैदल, युद्ध करने वाला, शत्रु सेना पर रथारूढ होकर शर संधानकर्त्ता, अधिक परिश्रम से सुखोपभोग करने वाला, परस्पर क्रोध से नष्ट धन व सुख वाला, गुरुजनों के प्रति आदर न रखने वाला होता है।

जन्मकालिक मंगल मकर राशिस्थ होने पर सौभाग्यशाली, धनसंचयी, सुख–भोग सम्पन्न, स्वस्थ, सुमति, प्रख्यात, सेनापति या राजा, सुन्दर स्त्री वाला, युद्ध में विजय प्राप्त करने वाला, स्व बन्धु बान्धव के स्थान में रहने वाला, स्वतंत्र, रक्षा करने वाला, शुभाचरण वाला, तथा अनेक उपचारों में लगा रहने वाला होता है।

जन्मकालिक मंगल कुम्भ राशिस्थ होने पर व्यक्ति विनम्रता एवं पवित्रता से हीन, वृद्ध आकार वाला, मृत्यु के समय दुर्गति वाला, ईर्ष्या, निन्दा मिथ्या वचन आदि दोषों से नष्ट धन वाला, अधिक रोगों से युक्त शरीर वाला, विकार युक्त, द्यूतक्रीड़ा आदि में धन हारने वाला, बुरी वेषभूषा वाला, दुःख से पीड़ित, मदिरा पान करने वाला एवं दुर्भाग्यशाली होता है।

जन्मकालिक मंगल मीन राशिस्थ होने पर रोगाक्रान्त, कम पुत्रों वाला, विदेश यात्रा रत, बन्धु बान्धवों से तिरस्कृत, छल एवं प्रवंचना के दोषों से सर्वस्व को खोने वाला, दुःखी, कुटिल व्यवहार वाला, अत्यन्त तीव्र शोक से युक्त, गुरु व ब्राह्मण की अवज्ञा करने वाला, सर्वदा हीन मति वाला, अभीष्ट पदार्थ का ज्ञाता, विविधविषयविद्, आत्मश्लाघा प्रेमी एवं प्रख्यात होता है।

बुध

मेष राशिस्थ बुध होने पर जातक युद्ध प्रेमी, ज्ञानी, आचार्य, झूठ बोलने वाला, चालाक, दुबले शरीर वाला, गायन व नृत्यादि में संलग्न, कामी, लिपियों को जानने वाला व लेखक, नकली वस्तु बनाने वाला, ज्यादा खाने वाला, मेहनत से प्राप्त धन को नष्ट करने वाला कर्ज व बन्धन युक्त,कभी स्थिर व कभी चलायमान स्वभाव वाला और ठग होता है।

वृष राशि में बुध स्थित होने पर व्यक्ति चतुर, अड़ियल, दानशील, प्रसिद्ध वेदांगों को जानने वाला, व्यायाम–वस्त्राभूषण और सुगन्ध के उपयोग में लीन, उत्तम धन व अच्छी स्त्री वाला, मनोहारी व मधुर वचनों वाला, संगीत, कला व हास्य–प्रेमी तथा कामी होता है।

बुध के मिथुन राशिस्थ होने पर व्यक्ति सुन्दर वेष वाला, मधुर वाणी युक्त, विख्यात, धनवान्, अच्छा वक्ता, अहंकार युक्त, सुख का त्याग करने वाला, अल्परति[?], अन्य स्त्री का पुत्र, विवाद करने वाला, वेद–शास्त्र–कला का ज्ञान रखने वाला, काव्य कर्त्ता, स्वतन्त्र दानशील, कार्य में दक्ष, अधिक पुत्रों व मित्र वर्ग वाला होता है।

बुध कर्क राशि में स्थित हो तो व्यक्ति विद्वान्, विदेश जाने में संलग्न, स्त्री-प्रसंग व गायनादि में आसक्त चित्त वाला, चपल प्रकृति, अधिक बोलने वाला, स्वबन्धुबान्धवों से द्वेष व वाद-विवाद में संलग्न स्त्री के द्वेष के कारण धन की हानि को प्राप्त, कुत्सित चरित वाला, अनेक कार्यों में संलग्न, अच्छा कवि तथा स्व कुल के यश से प्रख्यात होता है।

बुध सिंह राशि में स्थित हो तो व्यक्ति ज्ञान व कला से हीन, जगत् में प्रख्यात, असत्य, वचन कहने वाला, क्षीण स्मरण शक्ति से युक्त, धनवान्, बलहीन, सत्य विहीन, भ्रातृ नाशक, स्त्री सुख में दुर्भाग्यशाली, स्वतन्त्र, दूषित कर्म करने वाला, भृत्य, स्वकुलविरोधी तथा अन्य जनों को सुन्दर होता है।

कन्या राशिस्थ बुध होने पर व्यक्ति धर्मयुक्त, अधिक बोलने वाला, चतुर, लेखन विज्ञ, काव्य का ज्ञानी, विज्ञान व शिल्प में संलग्न, स्त्रियों के प्रति मधुर स्वभाव वाला, अल्पबली, ज्येष्ठ, सम्मानयोग्य, मित्रों से विविध विनम्र उपचार व वाद-विवाद में संलग्न, अपने गुणों से प्रख्यात, दयावान् व बली होता है।

तुला राशिस्थ बुध होने पर व्यक्ति शिल्प व वाद-विवाद में निरत, बोलने में चतुर, धन को इच्छित प्रकार से व्यय करने वाला, विविध दिशाओं में व्यवसाय की इच्छा करने वाला, ब्राह्मण–अतिथि–देवता व गुरुजनों का आदर करने वाला, कृत उपचारों में कुशल, सुसम्मत देश प्रेमी, धूर्त, चापलूसी करने वाला, शीघ्र क्रोध व शान्ति को धारण करने वाला होता है।

वृश्चिक राशि में बुध स्थित होने पर व्यक्ति परिश्रम शोक व अनर्थ में लगा हुआ, द्वेष युक्त, धर्म व लज्जा का त्याग करने वाला, मूर्ख, असाधु आचरण वाला, लालची, दुष्ट स्त्री का भोग करने वाला, कठिन दण्ड में संलग्न, छलकर्त्ता, निकृष्ट कर्मों में रत, कर्जदार, नीचजनों में अभिरुचि रखने वाला, दूसरों की वस्तुओं का दान लेने अथवा ग्रहण करने वाला होता है।

धनु राशिस्थ बुध हो तो व्यक्ति प्रख्यात, दयावान्, गुणवान्, स्मृति व वेदों का ज्ञानी, शौर्यवान्, शीलवान्, मन्त्री, पण्डित कुल में प्रमुख, महापुरुष, यज्ञ व अध्यापन करने में संलग्न, बुद्धियुक्त, वाक्पटु, व्रत करने वाला, दानशील, लिपि का ज्ञाता व लेखक एवं दान करने में निपुण होता है।

मकर राशिस्थ बुध होने पर नीच, बेवकूफ, नपुंसक अन्य के कार्यों को करने वाला, कुल के गुणों से हीन, विविध प्रकार के दुखों से पीड़ित, निद्रा और भ्रमण प्रेमी, चुगली करने वाला, असत्य भाषण करने वाला, बन्धु द्वारा त्यक्त, अत्यधिक अस्थिर आत्मा वाला, अपवित्र व भयभीत होता है। अत्यन्त दुष्टा स्त्री का शत्रु, भोगों से रहित, मूक, अति दुर्भाग्यवान् व भयभीत, नपुंसक, अपवित्र व अन्य की आज्ञा का पालनकर्ता होता है।

कुम्भ राशिस्थ बुध होने पर वाणी व बुद्धि के कार्यों में संलग्न, विविध कार्यों में निरत, किये हुए कार्यों का त्याग करने वाला, शत्रुओं से दुःखी, मलिन, शीलविहीन, मूढ़, अति दुष्ट होता है।

मीन राशि में जन्मकालीन बुध होने पर सदाचरण व पवित्रता युक्त, परदेश में निवास करने वाला, सन्तान रहित, धनहीन, पतिव्रत धर्मयुक्त स्त्री का पति, सज्जनों का प्रिय, दूसरों के धर्म में संलग्न, सिलाई कला में निपुण, विज्ञान, वेद व कला से रहित, अन्य के धन का संग्रह करने में निपुण, धनहीन व प्रकीर्ण होता है।

9.3.5 गुरु :

मेष राशि में गुरु होने पर व्यक्ति विवाद करने वाला, प्रयत्न पूर्वक रत्न व आभूषण का प्राप्तकर्ता, सत्वगुणवान् तथा पुत्र धन बल से सम्पन्न, प्रतिभावान्, प्रख्यात, तेजयुक्त, बहुत शत्रुओं वाला, अति व्ययी, घाव युक्त शरीर वाला, क्रोधी दण्डनायक होता है।

वृष राशि में गुरु स्थित होने पर व्यक्ति स्थूलकाय, विशाल शरीर वाला, देव-विप्र-गाय की पूजा करने वाला, मनोहर, सौभाग्यशाली, अपनी स्त्री में अनुरक्त, अच्छे वेश वाला,रूप से सम्पन्न, अच्छी वस्तुओं व आभूषण युक्त, विशेष वाणी व बुद्धि वाला, गुणवान्, न्याय का ज्ञाता, विनय से युक्त व वैद्य के कर्म में कुशल होता है।

मिथुन राशिस्थ गुरु हो तो व्यक्ति, उत्तम बुद्धि वाला, विज्ञान का ज्ञाता, सुन्दर नेत्रों वाला, वक्ता, उदारतायुक्त, दक्ष, धर्माचरण करने वाला, गुरु व बन्धु बान्धवों में माननीय, कार्य में संलग्न व श्रेष्ठ कवि होता है।

कर्क राशिस्थ गुरु हो तो विद्वान्, सौन्दर्य युक्त शरीर वाला, ज्ञानी, धर्म-प्रिय स्वभाव वाला, श्रेष्ठ, अच्छे बल वाला, प्रसिद्ध धान्यों का अधिक संग्रहकर्ता, धन का स्वामी, कोषाध्यक्ष, सत्व व समाधि वाला, स्थायी पुत्रों वाला, समाज में पूजनीय, प्रख्यात, राजा, विशेष कार्य करने वाला, मित्रों में अनुरक्त होता है।

सिंह राशि में गुरु स्थित होने पर स्थायी शत्रुता वाला, सत्व युक्त, धैर्यवान्, मित्रजनों से अति स्नेह करने वाला, ज्ञान सम्पन्न, धनवान्, शिष्ट स्वजनों से युक्त, राजा या राजतुल्य पौरुष युक्त, सभा का केन्द्र, आवेश से सभी शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने वाला, मजबूत शरीर वाला, पर्वत वन या किले में घर वाला होता है।

कन्या राशिस्थ गुरु होने पर मेधा युक्त, धर्म परायण, कार्यो में चतुर, धर्मपाल, सुगन्ध-पुष्प प्रेमी, कार्यों को निश्चिन्तता से करने वाला, शास्त्रार्थ और शिल्प कार्यों से धनवान्, दानशील, पवित्र शीलवाला, लिपि कार्य में दक्ष व समृद्धिशाली होता है।

तुला राशि में गुरु होने पर व्यक्ति मेधावान्, बहुत पुत्रों वाला, विदेश गमन से अधिक धन प्राप्त करने वाला, विनय युक्त, नट व नर्तकों के माध्यम से धन एकत्रित करने वाला, मनोहर, वेदाभ्यास में निरत, विदेश व्यापार करने वालों में श्रेष्ठ, देवताओं व अतिथिजनों की पूजा में संलग्न और विद्वान् व प्रज्ञावान् होता है।

वृश्चिक राशि में गुरु होने पर अनेक शास्त्रों में निपुण, भूपति, अनेक ग्रन्थों का भाष्य कर्ता, मन्दिरों व नगरों का निर्माण कर्ता, अनेक उत्तम पत्नी वाला, न्यून पुत्रवान्, रोगों से ग्रस्त, अधिक परिश्रम करने वाला, दुष्ट कार्यरत, दिखावटी धर्माचरण कर्ता, घृणित आचरण करने वाला होता है।

धनु राशि में स्थित गुरु हो तो व्रत दीक्षा इत्यादि की शिक्षा देने वाला, स्थिर सम्पत्तिवान्, दानशील, मित्रों का हित चिन्तक, प्रिय और परोपकार करने वाले शास्त्रों में संलग्न, सामन्त छोटे प्रदेश का स्वामी या मन्त्री, विभिन्न देशों में निवासकर्ता, एकान्त व तीर्थ में निवास की बुद्धि वाला होता है।

मकर राशिस्थ गुरु हो तो व्यक्ति न्यूनबली, अति परिश्रमी, कष्टयुक्त, निम्न चरित्रवाला, मूढ, धन, रहित, दूसरों की सेवा करने वाला, दया, पवित्रता, आत्मीय बन्धुओं के प्रेम व धर्म से हीन, दुर्बल-शरीर, भययुक्त, प्रवासी एवं दुःखी होता है।

कुम्भ राशिस्थ बृहस्पति होने पर व्यक्ति चुगली करने वाला, असत् शीलवान्, कुत्सित-शिल्पकलाओं एवं जलाशयों के कार्यों में संलग्न, समूह का मुखिया, नीच-जनों के साथ रहने वाला, क्रूर-कर्मा, लालची, रोग-ग्रस्त, अपने वाक्य से धन नष्ट करने वाला, बुद्धि आदि गुणों से रहित तथा गुरुस्त्रीगामी होता है।

मीन में जन्मकालिक गुरु होने पर जातक वेदार्थ व शास्त्रज्ञाता, मित्रों एवं सत्पुरुषों से पूज्य, राजाओं का राजा (चक्रवर्ती), प्रशंसा का पात्र, धनवान्, अपराजित, अत्यधिक दर्पवान्,

स्थिरकार्यों को करने वाला, सुनीति, शिक्षा–व्यवहार एवं युद्ध प्रयोग का ज्ञाता, प्रसिद्ध एवं शान्तिपूर्ण कृत्य करने वाला, एवं स्थिर बल वाला होता है।

9.3.6 शुक्र :

मेष राशिस्थ शुक्र होने पर जातक रतौंधी रोग वाला, विविध दोषों से युक्त, विरोधी, परस्त्री का हारक, जंगलों और पर्वतों पर भ्रमण करने वाला, स्त्री के कारण बन्धन में पड़ने वाला, नीच, निष्ठुर स्वभाव वाला, चोर, सेना, नगर, तथा अनेक समूहों का स्वामी, विश्वास न करने वाला ढीठ स्वभाव वाला होता है।

वृष राशिस्थ शुक्र होने पर अनेक स्त्रियों एवं रत्नों से युक्त, किसान, सुगन्धित माला एवं वस्त्रधारण करने वाला, गायों से आजीविका वाला, दानशील, एवं बन्धु बान्धवों का पोषक, सुदेह, धनवान्. विविध विद्याओं का ज्ञाता, बहुत देने वाला, प्राणियों का हितैषी, गुणों के कारण अग्रणी तथा परोपकार करने वाला होता है।

मिथुन राशिस्थ शुक्र होने पर विज्ञान एवं कला शास्त्र में निष्णात, प्रसिद्ध, निरन्तर सुन्दर शरीर वाला, कामासक्त, चित्र रचना एवं लेखन में संलग्न, काव्य प्रणेता, प्रिय स्वभाव एवं साधु स्वभाव वाला, गीत व नृत्य से वैभव प्राप्तकर्ता, मित्रों से युक्त, देवता और ब्राह्मण सेवा में तत्पर तथा प्रेम पूर्ण होता है।

कर्क राशिस्थ शुक्र होने पर कामासक्त एवं धर्म में तत्पर, विद्वान्, बलवान्, मधुर स्वभाव वाला, सद्गुणियों में प्रमुख, इच्छित व सुखद पदार्थों से युक्त, देखने में सुन्दर, सुनीतिमान्, स्त्री एवं मदिरा पान आदि के कारण रोगों से अति पीड़ित एवं अपने वंश में उत्पन्न दोषों से संतप्त होता है।

सिंह राशिस्थ शुक्र होने पर व्यक्ति युवती स्त्रियों के साथ रहने वाला, सुख सम्पत्ति एवं आनन्द का अनुभव करने वाला, न्यून बल, बन्धु–बान्धवों से प्रेम करने वाला, विचित्र सुखों से

सम्पन्न, कभी–कभी दुःख का अनुभव करने वाला, परोपकाररत, गुरु ब्राह्मण एवं आचार्य अभिमत कार्यों में संलग्न रहने वाला, अनेकविध चिन्ताओं से मुक्त रहता है।

कन्या राशिस्थ शुक्र होने पर जातक न्यून चिन्ता वाला, कोमल स्वभाव, कार्यों में प्रवीण, परोपकार में रत, कला विधियों का जानकार, स्त्रियों के साथ बातचीत में मधुर, प्रेमपूर्ण कार्यों में प्रयत्नशील, दूषित प्रेम वाली स्त्रियों से प्रेम करने वाला, दीन स्वभाव युक्त, सुख भोग से हीन, तीर्थ एवं सभाओं में विद्वान् होता है।

तुला राशिस्थ शुक्र होने पर परिश्रम से प्राप्त धन वाला, शूर अनेकविध मालाओं व वस्त्रों का धारण कर्ता, विदेश यात्रा में रत, शत्रु से रक्षा करने में दक्ष, कार्यों में चंचल, सम्पन्न, शुभ पुण्यवान्, देवताओं एवं ब्राह्मण पूजन से प्राप्त कीर्ति वाला, विद्वान् एवं सुन्दर होता है।

वृश्चिक राशिस्थ शुक्र होने पर द्वेष एवं प्रेम में क्रूरकर्मा, धर्मरहित, आत्मप्रशंसक, अत्यन्त दुष्ट, स्वाभाविक रूप से विरक्त स्वभाव वाला, प्रशंसा का भाजन न बनने वाला, शत्रु विनाशक, पाप कर्मा, श्रेष्ठ, कुलटा स्त्रियों का द्वेषी, वध करने वाला, चतुर, अति ऋणी, निर्धन, निन्दित चरित्र व गुप्त रोगी होता है।

धनु राशिस्थ शुक्र होने पर शुभ धर्म कर्म एवं धन से उत्पन्न फलों वाला, सभी का प्रिय, मनोहर, श्रेष्ठ, बुरे व्यक्ति से प्राप्त विद्या वाला, गायों वाला, अंलकरण का इच्छुक, अच्छे धन एवं स्त्री के सौभाग्य वाला, राजा का मंत्री, सौन्दर्य एवं अति चतुर, मोटे एवं उन्नत शरीर वाला तथा सज्जन समूह से पूजित होता है।

मकर राशिस्थ शुक्र होने पर अधिक व्यय के भय से त्रस्त, दुर्बल शरीर, वृद्ध स्त्री से प्रेम करने वाला, हृदय रोग से पीड़ित, धन का लालची, लोभ के कारण मिथ्या वचन बोल कर वंचना करने वाला, कार्यों में दक्ष, नपुंसक, विपरिवाली[?] चेष्टा करने वाला, अन्य के लिए कार्यकर्ता, अत्यन्त दुःखी, मूर्ख व कष्टों को सहन करने वाला होता है।

कुम्भ राशिस्थ शुक्र होने पर चिन्ता जनक रोग से त्रस्त, निरन्तर निरर्थक कार्यों में लगा रहने वाला, अन्य स्त्री में[?] गमनकर्ता, पर धर्म का पालक, गुरुजन एवं पुत्रों के साथ वैर रखने वाला, विभिन्न भोग योग्य[?] वस्तुओं आमूषण एवं वस्त्रादि से हीन तथा अच्छे स्वभाव वाला होता है।

मीन राशिस्थ शुक्र उदारता व दान देने के गुण वाला, अधिक धनी, शत्रुओं को परास्त करने वाला, त्रिलोक में विख्यात, श्रेष्ठ, विशिष्ट कार्यकर्ता, राजा का प्रिय पात्र, सुन्दर वचन बोलने वाला एवं ज्ञान से युक्त, उदारता वाला, सज्जनों से प्राप्त सम्पत्ति एवं सम्मान वाला, स्ववचन पालक, कुलीन तथा ज्ञान सम्पन्न होता है।

9.3.7 शनि :

मेष राशिस्थ शनि होने पर दुर्व्यसन एवं अधिक मेहनत से सन्तप्त रहने वाला, भयंकर आचरण वाला, स्व बन्धुओं से पक्ष को नष्टकर्ता, कठोर, एवं धृष्टता से पूर्ण वचन बोलने वाला निन्दित, धन रहित, कुत्सित वेशधारी, अतिक्रोधी, निन्दित कर्म कर्ता, दोष पूर्ण, शत्रुता में रुचि रखने वाला, तिरस्कार पूर्ण कृत्य करने वाला, क्रूर कर्मा, निन्दा करने वाला एवं पाप कर्मरत होता है।

वृष राशिस्थ शनि होने पर धनहीन, सेवा कार्य में तत्पर, अनुचित वचन भाषी एवं असत् कर्म कारक, वृद्धा स्त्री के मन को मोहने वाला, कुमित्रों वाला, स्त्रियों एवं दुर्व्यसन में आसक्त, परस्त्री का भृत्य, तिरस्कार पूर्ण कर्म कर्ता, देखने में स्पष्ट एवं अनेक क्रियाओं में आसक्त होता है।

मिथुन राशिस्थ शनि होने पर अत्यधिक कर्ज एवं बन्धन से दुःखी, मेहनती, दम्भ कर्ता अथवा पाखण्डी अथवा पाखण्डी का समर्थक, दुष्टता के दोषों से रहित, हमेशा गोपनीय कार्यकर्ता, कामयुक्त चेष्टाओं में रत, छल करने वाला, क्रोधी कार्य को देर से करने वाला, शठ दुष्ट आचरण वाला, बन्धन एवं विहार में आसक्त तथा बाह्य क्रीडाओं का कर्ता होता है।

कर्क राशि में स्थित जन्मकालिक शनि हो तो सौभाग्यवती सुन्दर स्त्री वाला, धनहीन, बचपन में रोगों के कारक अति दुःखी, विद्वान्, माता से रहित, अत्यन्त मृदु, विशिष्ट कार्यों में तत्पर, सदैव रोगी, अन्य के लिए बाधक, प्रसिद्ध बान्धवों का विरोध करने वाला, स्वभाव वैपरीत्य वाला, मध्यायु में राजा के तुल्य तथा अन्य के सुख से वृद्धि को प्राप्त करता है।

सिंह राशिस्थ शनि होने पर व्यक्ति अध्ययन–अध्यापन में संलग्न, ज्ञानी, निन्दा प्राप्त करने वाला, शीलविहीन, स्त्री से रहित, भृत्य कार्य से जीवन यापन करने वाला, स्वजनों से रहित, प्रसन्नता रहित, नीच कार्यों में संलग्न, अति क्रोध करने वाला, मन की इच्छाओं से उद्विग्न न होने वाला, शान्त भाव व रास्ते के परिश्रम से दुःख प्राप्त करने वाला, सामान्य मध्यम शरीर वाला होता है।

कन्या राशिस्थ शनि होने पर व्यक्ति नपुंसक आकृति वाला, अति ढीठ, दूसरे के भोजन को करने वाला, व्याभिचारिणी स्त्री का अनुगामी, अल्पमन्त्र वाला, शिल्प शास्त्र को न जानने वाला, विशेष कार्य करने का इच्छुक, पुत्र व धन से शोभ को प्राप्त, संत पुरुष, परोपकार कर्ता, कन्याओं को दोषी करने वाला, कार्य में संलग्न तथा देख कर कार्य करता है। .

तुला राशि में स्थित शनि होने पर व्यक्ति धन का लालची, सौन्दर्य प्रेमी, विदेश यात्राओं से धन व सम्मान प्राप्त करने वाला, राजा व अच्छा ज्ञाता होता है। स्वजनों द्वारा सुरक्षित धन वाला,

समूह व सभा में श्रेष्ठ होता है। नर्तकी व्याभिचारिणी स्त्री का भोगी, अवस्था के प्रभाव से उत्तम पद प्राप्त करने वाला होता है।

वृश्चिक राशि में जन्मकालिक शनि हो तो विद्रोह करने वाला, वक्र स्वभावयुक्त, विष अथवा शस्त्र से पीड़ित, अत्यन्त क्रोधी, लालच व अभिमान वाला, धनवान् किन्तु परधन का हरण करने वाला होता है। शुभ कार्यों से विमुख, घृणित कार्यकर्त्ता, हानि, खर्च व रोग से पीड़ित एवं विविध प्रकार से कष्ट पाता है।

धनु राशिस्थ शनि होने पर व्यवहारिक शास्त्रीय ज्ञान – अध्ययन –शास्त्रार्थ–विद्या–अभिधा में अनुकूलता से बुद्धि वाला होता है। पुत्रों के गुणों व स्वधर्म के आचरण से तथा शालीनता से प्रख्यात, अन्तिम[?] अवस्था में अधिक धन का मोह करने वाला, संसार में मान प्राप्तकर्त्ता, कम बोलने वाला, अनेक नामों वाला एवं सरल होता है।

मकर राशि में शनि हो तो व्यक्ति परस्त्री व अनेक स्थान का स्वामी, वेदों का ज्ञाता व गुणवान्, अनेक शिल्प को जानने वाला, उत्तम कुल के जनों से पूजित, अन्य समुदाय से आदर प्राप्त करने वाला, प्रख्यात, स्नानादि करने, आभूषण के उपयोग में संलग्न, कार्य कलापों का ज्ञानी, विदेश में निवास करने वाला, अतिसाहसी व उपचार को जानने वाला होता है।

कुम्भ राशि में शनि होने पर व्यक्ति अति मिथ्याभाषी, मद्य व स्त्री व्यसनों में संलग्न, दुष्ट, वंचक, कुत्सित मित्रों वाला, दृढ निश्चयी, उग्र स्वभाव वाला, ज्ञान चर्चा व स्मृति विमुख, अत्यन्त कठोर वाणी वाला, अनेक कार्यों का आरम्भकर्त्ता होता है।

मीन राशि में जन्मकालिक शनि हो तो व्यक्ति यज्ञ व वास्तुशिल्प को प्रिय मानने वाला, स्वबन्धु व मित्रजनों में प्रमुख तथा प्रशान्त स्वभाव वाला, धन वर्धनकर्त्ता, नीतिज्ञ, रत्न परीक्षण का प्रयास करने वाला, धर्म आचरण में संलग्न, विनम्र स्वभाव वाला, गुणवान्, विलम्ब से भाव ग्राही होता है।

9.4 राजयोग :

केन्द्रत्रिकोणपतयः सम्बन्धेन परस्परम् ।
इतरैरप्रसक्ताश्चेद् विशेषफलदायकाः ।।

केन्द्र व त्रिकोणपति जिनकी द्वितीय राशि भी केन्द्र त्रिकोण के अतिरिक्त स्थान में नही हो, उन केन्द्र व त्रिकोण स्वामी के परस्पर सम्बन्ध विशेष फल देने वाले होते हैं।

केन्द्रत्रिकोणनेतारौ दोषयुक्तावपि स्वयम् ।
सम्बन्धमात्राद्बलिनौ भवेतां योगकारकौ ।।

बली केन्द्र व त्रिकोण के स्वामी अर्थात् नवम त्रिकोण व दशम केन्द्र के स्वामी सदोष होते हुए भी परस्पर सम्बन्धित हों तो ये दोनो योग कारक होते हैं।

निवसेतां व्यत्ययेन तावुभौ धर्मकर्मणो: ।
एकत्रान्यतरो वापि वसेच्चेद्योगकारकौ ।।

धर्म भाव तथा कर्म भाव अर्थात् नवमेश व दशमेश यदि :

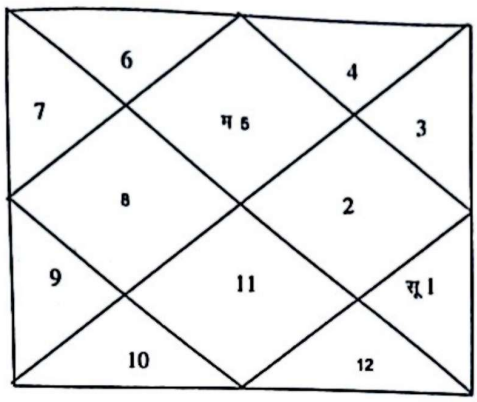
1. परस्पर एक दूसरे के स्थान में हों।

2. दोनों नवम दशम में युति कर रहे हों।

3. एक अन्य के स्थान पर हो तथा दूसरा किसी स्थान पर बैठकर पहले को देखता हो। जैसे दशमेश नवम स्थान में हो और नवमेश दशमेश पर दृष्टि डाल रहा हो। यह राम्बन्ध दोनों ग्रहों को योगकारी बनाता है।

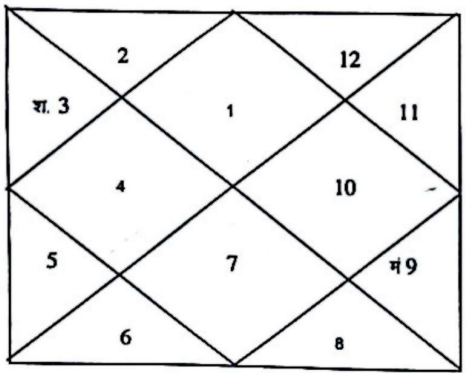
राजयोग बनाने वाले सम्बध 4 प्रकार के होते हैं।

अन्योन्य राशि स्थित सम्बन्ध : अर्थात् दो ग्रह एक दूसरे की राशि में स्थित हों। यदि ये ग्रह केन्द्र त्रिकोण स्वामी हों तो राजयोग कारक हो जाते हैं। जैसे –



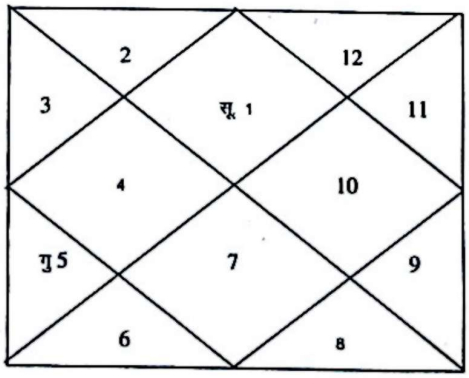
सिंह लग्न की जन्म पत्रिका में सिंह राशि का स्वामी सूर्य भाग्य स्थान में मेष राशि में ओर मेष राशि का स्वामी लग्न में सिंह राशि में स्थित है। इस प्रकार दोनों ही राजयोग कारक है।

2. परस्पर दृष्टि सम्बन्ध : राजयोग देने वाले केन्द्र त्रिकोण स्वामी ग्रह एक दूसरे को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं यथा –



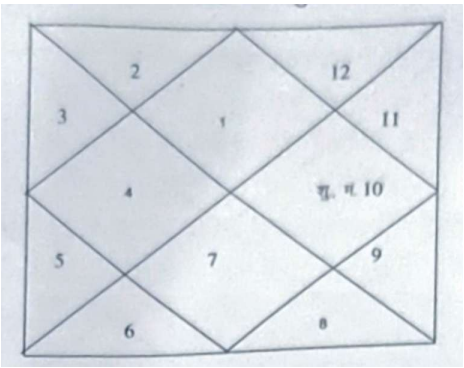
प्रस्तुत कुण्डली में दशम का स्वामी शनि लग्न के स्वामी मंगल के साथ तृतीय व दशम में बैठ कर पूर्ण दृष्टि सम्बन्ध बना रहे हैं। इस प्रकार यह दृष्टि सम्बन्ध राजयोग कारक है।

3. अन्यतर दृष्टि सम्बन्ध का अर्थ है एक ग्रह अन्य ग्रह की राशि में बैठा हो और अन्य को दृष्टिपात कर रहा हो। ये दोनों यदि केन्द्र त्रिकोण स्वामी हों तो राजयोग देते हैं।



यहाँ गुरु सूर्य की राशि में बैठकर लग्नस्थ सूर्य को नवम दृष्टि से देखकर एक दृष्टि सम्बन्ध बना रहा है –

4. युति सम्बन्ध : राजयोग देने वाले ग्रह कहीं भी संयुक्त होकर बैठे हों तो राजयोग देते हैं।

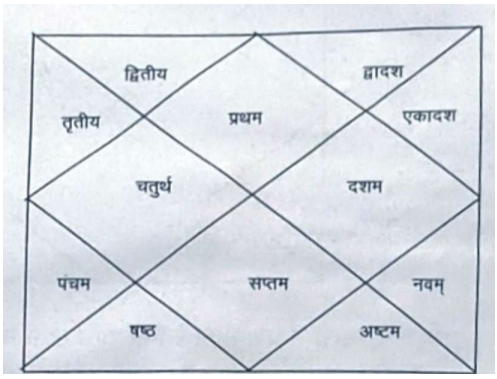


केन्द्र का स्वामी मंगल पंचम के स्वामी मंगल के साथ युक्त होकर दशम में राजयोग कारक है।

इस प्रकार चार प्रकार के राजयोग कारक सम्बन्धों के साथ विविध लग्नों में राजयोग कारक ग्रहों का विवरण आप आगे पढ़ेंगे।

किसी भी लग्न की कुण्डली में केन्द्र त्रिकोण का सम्बन्ध राजयोग देता है। यह सम्बन्ध किसी भी लग्न में किस–किस प्रकार बन सकता है आइये देखें

1. प्रथम पंचम
2. प्रथम नवम
3. चतुर्थ पंचम
4. चतुर्थ नवम
5. सप्तम पंचम
6. सप्तम नवम
7. दशम–पंचम
8. दशम–नवम



केन्द्रत्रिकोणाधिपयोरेकत्वे योगकारिता ।
अन्यत्रिकोणपतिना सम्बन्धो यदि किं परम् ।।

केन्द्र त्रिकोण दोनों का स्वामी यदि एक ही ग्रह हो तो वह अकेला योगकारक हो जाता है। यदि वह अन्य त्रिकोण स्वामी से सम्बन्ध करे तो इससे श्रेष्ठ क्या सम्बन्ध होगा।

यदि केन्द्रे त्रिकोणे वा निवसेतां तमोग्रहौ ।
नाथेनान्यतरेणापि सम्बन्धाद्योगककारकौ ।।

राहु या केतु केन्द्र या त्रिकोण में बैठकर केन्द्र व त्रिकोण के स्वामी से सम्बन्ध करें तो वे योग कारक होते हैं।

योग कारक ग्रहों के स्वामी यदि अष्टमेश व लाभेश भी हों तो इनका सम्बन्ध कारक योग नहीं बन सकता।

मेष लग्न :

मेष लग्न में लग्नेश मंगल व पचंमेश सूर्य का सम्बन्ध, मंगल लग्नेश व गुरु नवमेश का सम्बन्ध चन्द्र चतुर्थेश व सूर्य पंचमेश, चन्द्र चतुर्थेश व गुरु नवमेश, शुक्र सप्तमेश व सूर्य पंचमेश, शुक्र सप्तमेश व गुरु नवमेश, शनि दशमेश सूर्य पंचमेश का सम्बन्ध केन्द्र त्रिकोण सम्बन्ध होने के कारण योग कारक होना चाहिए। किन्तु नवमेश गुरु द्वादशेश होकर दोष मुक्त भी है। सप्तमेश शत्रु द्वितीयेश होकर दोष युक्त भी है। सप्तमेश द्वितीयेश होकर शुक्र मारकेश भी है। शनि दशमेश के साथ एकादशेश होकर सदोष भी है। मंगल लग्नेश के साथ अष्टमेश भी है। लेकिन लग्नेश सदा योग कारक होता है।

विविध लग्नों के लिए योग निर्धारित करते हुए यह तथ्य अवश्य ध्यान में रखना चाहिए।

मेष लग्न : निष्फल –गुरु+ शुक्र योग निष्फल होता है।

सफलयोग : 1. सूर्य+मंगल, 2. सूर्य+चन्द्र, 3. सूर्य+शुक्र, अति–दोषपूर्ण और सदोष कारण शुक्र सप्तम स्थान का स्वामी होने से दोष पूर्ण है। सूर्य दूषित नहीं है परन्तु एक दोषी होने से सफल राजयोग होता है लेकिन यह योग निकृष्ट और सदोष है। 4. सूर्य+शनि, 5. मंगल + गुरु, 6. चन्द्र + गुरु –यदि चन्द्रमा पूर्ण हो तो चतुर्थ स्थान का केन्द्र का स्वामी होने के कारण राजयोग करता है। पूर्ण चन्द्र होने से उसे शुभ माना गया है।

वृष लग्न

निष्फल योग : 1. शुक्र + बुध, 2. मंगल + बुध

सफल योग : 1. शुक्र + शनि, 2. सूर्य + बुध, 3. सूर्य + शनि, 4. मंगल + शनि – अति दोषी और सदोष कारण मंगल द्वादश स्थान का स्वामी होने से दूषित है और सप्तम स्थान का स्वामी होने से कष्टपूर्ण है। 5. शनि स्वयं अकेला राजयोगकारक है और श्रेष्ठफल दायक योग करता है। 6. शनि + बुध यह श्रेष्ठ योग है।

मिथुन लग्न

निष्फल योग : 1. गुरु + शुक्र, दोनों ही दूषित होते हैं, 2. गुरु + शनि, 3. बुध + शनि शनि अष्टम स्थान का स्वामी होने से, 3. तीसरा योग श्लोक 22 के अनुसार निष्फल होता है।

सफल योग : बुध + शुक्र

कर्क लग्न

निष्फल योग : 1. गुरु + शुक्र, 2. गुरु +. शनि, कारण दोनों ग्रह दोष पूर्ण हैं।

सफल योग : 1. चन्द्र + मंगल, 2. चन्द्र + गुरु, 3. मंगल + शुक्र, 4. मंगल + गुरु 5. मंगल + शनि, अतिदोष पूर्ण।

सिंह लग्न

निष्फल योग : 1. मंगल + शनि, 2. गुरु + शुक्र 3. गुरु + शनि – दोनों ही दोषपूर्ण हैं।

सफल योग : 1. सूर्य + मंगल, 2. सूर्य + गुरु–दोषी, 3. मंगल + गुरु–दोषी, 4. मंगल + शुक्र–दोषी, 5. मंगल–अकेला शुभफलदायक है कारण वह नवम और चतुर्थ स्थान का स्वामी है।

कन्या लग्न

निष्फल योग : 1. गुरु + शुक्र, 2. गुरु + शनि – दोनों ही ग्रह दोष पूर्ण होते हैं।

सफल योग : 1. बुध + शुक्र, 2. बुध + शनि–दोषी, शनि दोष पूर्ण होने से सदोष राजयोग है। एक ही ग्रह दूषित हो तो राजयोग में व्यवधान नहीं होता।

तुला लग्न

निष्फल योग : मंगल + बुध

सफल योग : 1. शुक्र + शनि, 2. शनि अकेला, 3. बुध + शनि –दो त्रिकोणेश का केन्द्रेश के साथ सम्बन्ध होता है। 4. शनि + चन्द्रमा, 5. चन्द्र + बुध, 6. बुध + शुक्र, 7. मंगल + शनि – अति दोषी और संतोष कारक मंगल मारकेश होता है और दो मारक स्थानों का स्वामी है।

वृश्चिक लग्न

निष्फल योग : 1. मंगल + गुरु, 2. गुरु + शुक्र–दोनों ग्रह दोष पूर्ण है।

सफल योग : 1. चन्द्र + मंगल–सदोष, 2. चन्द्र : शनि–युक्त, 3. चन्द्र + सूर्य, 4. चन्द्र + शुक्र–युक्त।

धनु लग्न

निष्फल योग : मंगल + बुध

सफल योग : 1. मंगल + गुरु, 2. सूर्य + गुरु, 3. सूर्य + बुध–अति दोष पूर्ण

मकर लग्न

निष्फल योग : यह एक ऐसी कुण्डली है जिसमें निष्फल योग नहीं बनता।

सफल योग : 1. शुक्र अकेला राजयोग करने वाला है, 2. शुक्र + शनि, 3. बुध + शुक्र श्रेष्ठ योग, 4. शुक्र + मंगल युक्त 5. बुध + शनि युक्त 6. चन्द्र + बुध युक्त, 7. चन्द्र + शुक्र युक्त, चन्द्रमा दोष युक्त है 8. मंगल + बुध–कनिष्ठ, कारण मंगल एकादशेश होने से दूषित है और बुध षष्ठेश होने से दूषित है। दोनों दूषित होने से निकृष्ट योग होता है।

कुम्भ लग्न

निष्फल योग : सूर्य + बुध, दोनों ग्रह दोषी है।

सफल योग : 1. शुक्र अकेला शुभफल दायक है, 2. शुक्र + शनि युक्त 3. बुध + शुक्र युक्त, 4. मंगल + शुक्र युक्त, 5. सूर्य +शुक्र, 6. बुध + शनि

मीन लग्न

निष्फल योग : मंगल + बुध

सफल योग : 1. चन्द्र + गुरु, 2. मंगल + गुरु

9.5 सारांश :

जन्म पत्रिका में सूर्यादि ग्रह बारह राशियों में स्थित होने पर किस प्रकार प्रभावित करते है। इसकी विस्तृत व्याख्या सारावलीकार ने की है। सभी शास्त्रीय ग्रन्थों में विविध राशि में स्थित ग्रहों का फल नहीं कहा गया है। भावेशों की विभिन्न भावों में स्थिति, विभिन्न भावों में नव ग्रहों की स्थिति तथा राशियों में ग्रहों की स्थिति मिश्रित रूप से फल कारक होते हैं। साथ ही राज योग अर्थात् विविध लग्नों मे ग्रहों का सम्बन्ध किस प्रकार फल देता है यह महत्वपूर्ण तथ्य है इन सभी आधारों पर जातक फल कहा जाता है।

9.6 शब्दावली :

शिल्प विद्या – कलात्मक ज्ञान

निष्णात – कुशल

अभ्यास प्रश्न

प्रश्न 1. केन्द्र के साथ किस भाव का सम्बन्ध राजयोग कारक होता है।

(अ) पणफर (ब) आपोक्लिम (स) केन्द्र (द) त्रिकोण

प्रश्न 2. ग्रह परस्पर सम्बन्धी कितने प्रकार के होते हैं।

(अ) दो (ब) पाँच (स) आठ (द) चार

प्रश्न 3. किन भावों का सम्बन्ध राजयोग कारक है।

(अ) सप्तम–दशम (ब) चतुर्थ–अष्टम (स) नवम–दशम (द) षष्ठ–अष्टम

प्रश्न 4. सूर्य कन्या राशि में स्थित होने पर क्या फल होगा।

प्रश्न 5. चन्द्रमा मीन राशि में स्थित होने पर क्या प्रभाव होगा।

प्रश्न 6. बुध वृश्चिक राशिगत हो तो क्या प्रभाव होगा।

प्रश्न 7. शुक्र मिथुन राशि में होने पर फल का वर्णन करें।

प्रश्न 8. गुरु के तुला राशि में होने पर क्या प्रभाव होगा।

9.7 अभ्यास प्रश्नोत्तर

उत्तर 1. (द)

उत्तर 2. (द)

उत्तर 3. (स)

उत्तर 4. सूर्य अगर कन्या राशि में स्थित हो तो स्त्री के समान शरीर वाला, लज्जावान्, लिपियों का ज्ञाता, अल्पबल, मधुर भाषण करने वाला, मेधावान्, देवताओं और गुरुजनों का भक्त, सेवा करने में चतुर, वेदाध्ययन आदि एवं गाने–बजाने से सन्तुष्ट, कोमल और दीनतायुक्त वचन बोलने वाला होता है।

उत्तर 5. 9.3.2 में देखें।

उत्तर 6. 9.3.4 में देखें।

उत्तर 7. 9.3.6 में देखें।

उत्तर 8. 9.3.5 में देखें।

9.8 सन्दर्भग्रन्थ–सूची :

लघु पाराशरी	पाराशर मुनि
सारावली	डॉ. मुरली धर चतुर्वेदी, सीताराम
दीवान राम चन्द्र कपूर	

9.9 उपयोगी व सहायक पाठ्य सामग्री :

विविध लग्नों की जन्म पत्रिका में ग्रहों की राशिगत स्थिति के आधार पर फल का मूल्यांकन करना।

राजयोग बनाने वाले ग्रहों का विभिन्न जन्मपत्रिकाओं को प्राप्त कर समीक्षा का प्रयास करना।

9.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. सूर्य, चन्द्र, बुध व गुरु का द्वादश राशियों में फल बतायें तथा प्रमाण रूप में उदाहरण 4 कुण्डली प्रस्तुत करें

2. द्वादश लग्नों में ग्रहों के योग बनने की प्रक्रिया समझायें।

ब्लॉक - 4
योग एवं दशा-फल-विचार

इकाई – 10 पंच महापुरुष एवं विविध महत्वपूर्ण योग

10.1 प्रस्तावना
10.2 उद्देश्य
10.3 पंच–महापुरुष–योग
10.3.1 रुचक–योग
10.3.2 भद्र–योग
10.3.3 हंस–योग
10.3.4 मालव्य–योग
10.3.5 शश–योग
10.4 विविध–योग
10.4.1 गजकेसरी–योग
10.4.2 अमलकीर्ति–योग
10.4.3 पर्वत–योग
10.4.4 काहल–योग
10.4.5 चामर–योग
10.4.6 शङ्ख–योग
10.4.7 लग्नाधियोग
10.4.8 हरि–हर–ब्रह्म–योग
10.4.9 भेरी–योग
10.4.10 मत्स्य–योग
10.4.11 खड्ग–योग
10.4.12 लक्ष्मी–योग
10.5 सारांश
10.6 शब्दावली
10.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
10.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
10.9 सहायक / उपयोगी सामग्री
10.10 निबन्धात्मक प्रश्न

10.1 प्रस्तावना

सूर्य और चन्द्रमा की प्रमुख स्थिति जीवन में हैं। पिछले अध्याय में सूर्य व चन्द्रमा से बनने वाले महत्वपूर्ण योगों की विस्तार से व्याख्या की गई है। इसे फलादेश की आधार भूमि के लिए आवश्यक माना गया है।

प्रस्तुत इकाई में चन्द्र, सूर्य के अतिरिक्त मंगल बुध गुरु, शुक्र, शनि के सम्बन्ध में विशेष योगों की जन्मपत्रिका में स्थिति का विशेष प्रभाव व्यक्ति के जीवन पर क्या होता है इसका अध्ययन इस इकाई में किया जा सकेगा।

इन ग्रहों से सम्बन्धी विशेष योगों की व्याख्या करने के बाद आगामी अध्याय में हम राजयोग किस प्रकार बनते हैं ग्रहों की विभिन्न स्थितियों को राजयोग किस प्रकार प्रभावित होते हैं इसका ज्ञान आप प्राप्त कर सकेंगे।

10.2 उद्देश्यः–

अध्ययन का उद्देश्य सदैव ज्ञान प्राप्त करना और उसका उपयोग करना है। विविध महत्वपूर्ण योगों की व्याख्या प्रस्तुत इकाई में की जा रही हैं। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

1. पंच महापुरुष योगों का नाम लिख पायेंगे।
2. रुचक–योग की जन्म पत्रिका में पहचान कर पायेंगे।
3. भद्र–योग का व्यक्ति के जीवन में प्रभाव का वर्णन कर सकेंगे।
4. हंस–योग युक्त जन्म–पत्रिका में इस योग के प्रभाव की व्याख्या कर पायेंगे।
5. मालव्य–योग से परिचित हो पायेंगे।
6. शश–योग के प्रभाव का वर्णन कर सकेंगे।

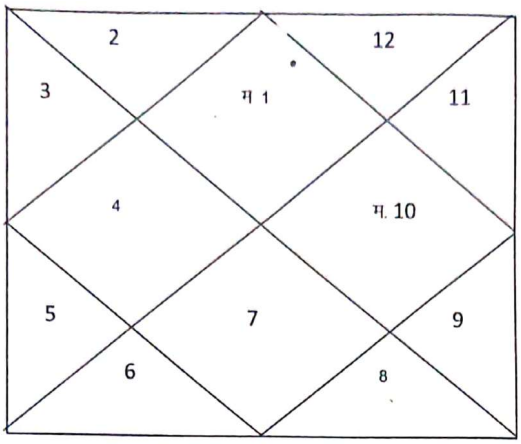
10.3 पंच–महापुरुष–योग

स्वक्षेत्रे च चतुष्टये च बलिभिः स्वोच्चस्थितैर्वा ग्रहैः
भुक्ताङ्गारकमन्दजीवशशिजैरेतैर्यथानुक्रमम्।
मालव्यो रुचकः शशोऽथ कथितो हंसश्च भद्रस्तथा
सर्वेषामपि विस्तरं मतिमतां संक्षिप्यते लक्षणम्॥

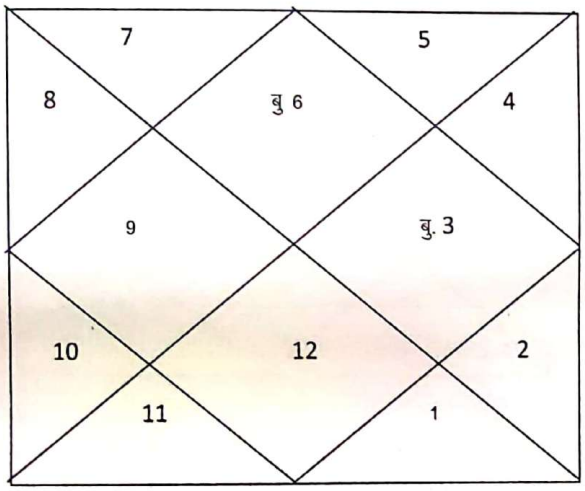
जन्म कुण्डली में शुक्र, मंगल, शनि, गुरु व बुध स्व राशि में या उच्चस्थ व बली होकर केन्द्र में बैठे हों तो मालव्य, रुचक, शश, हंस, भद्र से पांच महापुरुष योग क्रमशः होते हैं। इन पांचों के लक्षण विद्वानों द्वारा विस्तृत रूप से कहे गये हैं।

उदाहरण स्वरूप पंच महापुरुष योगों का निर्माण पृथक्–पृथक् निम्न प्रकार से होता है :–

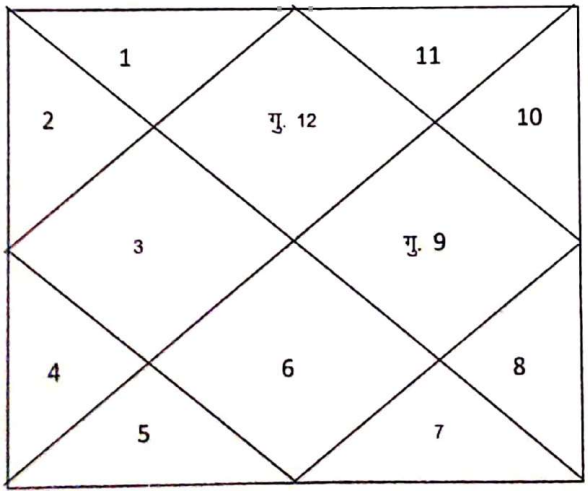
10.3.1 रुचक–योग : मेष लग्न में लग्न से केन्द्र में मंगल उनकी स्व राशि मेष या अपनी उच्च राशि मकर में होकर लग्न से केन्द्र में होने से रुचक योग बना है।

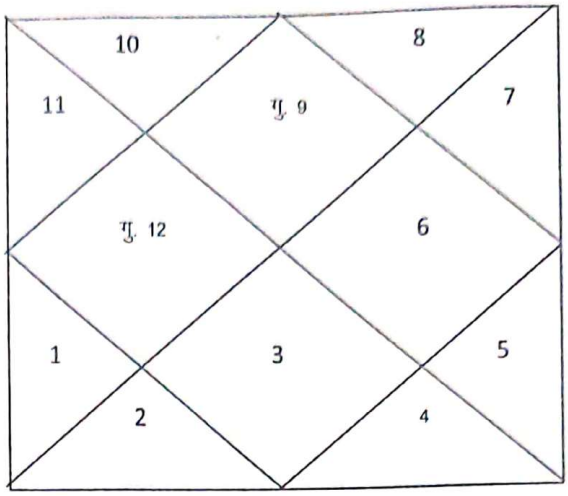


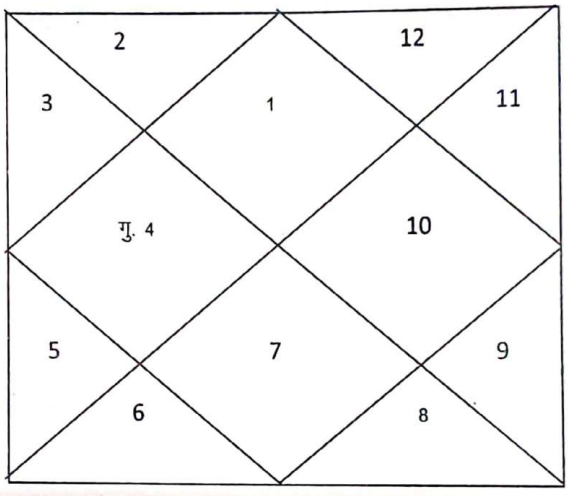
10.3.2 भद्र–योग : कन्या लग्न में स्व राशि या उच्च राशि कन्या का बुध या स्व राशि मिथुन का बुध लग्न से केन्द्र में स्थित होने से भद्र–योग बन रहा है।



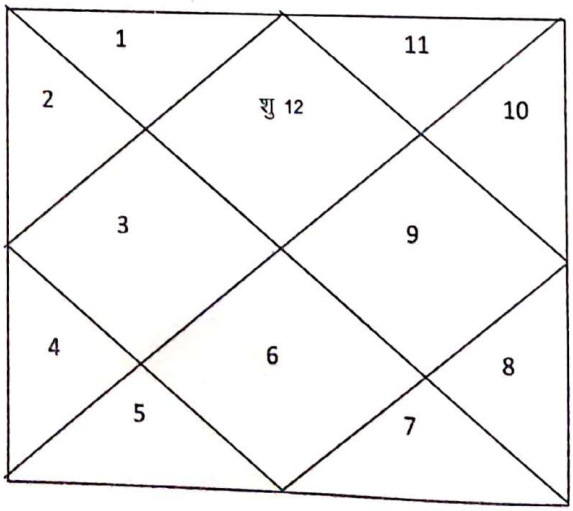
10.3.3 हंस–योग : मीन, धनु राशियों में स्वराशि और कर्क राशि में उच्चस्थ गुरु लग्न से केन्द्र में स्थित होने से हंस–योग बनता है।

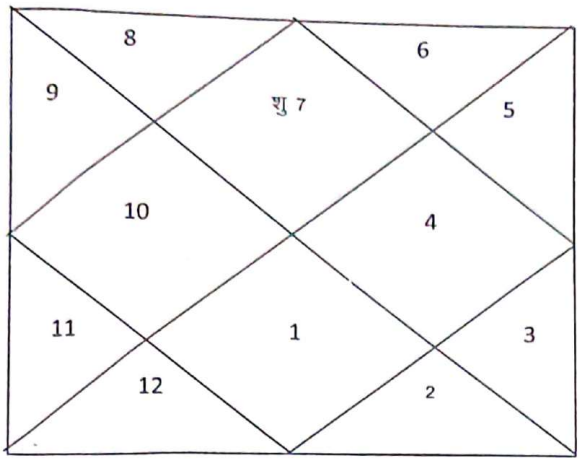

1
11
2
गु. 12
10
3
गु. 9
4
6
8
5
7


10
8
11
गु. 9
7
गु. 12
6
1
3
5
2
4

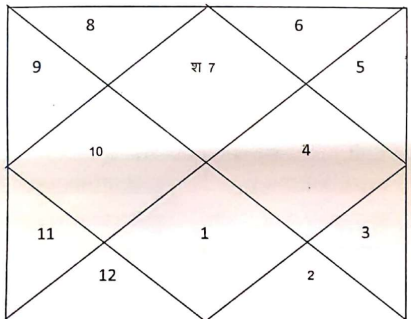

2
12
3
1
11
गु. 4
10
5
7
9
6
8

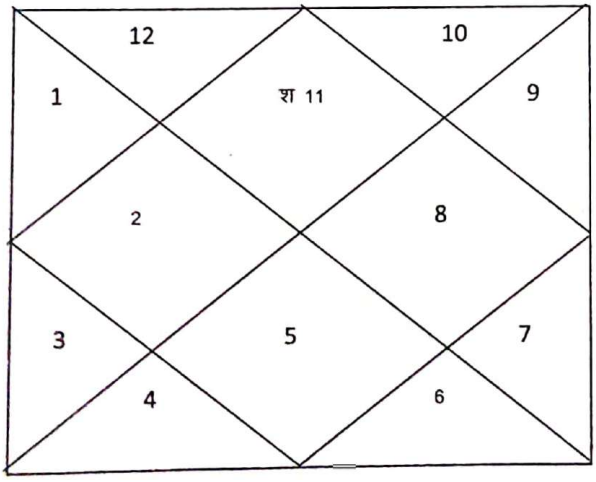
10.3.4 मालव्य–योग : मीन, तुला और सिंह लग्न की तीनों जन्म पत्रिकाओं में शुक्र उच्च राशि मीन, स्वराशि तुला और स्वराशि वृष में लग्न से केन्द्र में स्थित होने से हंस–योग बना रहा है। इसी प्रकार लग्न से केन्द्र में स्वराशि या उच्च राशि में स्थित होने पर मालव्य योग बनता है।





10.3.5 शश–योग : तुला लग्न की जन्म पत्रिका में लग्न से केन्द्र में उच्च का शनि और कुम्भ लग्न की जन्म पत्रिका में लग्न से केन्द्र में स्वराशि का शनि होने से शश–योग बन रहा है।





रुचक–योग :

दीर्घाननो महोत्साहो स्वच्छकान्तिर्महाबलः।
चारुभ्रूर्नीलकेशश्च सुरुचिश्च रणप्रियः॥
रक्तश्यामोऽरिहन्ता च मन्त्रविच्चोरनायकः।
क्रूरो भर्ता मनुष्याणां क्षमाऽङ्घ्रिर्द्विजपूजकः॥
वीणावज्रधनुःपाशवृषचक्राङ्कितः करे।
मन्त्राभिचारकुशली दैर्घ्ये चैव भाताङ्गुलः॥
मुखदैर्घ्यसमं मध्यं तस्य विज्ञैः प्रकीर्तितम्।
तुल्यस्तुलासहस्रेण रुचको द्विजपुङ्गव॥

रुचक–योग– रुचक–योग को बनाने वाला ग्रह मंगल है। रुचक–योग वाला व्यक्ति लम्बे मुख वाला, महान् उत्साही, निर्मल क्रान्ति वाला, महाबली, सुन्दर भौंह वाला, काले केश वाला, सब वस्तुओं में रुचि वाला, युद्धप्रिय, लाल वर्ण, शत्रु–हन्ता, मन्त्र–ज्ञाता, चोरों का राजा, क्रूर, मनुष्यों का स्वामी, दुर्बल पांव वाला, ब्राह्मणों की पूजा करने वाला, वीणा, वज्र, धनुष, पाश, वृष चक्राङ्कित और चक्ररेखा युक्त हस्त वाला तथा गुप्त विचार एवं मन्त्र प्रयोग करने वाला होता है।

भद्र–योग

शार्दूलप्रतिमः पीनवक्षा गजगतिः पुमान्।
पीनाजानुभुजः प्राज्ञश्चतुरस्रश्च योगवित्॥
सात्त्विकः शोभनांघ्रिश्च शोभनश्मश्रुसंयुतः।
कामी शङ्खगदाचक्र–शर–कुंजरचिह्नकैः॥
ध्वजलाङ्गलचिह्नश्च चिह्नितांघ्रिकराम्बुजः।

सुनासश्शास्त्रविद् धीरः कृष्णाकुंचितकेशभृत्॥
स्वतन्त्रः सर्वकार्येषु स्वजनप्रीणनक्षमः।
ऐश्वर्य भुज्यते चास्य नित्यं मित्रजनैः परैः॥

भद्र–योग का निर्माण बुध से होता है। भद्र–योग वाला व्यक्ति सिंह तुल्य प्रतापी, ऊँचे वक्ष स्थल, हाथी के समान गतिमान्, आजानुभुज, पण्डित, चौकोर, योग को जानने वाला, सतोगुणी, सुन्दर चरण और सुन्दर दाढ़ी मूँछ वाला, सुन्दर नासिका, शास्त्र ज्ञाता, गम्भीर, काले और घुँघराले बालों वाला सभी कार्यों में स्वतंत्र एवं अपने व्यक्तियों का भरण–पोषण करने की क्षमता वाला भद्र पुरुष होता है।

मंत्रेश्वर के अनुसार भद्र–योग में जन्म लेने वाला व्यक्ति कुशाग्र बुद्धि विद्वानों से प्रशंसित स्वभाव वाला व भाषण में चतुर होता है।

हंस–योग

हंसो हंसस्वरो गौरः सुमुखोन्नतनासिकः।
श्लेष्मलो मधुपिङ्गाक्षो रक्तवर्णनखः सुधीः॥
पीनगण्डस्थलो वृत्तशिराः सुचरणो नृपः।
मत्स्याऽङ्कुश–धनुः–शंख–कंज–खट्वाङ्ग–चिह्नकैः॥

हंस–योग में जिस जातक का जन्म होता है वह हंस के समान वाणी वाला, सुन्दर मुख और ऊँची नाक वाला, कफ प्रकृति, शहद की तरह पीले नेत्रों वाला, लाल नाखून, सुन्दर बुद्धि, मजबूत गण्ड स्थल, वृत्ताकार शिर और सुन्दर चरण वाला राजा होता है। हस्त–पाद मछली, अंकुश, धनुष, शंख, कमल, खटिया के समान रेखाओं रो अंकित होते हैं।

फलदीपिकाकार मंत्रेश्वर के अनुसार जो व्यक्ति हंस–योग म जन्म लेता है उसके पैरों में शंख, कमल मत्स्य और अंकुश के चिह्न होते हैं। उत्तम भोजन करने वाला और सज्जनों द्वारा प्रशंसित होता है।

मालव्य–योग :

समौष्ठः कृशमध्यश्च चन्द्रकान्तिरुचिः पुगान्।
सुगन्धो नातिरक्ताङ्गो न ह्रस्वो नातिदीर्घकः॥
समस्वच्छरदो हस्तिनाद आजानुबाहुधृक्।
मुखं विश्वाङ्गुलं दैर्घ्ये विस्तारे च दशाङ्गुलम्॥

सुन्दर होठ, मध्य भाग पतला, चन्द्र के अनुसार सुन्दर कान्ति वाला, सुगन्ध युक्त शरीर वाला, सामान्य लाल वर्ण के शरीर वाला, न अधिक छोटा, न बड़ा मध्यम कद वाला, सुन्दर और

साफ दांत वाला हस्ति सदृश शब्द वाला, घुटनों तक भुजा वाला, 13 अंगुल लम्बाई और चौड़ाई में 10 अंगुल मुख वाला मालव्य पुरुष होता है।

मंत्रेश्वर के अनुसार मालव्य–योग में जन्मा जातक धैर्यवान् और पुष्ट अंग, उत्तम भोजी, विद्वान्, प्रसन्न रहने वाला, शान्तचित्त, स्त्री–पुत्रों से सुखी, सदा समृद्धि प्राप्त करने वाला होता है

शश–योग

तनुद्विजमुखः शूरो नातिह्रस्वः कृशोदरः।
मध्ये क्षामः सुजंघश्च मतिमान् पररन्ध्रवित् ॥
भाक्तो वनादिदुर्गेषु सेनानीर्दन्तुरः शशः।
चंचलो धातुवादी च स्त्रीसक्तोऽधनान्वितः॥
मालावीणामृदङ्गाऽस्त्र–रेखाङ्कितकरांघ्रिकः।

शरीर,दांत और मुख से साधारण आकार वाला साहसी, कमर से पतला, सुन्दर जांघ, बुद्धियुक्त, शत्रु छिद्रान्वेषी, वन, पर्वत और दुर्ग में निवास करने वाला, सेनाओं का स्वामी, उच्च दंत पंक्ति वाला, चंचल, स्त्री अनुरक्त एवं पर–धन–युक्त लक्षण वाला शश पुरुष होता है। इनके हस्त–पाद में माला, वीणा, मृदङ्ग एवं शस्त्र के समान चिह्न होते हैं।

शश–योग में जन्मा व्यक्ति मंत्रेश्वर के अनुसार प्रभावशाली, किसी गाँव के स्वामी या मानव समूह के नेता होते हैं। उच्च पद पर कार्य करने के साथ–साथ इनके अधीन अच्छे लोग कार्य करते हैं। लोगों से प्रशंसित होते हुए भी इनका आचरण उत्तम नहीं होता। ऐसे लोग धनी व सुख पूर्वक रहते हैं।

फलदीपिकाकार ने कहा है कि मंगल, बुध, गुरु, शुक्र व शनि इन पंच महापुरुष कारक ग्रहों की यदि चन्द्रमा से केन्द्र में स्थिति हो तो भी पंच महापुरुष योग कारक ग्रह के समान ही फल होता है। लग्न से केन्द्र में इन ग्रहों के उच्चादि में होने पर स्थिति के समान ही चन्द्रमा से केन्द्र में भी योग देने वाला है।

यदि इन ग्रहों में से एक ग्रह योग बन रहा हो तो मनुष्य भाग्यवान, दो ग्रहों के योग निर्माता होने पर राजा तुल्य व तीन ग्रहों के योग निर्माता होने पर राजा तथा चार ग्रह योग देने वाले हों तो महाराजा तथा पांचों ग्रह ही योग बनाते हों तो उच्च पदवी प्राप्त करता है।

10.4 विविध–योग

बृहत्पाराशर होराशास्त्र के विविध–योगाध्याय में महत्वपूर्ण योग का वर्णन दिया गया है। जन्म–पत्रिका के फलादेश कथन में इन योगों का महत्वपूर्ण स्थान है।

10.4.1 गजकेसरी–योग :

केन्द्रे देवगुरौ लग्नाच्चन्द्राद्वा शुभदृग्युते।
नीचास्तारिगृहैर्हीने योगोऽयं गजकेसरी।।
गजकेसरिसंजातस्तेजस्वी धनवान् भवेत्।
मेधावी गुणसम्पन्नो राजप्रियकरो नरः।।

लग्न या चन्द्रमा से केन्द्र अर्थात् लग्न में अथवा चन्द्रमा के साथ और इनसे चतुर्थ सप्तम व दशम में गुरु केवल शुभ ग्रह के साथ अथवा दृष्ट और गुरु नीच, अस्त या शत्रुक्षेत्री नहीं हो तो गजकेसरी योग होता है।

गजकेसरी योग में जन्म लेने वाला व्यक्ति तेजस्वी, धनी, मेधावान, सभी गुणों से सम्पन्न व राजप्रिय होता है।

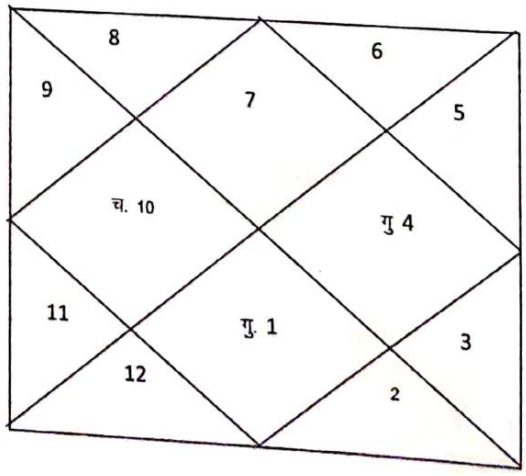
केसरी योग का फल फलदीपिकाकार ने इस प्रकार कहा है –

केसरी योग में जन्म लेने वाला शेर की तरह अपने शत्रुओं को पराजित कर देता है। यह सभा में उत्तम वक्ता, गम्भीर वक्तव्य कहने वाला राजसी होता है। लम्बी आयु वाला यह जातक तीव्र बुद्धि व महान् यश प्राप्त करने वाला अपने तेज से सबको जीत लेता है।

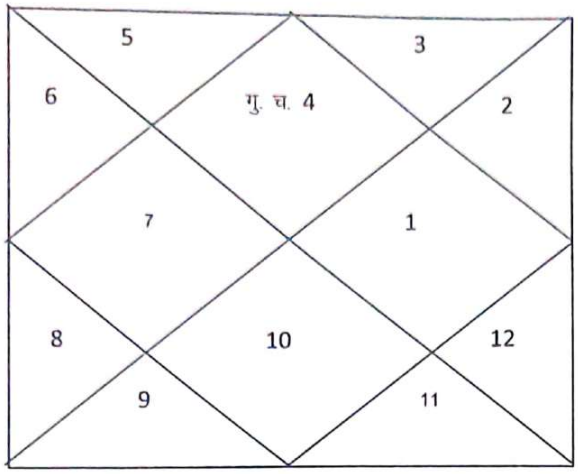
गजकेसरी–योग :

तुला लग्न की जन्म पत्रिका में कर्क राशि में स्थित गुरु मकर के चन्द्रमा से केन्द्र सप्तम भाव में तथा मेष राशि में स्थित गुरु चन्द्रमा से चतुर्थ भाव में स्थित होने से गजकेसरी–योग बना। लग्न से केन्द्र में होने पर भी गजकेसरी–योग कहा गया है। इसका निर्माण भी यहाँ हो रहा है।

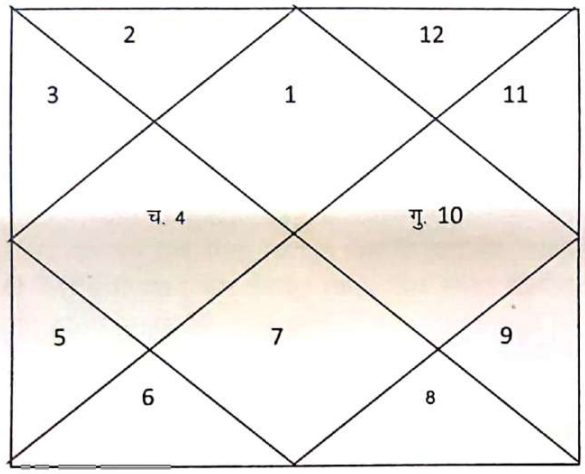
उदाहरण –1



उदाहरण –2



उदाहरण –3



दूसरे उदाहरण में लग्न व चन्द्र–लग्न में निर्मित गजकेसरी–योग में चन्द्रमा स्वराशि व गुरु अपनी उच्च राशि में है इसका विशेष फल होगा।

तृतीय उदाहरण में चन्द्र व साथ ही लग्न से भी गुरु के केन्द्र में होने पर भी गुरु की नीच राशि में स्थिति शत्रुक्षेत्री व अस्त होने पर पाराशर के अनुसार गजकेसरी योग नहीं होता। जबकि मंत्रेश्वर ने गजकेसरी–योग को केसरीयोग कहा है उसके अनुसार चन्द्रमा, बृहस्पति से केन्द्रस्थ हो तो केसरी–योग होता है। यहाँ लग्न के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कहा गया है।

10.4.2 अमलकीर्ति–योग

दशमेऽङ्गात्तथा चन्द्रात् केवलैश्च शुभैर्युतः।
स योगोऽमलकीर्त्याख्यः कीर्तिराचन्द्रतारकी।।
राजपूज्यो महाभोगी दाता बन्धुजनप्रियः।
परोपकारी धर्मात्मा गुणाद्योऽमलकीर्तिजः।।

लग्न या चन्द्रमा से दशम भाव में केवल शुभ ग्रह स्थित हो तो अमल–कीर्ति योग होता है। इस योग में जन्मा व्यक्ति चन्द्र –ताराओं के रहने तक कीर्तियुक्त होता है। यह व्यक्ति राजपूज्य, महाभोगी, दानी, बन्धुओं का प्रिय, परोपकार तथा धर्म का पालन करने वाला, गुणवान, तथा सुन्दर यश प्राप्त करता है।

10.4.3 पर्वत–योग

सप्तमे चाऽष्टमे शुद्धे शुभग्रहयुतेऽथवा।
केन्द्रेषु शुभयुक्तेषु योगः पर्वतसंज्ञकः।।
भाग्यवान् पर्वतोत्पन्नः वाग्मी दाता च शास्त्रवित्।
हास्यप्रियो यशस्वी च तेजस्वी पुरनायकः।।

सप्तम–अष्टम भाव में कोई ग्रह नहीं हो या केवल शुभ ग्रह इन स्थानो में हो और सभी शुभ ग्रह केन्द्र में स्थित हों तो पर्वत नामक योग होता है। पर्वत–योग में जन्म लेने वाला व्यक्ति भाग्यवान, वक्ता, शास्त्र को जानने वाला, हास्य प्रेमी, यशवान, तेजवान, और नगर का स्वामी होता है।

10.4.4 काहल–योग

सुखेशेज्यौ मिथः केन्द्रगतौ बलिनि लग्नपे।
काहलो वा स्वभोच्चस्थे सुखेशे कर्मपान्विते।।
ओजस्वी साहसी धूर्तश्चतुरङ्गबलान्वितः।
यत्किंचिद् ग्रामनाथश्च काहले जायते नरः।।

लग्न का स्वामी बल युक्त हो सुख भाव का स्वामी और गुरु एक दूसरे से केन्द्र में हों या सुख भाव स्वामी, कर्मभाव स्वामी युक्त होकर स्वोच्च अथवा अपनी राशि में स्थित हो तो दोनों तरह से काहल–योग होता है। इस योग में जन्मा व्यक्ति ओजवान्, साहसयुक्त, चतुर, बलवान्, कुछ गाँवो का स्वामी लेकिन धूर्त भी होता है।

10.4.5 चामर–योग

लग्नेशे तुङ्गगे केन्द्रे गुरुदृष्टे तु चामरः।
शुभद्वये विलग्ने वा नवमे वा दशमे पदे।।

राजा व राजपूज्यो वा चिरजीवी च पण्डितः।
वाग्मी सर्वकलाविद्वा चामरे जायते जनः।।
सबले लग्नपे पुत्र–षष्ठपौ केन्द्रगौ मिथः।

उच्चस्थ होकर केन्द्र में गये लग्न का स्वामी गुरु से दृष्ट हो अथवा दो शुभ ग्रह लग्न, दशम या सप्तम में स्थित हो तो चामर–योग होता है।

चामर–योग में जन्म लेने वाला व्यक्ति राजा या राजा द्वारा पूज्य, लम्बी आयु वाला, पण्डित उत्तम वाणी वाला तथा कलाओं को जानने वाला होता है।

10.4.6 शङ्ख–योग

शङ्खो वा लग्नकर्मेशौ चरे बलिनि भाग्यपे।।
धनस्त्रीपुत्रसंयुक्तो दयालुः पुण्यवान् सुधीः।
पुण्यकर्मा चिरंजीवी शङ्खयोगोद्भवो नरः।।

लग्न स्वामी बलवान् हो तथा पंचम भाव का स्वामी तथा षष्ठेश एक दूसरे से केन्द्र में हो अथवा भाग्य भाव का स्वामी बली हो ओर लग्न स्वामी और दशमेश चर राशि में गये हो तो शङ्ख–योग होता है।

इस योग में जनमा जातक धनवान्, पुत्रवान् व स्त्री युक्त, दयावान्, पुण्यशाली, बुद्धि युक्त, चिरंजीवी होता है।

10.4.7 लग्नाधियोग

लग्नान्मदाष्टगैः सौम्यैः पापदृग्योगवर्जितैः।
योगो लग्नाधियोगोऽस्मिन् महात्मा शास्त्रवित्सुखी।।

लग्न से सातवें, आठवें में शुभ ग्रह स्थित हो तथा पाप ग्रह से दृष्ट व युत न हो तो लग्नाधियोग होता है। इस योग में जन्मा जातक महात्मा, शास्त्र को जानने वाला व सुखी होता है।

10.4.8 हरि–हर–ब्रह्मा–योग

स्वान्त्याष्टरथैर्द्वितीयेशाद् हरियोगः शुभग्रहैः।
कामेशाद् बन्धुधर्माष्टस्थितैः सौम्यैर्हराभिधः।।
लग्नेशाद् बन्धुकर्माय–स्थितैर्ब्रह्माह्वयः स्मृतः।
एषु जातः सुखी विद्वान् धनपुत्रादिसंयुतः।।

धन भाव के स्वामी से दूसरे, आठवें व बारहवें में शुभ ग्रह हो तो हरि–योग होता है। सप्तम भाव स्वामी से चतुर्थ, नवम तथा अष्टम में शुभ ग्रह स्थित हो तो हर–योग होता है लग्नेश से चतुर्थ,

दशम व एकादश भाव में शुभ ग्रह हो तो ब्रह्म–योग कहलाता है। इन योगों में जन्मा व्यक्ति सुखी, विद्वान्, धनी तथा पुत्रवान् होता है।

10.4.9 भेरी–योग

सबले भाग्यपे भेरी खगैः स्वान्त्योदयास्तगैः।
सबले भाग्यपे वाऽसौ केन्द्रे शुक्रेज्यलग्नपैः।।

भाग्य स्थान का स्वामी बलवान् हो और द्वितीय, द्वादश, प्रथम व सप्तम भाव में समस्त ग्रह बैठे हों अथवा नवमेश बलवान् हो तथा शुक्र व बृहस्पति तथा लग्न भाव का स्वामी केन्द्र में हों तो भेरी–योग होता है।

10.4.10 मत्स्य–योग :

धर्मलग्नगते सौम्ये पंचमे सदसद्युते।
पपे च चतुरस्रस्थे योगोऽयं मत्स्यसंज्ञकः।।
क़ालज्ञः करुणामूर्तिर्गुणधीशीलरूपवान्।
यशोविद्यातपस्वी च मत्स्ययोगे हि जायते।।

भाग्य भाव तथा लग्न भाव में शुभ ग्रह स्थित हों, पंचम भाव में शुभ ग्रह तथा अशुभ ग्रहों का योग हो। चौथे तथा आठवें भाव में पाप ग्रह हों तो मत्स्य योग होता है। मत्स्य योग में जन्मा व्यक्ति काल को जानने वाला दयावान, गुणी, बलवान्, रूपवान्, विद्यावान् व तपस्वी होता है।

10.4.11 खड्ग–योग :

भाग्येशे धनमावस्थे धनेशे भाग्यमावगे।
लग्नेशे केन्द्रकोणस्थे खड्गयोगः स कथ्यते।।

भाग्य भाव का स्वामी धन भाव में हो। धन स्वामी भाग्य भाव में स्थित हो तो खड्ग–योग होता है। खड्ग–योग में जन्म लेने वाला व्यक्ति धनवान, भाग्यवान, सुखी, शास्त्रों को जानने वाला बुद्धिमान, बलसम्पन्न, कृतज्ञ व कुशल होता है।

10.4.12 लक्ष्मी–योग :

केन्द्रे मूलत्रिकोणस्थे भाग्येशे वा स्वमोच्चगे।
लग्नाधिपे बलाढ्ये च लक्ष्मीयोगः प्रकीर्त्यते।।
सुरूपो गुणवान् भूपो बहुपुत्रधनान्वितः।
यशस्वी धर्मसम्पन्नो लक्ष्मीयोगे जनो भवेत्।।

लग्न का स्वामी बलवान् हो, भाग्यभाव का स्वामी अपने फल त्रिकोण उच्चस्थ अथवा

10.5 सारांश

जीवन को प्रभावित करने वाले विविध ग्रह योगों को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। पंच महापुरुष योगों का सम्बन्ध जीवन में पराक्रम, बुद्धि, ज्ञान, विवेक, ऐश्वर्यादि जीवन के विशेष पक्षों से है। इन योगों के जन्मपत्रिका में एक साथ अथवा एक या दो भी घटित होने पर व्यक्ति के जीवन की दिशा विशेष प्रभावित होती है।

इन योगों के अतिरिक्त गुरु–चन्द्र योग व धन व भाग्य सम्बन्धी योगों के वर्णन से इकाई के अध्ययन का विशेष लाभ होगा।

10.6 शब्दावली :

कृतज्ञ – किये हुए का उपकार मानने वाला

खड्ग – तलवार के समान आकृति

अभ्यास प्रश्न :

प्र.1 पंच महापुरुष योगों में रुचक योग बनता है।

(अ) गुरु (ब) बुध (स) शनि (द) मंगल

प्र. 2 शुक्र से बनने वाला योग है।

(अ) गजकेसरी–योग (ब) पर्वत–योग

(स) हंस–योग (द) मालव्य–योग

प्र. 3 गजकेसरी योग बनता है।

(अ) बुध–गुरु (ब) चन्द्र–गुरु

(स) शुक्र (द) शुक्र–शनि

लघूत्तर प्रश्न :

प्र. 1 चामर–योग क्या है।

प्र. 2 भेरी–योग का वर्णन करें।

प्र. 3 शश–योग कैसे बनता है।

प्र. 4 गजकेसरी–योग किस प्रकार बनता है।

प्र. 5 लक्ष्मी–योग का फल लिखिये।

10.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर –

प्र. 1 (द) मंगल

प्र. 2 (द) मालव्य–योग

प्र. 3 (अ) चन्द्र–गुरु

10.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. फलदीपिका – गोपेश कुमार ओझा

मोती लाल बनारसी दास

2. सारावली – सोमेश्वर नाथ झा

भारतीय विद्या प्रकाशन

3. वृहत्पाराशर होराशास्त्र – पं श्री पद्मनाभ शर्मा

चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

10.9 सहायक / उपयोगी सामग्री

1. 300 महत्वपूर्ण योग – वी.बी. रमण

10.10 निबन्धात्मक प्रश्न :

1. पंच–महापुरुष–योग के निर्माण व फल की व्याख्या करें।

इकाई – 11 सूर्य तथा चन्द्रमा से बनने वाले योग

11.1 प्रस्तावना
11.2 उद्देश्य
11.3 चन्द्रमा से बनने वाले योग
11.3.1 अल्पमध्यमोत्तम–योग
11.3.2 शुभ तथा अशुभ–योग
11.3.3 चन्द्राधियोग
11.3.4 उत्तम–मध्यम–अल्पधन–योग
11.3.5 सुनफा–अनफा–दुरधरा–योग
11.3.6 सुनफा–योग का सामान्य फल
11.3.6.1 सुनफा–योग विशेष फल–कारक ग्रह
11.3.6.1.1 सुनफा–योग–कारक मंगल
11.3.6.1.2 सुनफा–योग–कारक बुध
11.3.6.1.3 सुनफा–योग–कारक गुरु
11.3.6.1.4 सुनफा–योग–कारक शुक्र
11.3.6.1.5 सुनफा–योग–कारक शनि
11.3.7 अनफा–योग का सामान्य फल
11.3.7.1 अनफा–योग विशेष फल कारक ग्रह
11.3.7.1.1 अनफा–योग–कारक मंगल
11.3.7.1.2 अनफा–योग–कारक बुध
11.3.7.1.3 अनफा–योग–कारक गुरु
11.3.7.1.4 अनफा–योग–कारक शुक्र
11.3.7.1.5 अनफा–योग–कारक शनि
11.3.8 दुरधरा–योग का सामान्य फल
11.3.8.1 दुरधरा–योग का विशेष फल
11.4 केमद्रुम–योग
11.4.1 केमद्रुम–योग का फल
11.5 सूर्य से बनने वाले योग
11.5.1 वेशी–वाशी–उभयचारी
11.5.2 वेशी–योग का फल
11.5.3 वाशी–योग का फल

11.5.4 उभयचारी–योग का फल

11.6 सारांश

11.7 शब्दावली

11.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

11.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

11.10 सहायक/उपयोगी सामग्री

11.11 निबन्धात्मक प्रश्न

11.1 प्रस्तावना

सम्पूर्ण जीवन को जन्म पत्रिका के 12 भावों में विभाजित कर जीवन से सम्बन्धित फलकथन किया जाता है। पिछली इकाई में तनु आदि बारह भावों की विशेषताओं के विषय में वर्णन किया गया है। लेकिन जीवन में चन्द्रमा व सूर्य का महत्त्वपूर्ण स्थान व प्रभाव होते हैं इसलिए चन्द्रमा व सूर्य से बनने वाले योगों के निर्माण में ग्रहों की स्थिति और इन योगों के जन्म पत्रिका में होने पर प्रभाव विशेष का वर्णन किया इस इकाई में किया गया है।

सूर्य व चन्द्रमा से बनने वाले विशेष योगों की निर्माण व फल की व्याख्या करने के बाद आगामी अध्याय में चन्द्र–सूर्य के अतिरिक्त पंच ग्रहों से बनने वाले पंचमहापुरुष योग व जन्म पत्रिका में विविध महत्त्वपूर्ण योगों की विस्तार से व्याख्या की जाएगी।

11.2 उद्देश्य

- चन्द्रमा से बनने वाले प्रमुख योगों से परिचित हो सकेंगे।
- चन्द्रमा से बनने वाले मध्यमोत्तम योग का आकलन कर पायेंगे।
- शुभ तथा अशुभ योग का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- अधियोग को परिभाषित कर सकेंगे।
- उत्तम मध्यम व अल्पधन योग की गणना कर सकेंगे।
- जन्म पत्रिका में सुनफा–योग को पहचान कर फल वितरण लिख पायेंगे।
- अनफा–योग का परिचय एवं फल ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- दुरधरा–योग के विविध प्रकारों का ज्ञान प्राप्त कर पायेंगे।
- केमद्रुम–योग की निर्माण प्रक्रिया को पहचान कर फल का वर्णन कर सकेंगे।
- वेशी–योग की निर्माण विधि से परिचित होकर उसके फल का ज्ञान प्राप्त कर पायेंगे।
- वाशी–योग की जन्मपत्रिका में पहचान कर सकेंगे तथा इसके फल का वर्णन कर सकेंगे।
- उभयचारी–योग के फल का विवरण दे पायेंगे।

11.3 चन्द्रमा से बनने वाले योग :

11.3.1 अल्पमध्यमोत्तम–योग

सहस्ररश्मितश्चन्द्रे कण्टकादिगते क्रमात्।
धनधीनैपुणादीनि न्यूनमध्योत्तमानि हि।।

सूर्य से चन्द्रमा यदि केन्द्र स्थानों अर्थात् प्रथम, चतुर्थ, सप्तम, दशम में हो तो व्यक्ति को धन, बुद्धि, यश कम होता है। यदि सूर्य से चन्द्रमा केन्द्र अर्थात् पणफर अर्थात् द्वितीय पंचम, अष्टम व एकादश में हो तो मध्य एवं सूर्य चन्द्र से आपोक्लिम में हो अर्थात् तृतीय, षष्ठ, नवम, व द्वादश भाव में हो तो व्यक्ति में धन, बुद्धि व कुशलता उच्च कोटि के होते हैं।

11.3.2 शुभ तथा अशुभ योग

स्वांशे वा स्वाधिमित्रांशे स्थितश्च दिवसे शशी।
गुरुणा दृश्यते तत्र जातो धनसुखान्वितः।।
स्वांशे वा स्वाधिमित्रांशे स्थितश्च शशभृन्निशि।
शुक्रेण दृश्यते तत्र जातो धनसुखान्वितः।।
एतद्विपर्ययस्थे च शुक्रेज्यानवलोकिते।
जायतेऽल्पधनी बालो योगेऽस्मिन्निर्धनोऽथवा।।

व्यक्ति का दिन का जन्म हो और चन्द्रमा स्वनवांश अथवा अपने अधिमित्र के नवांश में हो और गुरु से दृष्ट होने पर जातक धनी और सुखी होता है। रात्रि का जन्म होने पर चन्द्रमा स्वनवांश या अधिमित्र के नवांश में हो तथा शुक्र से दृष्ट हो तो व्यक्ति धनवान व सुख पूर्वक जीने वाला होता है। इसके विपरीत स्थिति होने पर अल्प धनी होता है।

11.3.3 चन्द्राधियोग

चन्द्राद्रन्ध्रारिकामस्थैः सौम्यैः स्वादधियोगकः।
तत्र राजा च मन्त्री च सेनानीश्च बलक्रमात्।।

चन्द्रमा से अष्टम, षष्ठ व सप्तम भावों में शुभ ग्रह हो तो अधियोग होता है। इसमें जन्म लेने वाला व्यक्ति ग्रहों के बल के आधार पर राजा, मन्त्री व सेनापति होता है।

11.3.4 उत्तम–मध्यम–अल्प धनयोग

चन्द्राद् वृद्धिंगतैः सर्वैः शुभैर्जातो महाधनी।
द्वाभ्यां मध्यधनो जात एकेनाऽल्पधनो भवेत्।।

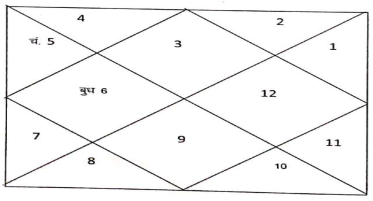
चन्द्र से वृद्धि स्थान अर्थात् तृतीय, षष्ठ, दशम व एकादश में सभी शुभ ग्रह बैठे हों तो व्यक्ति महान् धनवान् होता है। दो शुभ ग्रह इन स्थानों में हो तो मध्यम धनवान् व एक ही शुभ ग्रह हो तो अल्प धनवान् होता है।

11.3.5 सुनफा–अनफा–दुरधरा योग

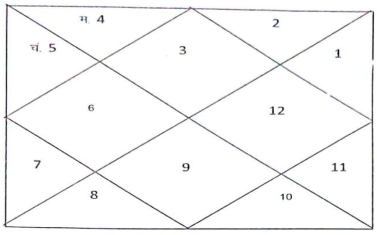
सुनफाऽनफादुरधरा भवन्ति योगाः क्रमेण रविरहितैः।
वित्तान्त्योभयसंस्थैः कैरववनबान्धवाद्विहगैः।।

जन्म पत्रिका में सूर्य के अतिरिक्त चन्द्रमा से द्वितीय भाव में कोई ग्रह हों तो सुनफा नाम योग होता है। यदि बारहवें भाव में कोई ग्रह हो तो अनफा–योग कहलाता है। सूर्य के अलावा चन्द्रमा से दूसरे व बारहवें दोनों स्थानों में ग्रह हो तो दुरधरा नामक योग होता है। तीनों ही योगों को इस प्रकार स्पष्ट कर सकते है।

सुनफा–योग

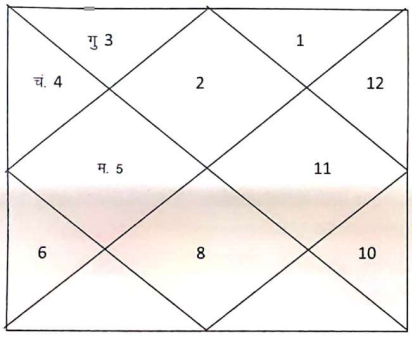


अनफा–योग

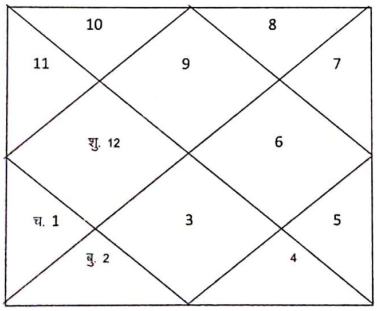


दुरधरा–योग :

वृष लग्न में तृतीय भाव में कर्क के चन्द्रमा के दूसरे व 12वें में क्रमशः मंगल गुरु होने से दुरधरा योग बना है।



धनु लग्न की पत्रिका में मेष के चन्द्रमा से दूसरे व बारहवें क्रमशः बुध व शुक्र होने से दुरधरा–योग बना।



सुनफा–योग में चन्द्रमा से द्वितीय स्थान में बुध है और अनफा–योग में चन्द्रमा से द्वादश भाव में मंगल है। इस प्रकार बुध व मंगल से योग बने हैं।

11.3.6 सुनफा–योग का सामान्य फल

राजा वा राजतुल्यो वा धीधनख्यातिमान् जनः।
स्वगुजार्जितवित्तश्च सुनफायोगसम्मवः।।

जन्म पत्रिका में सुनफा–योग बन रहा हो तो इस योग में जन्मा व्यक्ति लक्ष्मीवान् स्वयं के प्रयासों से धन कमाने वाला, अति धार्मिक, शास्त्र तत्व का ज्ञाता, यशवान्, सुन्दर गुण युक्त 'शान्त, सुखी, राजा या मन्त्री तथा बहुत बुद्धिमान् होता है।

सारावली में सुनफा–योग का फल इस प्रकार कहा गया है।

श्रीमान् स्वबाहुविमवो बहुधर्मशीलः
शास्त्रार्थविद् बहुयशाः स्वगुणाभिरामः।
शान्तः सुखी क्षितिपतिः सचिवोऽथ वा स्यात्
सूतः पुमान् विपुलधीः सुनफाभिधाने।।

11.3.6.1 सुनफा–योग विशेष फल–कारक ग्रह

सुनफा–योग सूर्य के अतिरिक्त मंगल, बुध, गुरु, शुक्र व शनि से बन सकता है। इस दृष्टि से इनके पृथक्–पृथक् प्रभाव का वर्णन उचित होगा।

11.3.6.1.1 मंगल :– यदि सुनफा–योग मंगल से बन रहा है तो जातक पराक्रमी,धनी, कटु वाणी बोलने वाला, उग्र सेनापति, हिंसक व पाखण्ड का विरोध करने वाला होता है

11.3.6.1.2 बुध :– सुनफा–योग बुध ग्रह बना रहा हो तो इस प्रकार की जन्म पत्रिका वाला व्यक्ति वेद, शास्त्र, संगीत विद्या में निष्णात होता है। धर्म में निरत , काव्य कर्ता, मनस्वी,सबका हित चाहने वाला सुशरीर जातक होता है।

11.3.6.1.3 गुरु :– गुरु सुनफा–योग कारक ग्रह हो तो व्यक्ति विद्याओं में (निष्णात) आचार्य अर्थात् समस्त विद्याओं का ज्ञाता, प्रसिद्ध, राज प्रिय और सुन्दर परिवार व धन से पूर्ण होता है।

11.3.6.1.4 शुक्र :– सुनफा योग बनाने वाला शुक्र ग्रह होने पर व्यक्ति स्त्री, खेत, धन, गृह, वैभव, चतुष्पदो से सम्पन्न, सुन्दर, पराक्रमशील, राजा से सम्मानित, धैर्यवान्, सभी कार्यों में कुशल रहता है।

11.3.6.1.5 शनि :– सुनफा–योग शनि द्वारा बन रहा हो तो व्यक्ति चतुर बुद्धि, गाँव तथा शहरी मनुष्यों से प्रतिदिन पूज्य, धनी, कार्यों में निरत व धैर्यवान् होता है।

11.3.7 अनफा–योग का सामान्य फल

वाग्मी प्रभुर्द्रविणवानगदः सुशीलो
भोक्तान्नपानकुसुमाम्बरमामिनीनाम् ।
ख्यातः समाहितगुणः सुखशस्तचित्तो,
योगे निशाकरकृते त्वनफे सुवेशः।।

अनफा–योग में जन्म लेने वाला व्यक्ति वक्ता, समर्थ, सम्पत्तिवान्, नीरोगी, सुन्दर, शीलयुक्त, अन्न वस्त्रादि समस्त सुख भोक्ता प्रसिद्ध, गुणयुक्त, प्रसन्न रहने वाला, सुखी व सुशरीर होता है।

11.3.7.1 अनफा–योग विशेष फल कारक ग्रह

मंगल:– अनफा–योग का निर्माण कर्ता यदि मंगल हो तो व्यक्ति चोरों का स्वामी, ढीठ, स्वतंत्र अभिमानी, युद्ध–प्रेमी क्रोध करने वाला, श्रेष्ठ व सेवा करने योग्य, प्रशंसनीय, सुन्दर शरीर व सुलाभ कर्ता होता है।

11.3.7.2 बुध :– व्यक्ति की जन्मपत्रिका में अनफा–योग बनाने वाला ग्रह बुध होने पर व्यक्ति गान व नृत्य,विद्या,लेखन में चतुर, कवि, अच्छा वक्ता, राजा से आदर सत्कार पाने वाला, सुन्दर शरीर वाला तथा प्रसिद्ध कार्य करने वाला होता है।

11.3.7.3 गुरु:– अनफा योग कारक गुरु होने पर व्यक्ति गम्भीर,बलवान्, मेधावी, शुभ कार्यों में संलग्न, बुद्धि युक्त, राजा से यश प्राप्त करने वाला व श्रेष्ठ कवि होता है।

11.3.7.4 शुक्र:– जन्म पत्रिका में शुक्र के अनफा–योग बनाने पर व्यक्ति स्त्रियों का प्रिय, विनम्र, राजा, गायों का स्वामी, भोग कर्ता, स्वरूपवान्, विख्यात, स्वर्णादि सम्पत्ति वाला होता है।

11.3.7.5 शनि:– अनफा–योग शनि द्वारा निर्मित होने पर व्यक्ति बड़े हाथ वाला (विस्तीर्ण भुवनेशो– पाठ होने पर विशाल भूमि व जंगल का स्वामी) अपने वचन का पालन करने वाला, चतुष्पद, पर सम्पत्ति युक्त, चरित्रहीन स्त्री का पति या भक्त तथा गुणयुक्त होता है।

11.3.8 दुरधरा–योग का सामान्य फलः–

उत्पन्नसुखभुग् दाता धनवाहनसंयुतः।
सद्भृत्यो जायते नूनं जनो दुरधराभवः।।

वृहत् पाराशर होराशास्त्र में दुरधरा–योग में उत्पन्न व्यक्ति को सुखी, दान देने वाला, धनवान्, वाहनयुक्त और अच्छे भृत्यों वाला कहा गया है।

वाग्बुद्धिविक्रमगुणैः प्रथितः पृथिव्यां
स्वातन्त्र्यसौख्यधनवाहनभोगभोगी।
दाता कुटुम्बधनपोषणलब्धखेदः
सद्वृत्तवान् दुरधराप्रभवो धुरिस्थः।।

सारावली के अनुसार जिस व्यक्ति के जन्म के समय दुरधरा–योग होता है वह वाणी–बुद्धि पराक्रम व गुणों से विश्व में विख्यात, स्वतंत्र–सुख, लक्ष्मी, वाहन आदि के सुख का भोग करने वाला, दान करने वाला, परिवार पालने में दुःख प्राप्त करने वाला, उत्तम स्वभाव वाला होता है।

11.3.8.1 दुरधरा–योग का विशेष फल

यदि यह योग मंगल व बुध से बन रहा हो तो व्यक्ति असत्य भाषण करने वाला, धनवान्, चतुर, दुष्ट प्रकृति, अधिक लोभी, वृद्धा स्त्री में आसक्ति रखने वाला व अपने कुल में प्रधान होता है।

दुरधरा योग देने वाला मंगल–गुरु हो तो व्यक्ति अपने कार्यों में विख्यात, वैभव सम्पन्न, अधिक शत्रुओं वाला, प्रसन्नचित्त, अपने कुल का रक्षक व संग्रह करने वाला होता है।

मंगल–शुक्र के दुरधरा–योग कारक होने पर व्यक्ति की स्त्री उत्तम चरित्र वाली, अथवा शुभ–इच्छा करने वाला, सौन्दर्य युक्त, ऐश्वर्य सम्पन्न, विवाद कर्त्ता, कुशलता से कार्य करने वाला, योगी तथा युद्ध में साहसी होता है।

दुरधरा–योग मंगल–शनि से बनने पर व्यक्ति निन्दित स्त्री व भ्रष्ट धन वाला, संग्रह कर्त्ता, बुरे में आसक्त, क्रोधी स्वभाव, चुगली करने वाला तथा शत्रु हन्ता होता है।

बुध–गुरु यदि दुरधरा–योग बनाने वाला हो तो व्यक्ति धर्मरत, शास्त्रज्ञ, अधिक बोलने वाला, अच्छा कवि, धनवान्, त्यागी व विख्यात होता है।

जातक की जन्म पत्रिका में बुध–शुक्र योग बनाते हों तो वह मधुर वाणी वाला, ऐश्वर्य सम्पन्न, संगीत में रुचि रखने वाला, सेवा योग्य, मन्त्री होता है। बुध शनि से दुरधरा–योग बने तो जातक अल्पज्ञान से भी विदेश में जाकर धन संग्रह करने वाला, जन–पूज्य व स्वजन विरोधी होता है।

गुरु शुक्र दुरधरा–योग बनायें तो व्यक्ति धैर्यवान् पराक्रमी, नीतिज्ञाता, स्वर्ण–रत्नादि से परिपूर्ण प्रसिद्ध राज कार्य करने वाला होता[?] है।

जिस जातक की पत्रिका में गुरु–शनि से दुरधरा–योग निर्मित होता है वह सुखी, नीतिवान्, प्रिय वाणी वाला, उत्तम विद्वान्, शान्तचित्त, धनी व रूपवान् होता है।

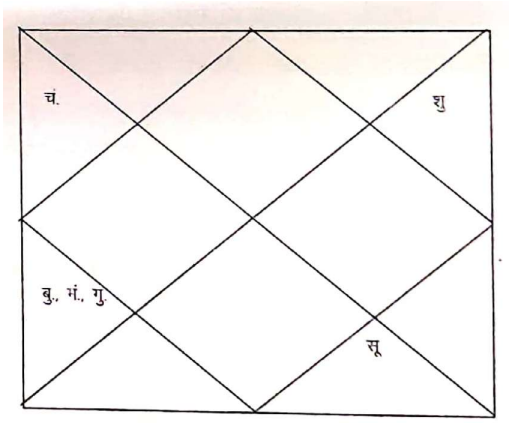
शुक्र–शनि से दुरधरा योग बनने पर व्यक्ति वृद्ध के समान काम करने वाला अपने कुल में प्रमुख, चतुर, स्त्रियों में प्रसिद्ध, धनवान् तथा राजा से सम्मान प्राप्त कर अधिक धनवान् होता है।

11.4 केमद्रुम–योग :–

एते न यदा योगाः केन्द्रग्रहवर्जितः शशांकश्च।
केमद्रुमोऽतिकष्टः शशिनि समस्तग्रहादृष्टे।।

जन्म पत्रिका में चन्द्रमा किसी भी ग्रह से दृष्ट नहीं हो तथा चन्द्रमा से दूसरे और बारहवें स्थान में सूर्य के अतिरिक्त अन्य कोई भी ग्रह नहीं हो। तो केमद्रुम नाम योग होता है। यह अनेक प्रकार के कष्ट देने वाला होता है।

केमद्रुम–योग के निम्न प्रकार में चन्द्रमा के दूसरे व बारहवें भाव में कोई ग्रह नहीं है और चन्द्रमा पर किसी ग्रह की दृष्टि भी नहीं है। साथ ही चन्द्रमा से केन्द्र में कोई ग्रह नहीं है। अतः केमद्रुम–योग है।



11.4.1 केमद्रुम–योग का फल :

कान्तान्नपानगृहवस्त्रसुहृद्विहीनो दारिद्र्यदुःखगददैन्यमलैरुपेतः।
प्रेष्यः खलः सकललोकविरुद्धवृत्तिः केमद्रुमे भवति पार्थिववंशजोऽपि।।

जिस व्यक्ति के जन्म समय में केमद्रुम योग होता है वह राजा के वंश में जन्म लेने पर भी अन्न–पान–भवन–वस्त्र व मित्रों से रहित, दरिद्री, दुःखी, रोगी व दीनता युक्त –दुष्ट प्रकृति व सबसे विरोधी व्यवहार करने वाला होता है।

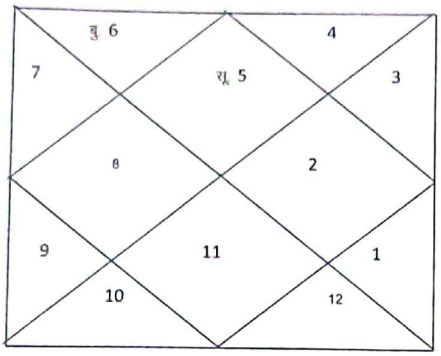
11.5 सूर्य से बनने वाले योग

11.5.1 वेशी–वाशी–उभयचारी–योग

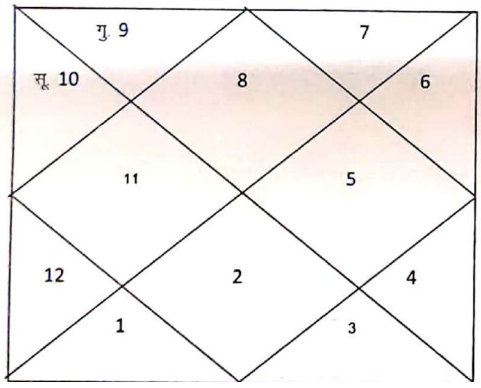
सूर्यात् स्वान्त्योभयस्थैश्च विना चन्द्रं कुजादिभिः।
वेशि–वाशिसमाख्यौ च तथोभयचरः क्रमात्।।1।।

चन्द्रमा के अतिरिक्त मंगल, बुध, गुरु, शुक्र व शनि सूर्य से दूसरे भाव में हो तो वेशी–योग और द्वादश भाव में चन्द्रमा के अतिरिक्त इन पांचों में से कोई ग्रह हो तो वाशी–योग होता है। तथा यदि द्वितीय व द्वादश भाव में भौमादि ग्रह स्थिति हो तो उभयचारी–योग होता है।

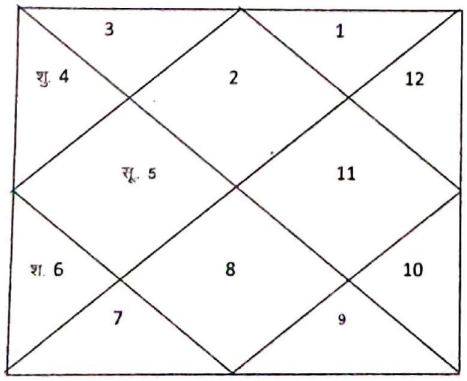
वेशी–योग :– सूर्य से द्वितीय स्थान पर चन्द्रमा को छोड़कर अन्य ग्रह अर्थात् बुध होने पर वेशी–योग बना।



वाशी–योग :– सूर्य से द्वादश स्थान में चन्द्रमा के अतिरिक्त बृहस्पति की स्थिति होने से वाशी–योग बना।



उभयचारी–योग : – सूर्य से द्वितीय व द्वादश में चन्द्रमा के अतिरिक्त अन्य ग्रह होने पर उभयचारी–योग बना है।



11.5.2 वेशी–योग का फल

समदृक् सत्यवाङ् मर्त्यो दीर्घकायोऽलसस्तथा।
सुखमागल्पवित्तोऽपि वेशियोगसमुद्भवः।।

पाराशर के अनुसार वेशी–योग में जन्म लेने वाला व्यक्ति समदृष्टि, सत्य वक्ता, स्थूलकाय, आलसी, सुखी लेकिन अल्प धन वाला होता है। वाशी–योग में जन्म लेने वाला व्यक्ति कार्यों में निपुण, दानी, यशवान्, विद्यावान् व बली होता है।

मन्ददृशं स्थिरवचनं परिमूतपरिश्रमं नतोर्ध्वतनुम्।
कथयति यवनाधिपतिर्वेशिसमुत्थं तथा पुरुषम्।।

सारावली में वेशी–योग का फल पूर्णतः पृथक् कहा गया है। सारावली के चतुर्दश अध्याय में वेशी–योग का फल कहा गया है कि वेशी–योग में उत्पन्न होने वाला व्यक्ति मन्द दृष्टि, स्थिर वाणी, अधिक परिश्रमी, नम्र व लम्बे शरीर वाला होता है।

वेशी–योग बनाने वाला ग्रह गुरु हो तो व्यक्ति धन संग्रह करने वाला, विद्वान्, सच्चे मित्रों से युक्त होता है, वेशी–योग कर्त्ता शुक्र होने पर व्यक्ति डरा हुआ, अस्थिरता से कार्य करने वाला, अल्प इच्छा युक्त, दूसरों के अधीन कार्य करने वाला होता है।

वेशी–योग बनाने वाला ग्रह बुध हो तो दूसरे के कार्य के लिए मेहनत करने वाला, धनहीन, कोमल चित्त, विनय युक्त तथा लज्जाशील होता है। यदि वेशी–योग कर्ता मंगल हो तो अधिक चलने वाला तथा परोपकार करने वाला होता है।

यदि शनि वेशी–योग बनाता हो तो व्यक्ति पर स्त्री में आसक्त, उग्र स्वभाव, विशाल आकृति वाला धूर्त व धनवान् होता है।

11.5.3 वाशी–योग :

वाशौ च निपुणो दाता यशोविद्याबलान्वितः।

पाराशर के अनुसार वाशी–योग में जन्म लेने वाला व्यक्ति सभी कार्यों में निपुण, दानी, यशयुक्त, विद्यावान् एवं बलवान् होता है।

उत्कृष्टवचः स्मृतिवानुद्योगयुतो निरीक्षते तिर्यक्।
सर्वशरीरे पृथुलो नृपतिसमः सात्त्विको वाशौ।।

वाशी–योग में जन्म लेने वाला व्यक्ति उत्तम वाणी व स्मरण शक्ति वाला परिश्रमी, वक्र दृष्टि, स्थूलकाय, राजा के समान व सत्व युक्त होता है।

वाशी–योग बनाने वाला बृहस्पति हो तो व्यक्ति धैर्यवान्, बली, बुद्धिमान् एवं वाणी में वैशिष्ट्य वाला होता है। शुक्र योग बनाता हो तो साहसी, प्रसिद्ध व गुणवान् व्यक्ति होता है।

बुध वाशी–योग बनाता हो तो व्यक्ति मधुर वाणी वाला, रक्त वर्ण वाला दूसरों की इच्छाओं का पालक होता है। मंगल के वाशी–योग कारक होने पर संग्राम में प्रसिद्ध विजयी तथा भाग्य पर विजय पाने वाला होता है।

शनि के वाशी–योग कारक होने पर व्यक्ति व्यापार करने वाले के समान दूसरों के धन को चुराने वाला, गुरुजन से विरोध रखने वाला व तपस्विनी स्त्री का स्वामी होता है।

11.5.4 उभयचारी–योग :

तथोभयचरे जातो भूपो वा तत्समः सुखी।।
शुभग्रहभवे योगे फलमेवं विचिन्तयेत्।
पापग्रहसमुत्पन्ने योगे तु फलमन्यथा।।

उभयचारी–योग में जन्म लेने वाला व्यक्ति राजा या राजा के समान और सुखी होता है। ये सभी योग शुभ ग्रह से निर्मित होने पर शुभफल–कारी व अशुभ ग्रह से बनने पर अशुभफल–कारी होता है।

सर्वसहः सुभद्रः समकायः सुस्थिरो विपुलसात्त्वः।
नात्युच्चः परिपूर्णो विद्यायुक्तो भवेदुभयचर्याम्।।
सुभगो बहुभृत्यधनो बन्धूनामाश्रयो नृपतितुल्यः।
नित्योत्साही हृष्टो[?] भुङ्क्ते भोगानुभयचर्याम्।।

सारावली के अनुसार उभयचारी–योग में जन्म लेने वाला व्यक्ति समस्त कार्य के भार को सहन करने वाला, कल्याण कर्ता, समशरीर, अधिक बली, सामान्य ऊँचाई वाला, सभी वस्तुओं

एवं साधनों से सम्पन्न, विद्यायुक्त, ऐश्वर्य सम्पन्न, भृत्यादि से युक्त, धनवान्, बान्धवों की रक्षा करने वाला, उत्साही, प्रसन्नचित्त व सुख भोगने वाला होता है।

इन सभी सूर्य सम्बन्धी योग–कारक ग्रहों के बल तथा राशि के नवांश की शुभ –अशुभ स्थिति का विचार करने के बाद ही फल कथन ज्योतिषी को करना चाहिए।

11.6 सारांश :

व्यक्ति की जन्म पत्रिका में फलादेश कथन में सूर्य व चन्द्रमा दो प्रमुख केन्द्र बिन्दु हैं। चन्द्र–सूर्य बलवान् होने पर व्यक्ति के जीवन के सभी पक्षों पर अनुकूल प्रभाव होता है।

सूर्य चन्द्र का महत्व ज्ञात होने के कारण ही सूर्य व चन्द्र से अन्य ग्रहों के सम्बन्ध से विविध योगों का वर्णन मुनियों ने किया। सूर्य से बनने वाले वेशी, वाशी और उभयचारी, चन्द्र से बनने वाले सुनफा–अनफा दुरधरा व केमद्रुम सभी योगों का वर्णन इस इकाई में किया गया है। विशेष फलादेश कथन में इनका महत्वपूर्ण स्थान है।

11.7 शब्दावली :

उत्कृष्टवचः – उत्तम वचन बोलने वाला।

सहस्ररश्मि – हजार किरणों वाला।

ख्यात – प्रसिद्ध।

सुलाभ – उत्तम लाभ।

अभ्यास प्रश्न :

प्र.1 सुनफा योग को बनाने में किस ग्रह का योग नहीं होता।

(अ) बुध (ब) गुरु (स) शनि (द) सूर्य

प्र. 2 अनफा योग कारक ग्रह विशेष है।

(अ) चन्द्र (ब) राहु (स) केतु (द) सूर्य

प्र. 3 केमद्रुम–योग किस ग्रह के एकांगी होने के कारण बनता है।

(अ) गुरु (ब) बुध

(स) चन्द्र (द) राहु

प्र. 4 अनफा–योग बनाने में किस ग्रह को होना चाहिए।

(अ) चन्द्र (ब) मंगल

(स) बुध (द) शनि

लघूत्तर प्रश्न :

प्र. 5 सुनफा–योग कैसे बनता है।

प्र. 6 अनफा–योग की निर्माण विधि समझाइये।

प्र. 7 वेशी–योग क्या है।

प्र. 8 वाशी योग का फल समझाये।

11.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर :

1 (द) सूर्य

2 (द) सूर्य

3 (स) चन्द्रमा

4 (अ) चन्द्रमा

5 इकाई के सुनफा योग देखे।

6 इकाई में अनफा योग देखे।

7 इकाई के वेशी योग देखे।

8 इकाई के वाशी योग देखे।

11.9 सन्दर्भ ग्रन्थ :

1. फलदीपिका – गोपेश कुमार ओझा

मोती लाल बनारसी दास

2. सारावली – सोमेश्वर नाथ झा

भारतीय विद्या प्रकाशन

3. वृहत् पाराशर होरा शास्त्र – पं श्री पद्मनाभ शर्मा

चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

11.10 सहायक / उपयोगी सामग्री :

1. 300 महत्वपूर्ण योग – वी.बी. रमण

11.11 निबन्धात्मक प्रश्न :

प्र. 1 चन्द्र व सूर्य से बनने वाले योगों की उदाहरण सहित व्याख्या करे।

इकाई – 12 अरिष्ट–योग एवं अरिष्ट–भंग–योग

12.1 प्रस्तावना

12.2 उद्देश्य

12.3 अरिष्ट–योग का परिचय

12.4 अरिष्ट–भंग–योग का परिचय

12.4.1 चन्द्रमा की स्थिति से बनने वाले अरिष्ट–भंग–योग

12.4.2 बृहस्पति की स्थिति से अरिष्ट–भंग–योग

12.5 सारांश

12.6 अभ्यास प्रश्न के उत्तर

12.7 शब्दावली

12.8 संदर्भ ग्रंथ

12.9 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामिग्री

12.10 निबन्धात्मक प्रश्न

12.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत अध्ययन क्रम में आप बारह भावों से सम्बन्धी फलादेश सिद्धान्तों के साथ–साथ द्वादश भावों में सूर्यादि ग्रहों का काल व विविध महत्वपूर्ण योगों का अध्ययन किया। पिछले अध्याय में आपने सूर्य–चन्द्रमा से बनने वाले महत्वपूर्ण योगों का अध्ययन किया।

विविध योगों व भावों ग्रह व राशियों का ज्ञान के बाद आगामी अध्याय में आप विंशोंत्तरी दशा व अन्तर्दशा के फल का अध्ययन करेंगे। इस इकाई में आपको अरिष्ट योगों और उनके अशुभ प्रभाव को नष्ट करने वाले योग अर्थात् अरिष्ट–भंग–योग के बारे में विवरण पढ़ने को मिलेगा। इन योगों का अध्ययन बहुत सावधानी से किया जाना चाहिए क्योंकि किसी भी जातक के लिए आयु जैसे अति संवेदनशील मुद्दे पर नकारात्मक भविष्यवाणी घातक रूप से मानसिक आघात कर सकती है। इसलिए ऐसे योगों के अध्ययन के बाद पर्याप्त अनुभव और व्यावहारिक प्रतिफलन को जानने के उपरान्त ही किसी निष्कर्ष पर पहुंचना चाहिए।

12.2 उद्देश्य

- ज्योतिष में अरिष्ट–योग का परिचय प्राप्त कर पायेंगे।
- चन्द्रमा से बनने वाले योगों को पहचान सकेंगे।
- अरिष्ट–योग को निरस्त करने वाले योगों का वर्णन कर पायेंगे।
- अरिष्ट–योगों के शुभाशुभ प्रभाव की अवधि बता सकेंगे।

12.3 ज्योतिष में अरिष्ट–योग का परिचय

1. चन्द्रमा छठे, आठवें या बारहवें भाव में हो व पाप ग्रह उसे देखते हों या साथ हो तो बालक की मृत्यु शीघ्र होती है। चन्द्रमा पर शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो आठवें वर्ष में तथा शुभ –अशुभ दृष्टि मिश्रित हो तो चौथे वर्ष में बालक की मृत्यु होती है।
2. अष्टम भाव में मंगल व सूर्य हो, मंगल शनि हो, सूर्य शनि हो, सूर्य मंगल शनि हो तो ऐसा बालक एक वर्ष के भीतर मरता है।
3. कर्क, वृश्चिक या मीन लग्न में पूर्वार्द्ध में पापग्रह तथा उत्तरार्द्ध में शुभ ग्रह हों, केन्द्र में चन्द्रमा और पापग्रह हो, षष्ठ, अष्टम, द्वादश और द्वितीय भाव में पाप ग्रह हो, क्षीण चन्द्रमा द्वादश में हो साथ में लग्न सप्तम में पाप ग्रह हो तो केन्द्र में कोई भी शुभ योग न हो तो ऐसे बालक की एक वर्ष में मृत्यु हो जाती है।
4. चन्द्रमार लग्न, चतुर्थ, सप्तम, अष्टम में पाप ग्रहों के मध्य हो तो बालक की मृत्यु एक वर्ष के भीतर जाननी चाहिये।

5. लग्न, चतुर्थ, सप्तम और दशम भाव में पापग्रह हों तो जन्म से पूर्व पिता को अरिष्ट जानना चाहिये।
6. लग्न, चतुर्थ, षष्ठ, सप्तम और अष्टम में चन्द्रमा व पाप ग्रह हो तो माता एवं बालक दोनों को अरिष्ट जानना चाहिये।
7. मेष या वृश्चिक लग्न में मंगल, सूर्य शनि हो, चन्द्रमा लग्न को देखता हो तथा अष्टम में गुरु हो तो बालक को विशेष कष्ट होता है।
8. सूर्य से नवम स्थान में पापग्रह हो तो बालक के पिता को अरिष्ट जानना, चन्द्रमा से चतुर्थ स्थान में पापग्रह हो तो माता को, मंगल से तृतीय स्थान में पापग्रह हो तो भाईयों को, बुध से चतुर्थ स्थान में पापग्रह हो तो मामा को, गुरु से पंचम स्थान में पापग्रह हो तो पुत्र को, शुक्र से सप्तम स्थान में पापग्रह हो तो स्त्री को तथा शनि से अष्टम स्थान में पापग्रह हो तो उस जातक को अरिष्ट जानना चाहिये।
9. जिस जातक की कुण्डली में गुरु मंगल भाव परिवर्तन करे अर्थात् गुरु मंगल की राशि मेष, वृश्चिक में तथा मंगल गुरु की राशि धनु मीन में हो तो बारहवें वर्ष में अरिष्ट जानना चाहिये।
10. द्वितीय भाव में मंगल शनि हो तथा तृतीय भाव में राहु बैठा हो तो ऐसे जातक की एक वर्ष के अन्दर मृत्यु हो जाती है।
11. चतुर्थ भाव में बैठा राहु भी बालक की शीघ्र मृत्यु करवाता है।
12. सप्तम भाव में मंगल, अष्टम में शुक्र, नवम में सूर्य हो तो जातक की अल्पायु होती है।
13. लग्न, द्वितीय, अष्टम व द्वादश भाव में पापग्रह बैठे हों या उनकी दृष्टि हो तो जातक को आठवें या बारहवें वर्ष में किसी रोगवश बहुत कष्ट होता है।
14. सप्तम, द्वादश, दशम व तृतीय भाव में पापग्रह हो तो जातक को शारीरिक कष्ट होता है।
15. लग्न में मगल, द्वादश भाव में गुरु तथा षष्ठ भाव में शुक्र हो तो ऐसा जातक मात्र एक मास तक जीवित रहता है।
16. द्वादश स्थान में शनि लग्न में मंगल तथा चतुर्थ में बुध हो तो ऐसे बालक की मृत्यु आठ माह के अन्दर हो जाती है।
17. लग्न सप्तम द्वादश तथा द्वितीय भाव में पाप ग्रह हो साथ ही राहु चतुर्थ भाव में बैठा हो तो ऐसा जातक मात्र सात दिनों तक ही जीवित रहता है।
18. गुरु अपनी शुभ राशि में हो तथा शनि अन्य पाप ग्रहों के साथ अष्टम भाव में हो तो ऐसे जातक की मृत्यु शीघ्र होती है।
19. चतुर्थ या नवम भाव में सूर्य, अष्टम भाव में गुरु तथा द्वादश भाव में चन्द्रमा हो तो ऐसा बालक ज्यादा दिन जीवित नहीं रहता है।

20. केन्द्र स्थानों में चन्द्रमा, सूर्य और शुक्र हो तथा चन्द्रमा शनि के साथ हो तो दो वर्ष के अन्दर ऐसे जातक की मृत्यु हो जाती है।
21. वक्री गुरु शनि के घर में, बुध सूर्य सप्तम भाव में तथा शनि एकादश भाव में बैठा हो तो जातक की मृत्यु शीघ्र हो जाती है।
22. सूर्य शुक्र सिंह, मकर, कुम्भ राशि में हो तथा शुक्र पर गुरु की दृष्टि हो तो जातक नौ वर्ष की अवस्था तक जीवित रहता है।
23. सूर्य चन्द्रमा मिथुन या कन्या राशि में हो तथा किसी भी शुभ ग्रह की दृष्टि चन्द्रमा पर न पड़ रही हो तो जातक की मृत्यु नौ वर्ष के भीतर हो जाती है।
24. बुध सूर्य व चन्द्रमा एक साथ हो तो ऐसे जातक की आयु मात्र ग्यारह वर्ष होती है।
25. अष्टम भाव में राहु हो तथा उस पर सूर्य शनि की दृष्टि हो तो जातक आठवें वर्ष में तथा यदि राहु पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो जातक ग्यारहवें वर्ष में मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।
26. द्वितीय भाव में राहु, बुध, शुक्र, शनि तथा सूर्य हो तो जातक के गर्भस्थ रहते ही उसके पिता की तथा जन्म के बाद शीघ्र ही स्वयं की मृत्यु हो जाती है।
27. गुरु लग्न या पंचम स्थान में तथा द्वादश भाव में शनि, राहु व बुध हो तो ऐसा बालक जन्म लेते ही मर जाता है।
28. लग्न से चतुर्थ भाव में राहु, शनि व सूर्य हो तथा छठे भाव में चन्द्रमा बुध मंगल व शुक्र हो तो ऐसा जातक घर का सर्वनाश कर डालता है।
29. वक्री शनि केन्द्र, षष्ठ, अष्टम भाव में हो या मंगल की राशि में हो तथा बली मंगल की दृष्टि शनि के ऊपर हो तो ऐसा बालक दो वर्ष की आयु में मर जाता है।
30. चन्द्रमा शनि राहु व मंगल के साथ सप्तम भाव में हो तो ऐसे बालक की मृत्यु सात दिन या सात माह में अवश्य हो जाती है।
31. लग्न में सूर्य और पंचम स्थान में चन्द्रमा हो तथा अष्टम भाव भी पाप ग्रहों से पीड़ित हो तो वह जातक अल्पायु होता है।
32. लग्नेश पापग्रह के साथ हो या दो पाप ग्रहों के मध्य में लग्न हो तथा सप्तम स्थान पर भी पाप ग्रह हो तो जातक किसी अवसर पर आत्महत्या करता है।
33. बृहस्पति क्रूर राशि में हो तथा लग्नेश अस्त हो तो ऐसे जातक की आयु मात्र चार वर्ष ही होनी चाहिये।
34. शनि तथा सूर्य आपस में एक दूसरे से राशि परिवर्तन करें तो ऐसा बालक मात्र बारह वर्ष की आयु तक जीवित रहता है।
35. बुध मंगल लग्न में या षष्ठ भाव में हो तो चोरी से ही ऐसा जातक अपनी गुजर बसर करता है इसी कर्म में उसके हाथ पांव भी कट सकते हैं।

36. लग्न से षष्ठ या अष्टम भाव में पाप ग्रह के साथ बुध हो तो ऐसा बालक भी चार वर्ष से अधिक जीवित नहीं रहता।
37. अष्टम भाव में राहु तथा चन्द्रमा केन्द्र स्थान में हो तो जातक की मृत्यु अल्पायु में हो जाती है।
38. चतुर्थ भाव में राहु तथा षष्ठ या अष्टम भाव में चन्द्रमा हो तो ऐसे बालक की बीस दिन में मृत्यु हो जाती है।
39. चन्द्रमा द्वादश भाव में हो तथा अष्टम भाव में कोई भी पाप ग्रह हो तो ऐसे बालक की एक माह में मृत्यु हो जायेगी।
40. लग्न में राहु तथा षष्ठ भाव में चन्द्रमा हो तो ऐसे जातक को अपस्मार रोग हो जाता है तथा अन्त में इसी रोग से उसकी मृत्यु हो जाती है।
41. बुध व चन्द्रमा षष्ठ या अष्टम भाव में हो तो ऐसे जातक की मृत्यु विषपान के कारण होती है।
42. राहु लग्न या अष्टम भाव में हो तथा उस पर चन्द्रमा की दृष्टि हो तो जातक दस दिनों के भीतर मर जाता है।
43. सूर्य नवम स्थान में, शनि अष्टम स्थान में तथा शुक्र ग्यारहवें भाव में हो तो जातक की आयु मात्र एक माह होती है।
44. नवम या दशम भाव में चन्द्रमा, सप्तम भाव में शुक्र तथा चतुर्थ भाव में कोई भी पाप ग्रह हो तो ऐसा जातक अपने वंश को समूल नष्ट करने वाला होता है।
45. सूर्य, द्वितीय, षष्ठ या अष्टम भाव में शत्रु राशि का होकर बैठा हो तो ऐसे जातक की आयु मात्र 6 वर्ष होती है।
46. बुध शत्रु राशि का होकर षष्ठ या अष्टम भाव में बैठा हो तो जातक की आयु मात्र चार वर्ष होती है।
47. बृहस्पति मित्र क्षेत्री होकर तृतीय, पंचम, नवम या एकादश भाव में हो तो ऐसे जातक की आयु 58 वर्ष होती है।
48. बृहस्पति शत्रु राशि का होकर पंचम या नवम भाव में बैठा हो तो ऐसे जातक की आयु मात्र 36 वर्ष होती है।
49. बृहस्पति दशम या एकादश भाव में मित्र राशि का व शुक्र द्वितीय या द्वादश भाव में शत्रु राशि का होकर बैठा हो तो जातक इक्कीस वर्ष की आयु तक जीवित रहता है।
50. शनि शत्रु राशि का होकर षष्ठ, अष्टम, द्वितीय या द्वादश भाव में हो तो जातक आठ दिन या आठ माह या आठ वर्ष की अवस्था में मर जाता है।

51. बुध कर्क राशि में हो तो ऐसे जातक को क्षयरोग व कुष्ठ जैसे असाध्य रोगों से बहुत पीडा मिलती है।
52. राहु केन्द्र स्थान में हो तथा उस पर पापग्रह की दृष्टि भी हो तो ऐसे जातक की मृत्यु दसवें वर्ष या सोलहवें वर्ष में होती है।
53. सप्तम भाव में शनि, राहु, मंगल व चन्द्रमा हो तो ऐसा बालक सात दिन या सातवें माह में मर जाता है।
54. बृहस्पति मेष या वृश्चिक राशि में हो तथा षष्ठ या अष्टम भाव में चद्रमा हो तो जातक की मृत्यु छठी, या आठवीं वर्ष में हो जाती है।
55. शनि लग्न या सप्तम भाव में हो तथा चन्द्रमा अष्टम भाव में हो तो ऐसे बालक की शीघ्र मृत्यु हो जाती है।
56. बृहस्पति शुक्र तथा राहु द्वादश भाव में हो तथा शनि सप्तम भाव में हो तो ऐसे जातक की आयु मात्र एक वर्ष की होती है।
57. लग्न से सातवें स्थान के मध्य जन्मकालिक राहु आ जाये तो ऐसे जातक को दसवें वर्ष में मृत्युतुल्य कष्ट प्राप्त होता है।
58. अष्टम भाव में बैठे राहु पर चन्द्रमा की दृष्टि हो तो ऐसे बालक की शीघ्र मृत्यु हो जाती है।
59. मंगल अपनी उच्च या शत्रु राशि का होकर दशम भाव में हो तो वह जातक अपनी माता के साथ शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।
60. सूर्य लग्न में, चन्द्रमा पंचम भाव में तथा अष्टम नवम भाव में पाप ग्रहा हो तो ऐसा जातक अधिक दिन जीवित नहीं रहता है।
61. लग्न में सूर्य, सप्तम भाव में चन्द्रमा तथा अष्टम माव में पाप ग्रह हो तो जातक की एक माह में ही मृत्यु हो जाती है।
62. मंगल लग्न में, सूर्य अष्टम में तथा शनि चतुर्थ भाव में हो तो जातक को कुष्ठ रोग से बहुत पीडा उठानी पडती है।
63. कोई भी पापग्रह नवम स्थान में हो, चतुर्थ भाव में भी पापग्रह तथा दशम भाव में राहु हो तो ऐसा जातक उन ग्रहों की दशा–अन्तर्दशा में धर्मान्तरण करता है।
64. सिंह लग्न में शनि हो तो ऐसा जातक जन्म लेने के कुछ दिन बाद अन्धा हो जाता है। शुक्र शनि के स्थान पर हो तो ऐसे जातक की गर्भावस्था में ही आंखें नष्ट हो जाती हैं।
65. मीन लग्न में सूर्य हो तो जातक की दाहिनी आंख नष्ट होती है यदि लग्न में चन्द्रमा हो तो जातक की बायीं आंख नष्ट होती है।
66. सूर्य किसी पापग्रह के साथ बैठा हो, कन्या राशि में भी पाप ग्रह हो तथा राहु भी किसी पाप स्थान में बैठा हो तो ऐसा बालक बड़ी कठिनाई से जीवित बच जाता है।

67. शुक्र, बृहस्पति और बुध में से कोई भी ग्रह अपनी नीच राशि में राहु के साथ बैठा हो और चन्द्रमा की दृष्टि भी न हो तो जातक की शीघ्र ही मृत्यु हो जाती है।
68. षष्ठ या अष्टम भाव में चन्द्रमा तथा द्वादश भाव में सूर्य एवं मंगल हो तो ऐसे बालक की शीघ्र ही मृत्यु हो जाती है।
69. केतु षष्ठ अथवा अष्टम भाव में तथा चन्द्रमा केन्द्र स्थान में हो तो ऐसा बालक भी अल्पायु होता है।
70. चन्द्रमा, सूर्य, बुध तथा शनि बारहवें स्थान में हो तथा मंगल दशम भाव में हो तो जातक मन्द दृष्टि वाला होता है।
71. सूर्य, शनि मंगल नीच राशि के होकर राहु केतु के साथ हो तो ऐसा जातक मातृहन्ता होता है।
72. लग्न या पंचम भाव में सूर्य बृहस्पति राहु शनि तथा मंगल एक साथ बैठे हों तो ऐसा जातक जन्म लेने के तुरन्त बाद मर जाता है।
73. मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु व कुम्भ लग्न हो तथा लग्नेश भी पाप ग्रह की राशि में हो तो जातक आत्महत्या करता है तथा बहुत पीडा प्राप्त कर अन्त में मरता है।
74. लग्न में कोई भी पाप ग्रह हो तथा उस पर लग्नेश या सूर्य की दृष्टि न हो तो ऐसा जातक पराये पुरूष से उत्पन्न कहा जाता है।
75. षष्ठ भाव में मंगल, सप्तम में राहु तथा अष्टम भाव में शनि हो तो जातक के भाई जीवित नहीं रहते अर्थात् वह अकेला होगा।
76. सप्तम भाव में मंगल, अष्टम में शुक्र व नवम में सूर्य हो तो जातक की आयु कम होती है।
77. चन्द्रमा से सप्तम भाव में मंगल हो तो ऐसे बालक की जन्म लेने के दसवें दिन मृत्यु हो जाती है।
78. अष्टम भाव में शनि की राशि में बृहस्पति बैठा हो तथा उस पर पापग्रह की दृष्टि हो तो ऐसे बालक की जन्म लेने के ग्यारहवें दिन मृत्यु हो जाती है। अरिष्ट योगों का भंग सावधानी से देखकर विचार करना चाहिए। अरिष्ट कहने से पूर्व सभी आयुष्य बिन्दु विचारित कर लेने चाहिए।

12.4 अरिष्ट–भंग–योग का परिचय

12.4.1 चंद्रमा की स्थिति से बनने वाले अरिष्ट भंग योग–

- जन्म समय चन्द्रमा पूर्ण विम्ब और सभी ग्रहों की दृष्टि में हो तो अरिष्ट योग को भंग करता है। पूर्ण बिम्ब से युत चन्द्रमा नवांश में मित्र राशि में शुक्र ग्रह की दृष्टि में हो तो जातक का अरिष्ट नहीं होने देता।

- जातक के जन्म सयम चन्द्रमा वृष राशि में 3ह[?] पर अपनी परमोच्च स्थिति में हो तो अरिष्ट नहीं होने देता है।
- क्षीण चन्द्रमा यदि शुभ ग्रहों के वर्ग में तथा शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो अरिष्ट का नाश करता है।
- 6, 7, 8 भाव में चन्द्रमा शुभ ग्रह के प्रभाव में हो तो भी रिष्ट नहीं होने देता।
- चन्द्रमा शुभ ग्रह से युत हो तथा द्रष्कोण कुण्डली में शुभ स्थिति में हो तो भ अरिष्ट योग को भंग करता है।
- जन्म कुण्डली में पूर्ण चन्द्रमा यदि शुभ ग्रह के द्वादशांश में हो तो भी अरिष्ट का नाश करता है।
- चन्द्रमा शुभ ग्रह की राशि में लग्नेश से दृष्ट हो तो और अन्य ग्रहों की दृष्टि चन्द्रमा पर नहीं हो तो अरिष्ट योग का नाश करता है।
- चंद्रमा पाप ग्रह की राशि या पाप ग्रह के वर्ग में हो तो तथा अपने राशि स्वामी से दृष्ट भी हो तो अरिष्ट नहीं होने देता।
- चंद्रमा की राशि का स्वामी बलवान और शुभ मित्रा ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक का अरिष्ट नहीं होने देता।
- चंद्र राशि का स्वामी लग्न में सभी ग्रहों से दृष्ट हो तो अरिष्ट योग भंग करता है।
- पूर्ण चन्द्रमा यदि कर्क राशि या वृष राशि में हो या मित्र के षडवर्ग या शुभ ग्रह के वर्ग में हो तथा शुभ ग्रह से दृष्ट हो पाप ग्रह से प्रभाव में दृष्टि या युति से बचा हुआ हो तो अरिष्ट का नाश करता है।
- चन्द्रमा से 12वें भाव में बुध या शुक्र ग्रह हो 11 वें भाव में पापग्रह हों एवं दशम भाव में गुरू हो तो अरिष्ट भंग करते हैं।
- चन्द्र यदि 3, 4, 6, 10, 11 भावों में शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो सब अरिष्टों से जातक की रक्षा करता है।
- शुक्ल पक्ष में रात्रि में जन्म होने पर तथा कृष्ण पक्ष में दिन में जन्म होने पर 6, 8 भाव में बैठा चन्द्रमा शुभ ग्रहों से दृष्ट होने पर विपत्ति में यत्न से रक्षा करता है।

12.4.2 बृहस्पति से अरिष्ट भंग योग

- जन्म कुण्डली में बलवान गुरू अकेला लग्न में बैठकर कुण्डली के समस्त अरिष्टों का नाश करता है।
- जन्म कुण्डली में समस्त शुभ ग्रह पूर्ण वलवान हों तथा अब पाप ग्रह निर्बल स्थिति में हो। लग्न में शुभ राशि और शुभ ग्रह स्थिति हों तथा शुभ ग्रह की दृष्टि लग्न में हो तो जातक का कुछ भी अरिष्ट नहीं होता है।
- जन्म कुण्डली में सभी पाप ग्रह शुभ ग्रहों के षडवर्ग में हो शुभ ग्रह के नवमांशों के वर्गों में स्थित शुभग्रहों ये दृष्ट हो तो अरिष्ट का नाश करते हैं।
- जन्म कुण्डली में 3, 6, 11 भाव में राहु शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो अब अरिष्टों का नाश कर देता है।
- जन्म कुण्डली में सभी ग्रह शीर्षोदय राशि (सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुंभ, मिथुन) राशि में मार्गी स्थिति में हो तो अरिष्ट भंग करते हैं।
- जन्म समय कोई शुभ ग्रह युद्ध में विजयी हो एवं शुभ ग्रह से दृष्ट वर्ग में होने से अभी अरिष्ट नष्ट हो जाते हैं।
- अरिष्ट कारक ग्रह किसी ग्रह के साथ है तथा पापग्रह से दृष्ट होने पर अरिष्ट भंग हो जाता है।
- अरिष्ट कारक ग्रह के अतिरिक्त अन्य भी ग्रह अपने–अपने दृष्कोण में हो तो ब्रह्ममाजी द्वारा लिखा हुआ अरिष्ट भी नष्ट हो जाता है।
- जन्म समय अधिकांश ग्रह शुभ फलदायक हो तो अरिष्ट को नष्ट कर देते हैं।
- जन्म कुण्डली में ब्रहस्पति और शुक्र केन्द्र में होने पर कुण्डली में ग्रह जनित और चन्द्र अरिष्ट योग भंग हो जाते हैं और जातक दीर्घायु होता है।
- जन्म समय यदि पूर्ण चन्द्र के साथ ब्रहस्पति कर्क राशि में लग्न, चतुर्थ और दशम भाव में हो शनि और बुध ग्रह तुला राशि में हो तथा अन्य ग्रह तृतीय षष्ठ और एकादश भाव में होने से जातक निश्चय ही दीर्घायु होता है अर्थात उसकी कुण्डली में बनने वाले सभी अरिष्ट योग भंग हो जाते हैं।

12.5 सारांश

जन्मकुंडली में किस विशिष्ट ग्रह स्थिति द्वारा अरिष्ट योगों का निर्माण होता है तथा ये जातक को क्या फल देते हैं इसका पूर्ण अध्ययन आपने इस इकाई में किया। ऐसे अरिष्ट योग को भंग करने वाले अरिष्ट भंग योगों के सम्बन्ध में भी आपने विस्तृत रुप से अध्ययन किया। इस इकाई

के अध्ययन से आप जातक की जन्मकुंडली में अरिष्ट योग व अरिष्ट भंग योगों के बारे में अधिकारपूर्वक चर्चा करने में सक्षम होगें।

12.6 शब्दावली

मातृहन्ता	–	माँ को कष्ट प्रदान करने वाला।
विषपान	–	जहर का सेवन।
मित्रक्षेत्री	–	मित्र राशि में स्थित ग्रह।
शत्रुक्षेत्री	–	शत्रु राशि में स्थित ग्रह।
स्वराशि	–	अपनी राशि में स्थित ग्रह।

अभ्यास प्रश्न

प्रश्न 1– अष्टम भाव में मंगल व सूर्य, मंगल व शनि, सूर्य व शनि अथवा सूर्य, मंगल, शनि हो तो ऐसे बालक की मृत्यु कितने वर्ष में होती है ?

प्रश्न 2– लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम में यदि पाप ग्रह हो तो जातक के जन्म से पूर्व किसको अरिष्ट होता है?

प्रश्न 3– चतुर्थ भाव में राहु तथा षष्ठ या अष्टम भाव में चन्द्रमा हो तो ऐसे बालक की मृत्यु कितने दिनों में होती है ?

प्रश्न 4– कुंडली में कैसी ग्रह स्थिति के कारण जातक की मृत्यु विष्पान के कारण होती है ?

प्रश्न 5– बुध शत्रु राशि का होकर षष्ठ या अष्टम भाव में बैठा हो तो बालक की आयु कितने वर्ष होती है ?

प्रश्न 6– जातक किन ग्रहों की दशा अन्तर्दशा में धर्मान्तरण करता है ?

प्रश्न 7– किस ग्रह स्थिति में जन्मा बालक मातृहन्ता कहलाता है ?

प्रश्न 8– किन विशेष ग्रह स्थितियों के कारण जातक आत्महत्या करता है ?

प्रश्न 9– चंद्रमा की स्थिति से बनने वाले किसी दो अरिष्ट भंग योग को बताइये।

प्रश्न 10– बृहस्पति से बनने वाले किसी एक अरिष्ट भंग योग का वर्णन कीजिए।

प्रश्न 11 राहु किस स्थिति में अरिष्ट योग भंग करता है ?

प्रश्न 12– सभी ग्रह किन राशियों में मार्गी होने से अरिष्ट योग को भंग करते हैं ?

12.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्तर 1– एक वर्ष में।

उत्तर 2– पिता को।

उत्तर 3– बीस दिनों में।

उत्तर 4– बुध व चन्द्रमा षष्ठ या अष्टम भाव में हो।

उत्तर 5– चार वर्ष।

उत्तर 6– दशम भाव में बैठे राहु तथा चतुर्थ, नवम भाव में स्थित पाप ग्रहों की दशा अन्तर्दशा में।

उत्तर 7– सूर्य, शनि, मंगल नीच राशि के होकर राहु केतु के साथ हो।

उत्तर 8– मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु व कुम्भ लग्न हो तथा लग्नेश भी पाप ग्रह की राशि में हो।

उत्तर 9– जन्म समय चन्द्रमा पूर्ण बिम्ब और सभी ग्रहों की दृष्टि में हो तो अरिष्ट योग को भंग करता है।

6, 7, 8 भाव में चन्द्रमा शुभ ग्रह के प्रभाव में हो तो भी जातक का अरिष्ट नहीं होने देता।

उत्तर 10–जन्मकुंडली में बलवान गुरु अकेला लग्न में बैठकर कुण्डली के समस्त अरिष्टों का नाश करता है।

उत्तर 11–जन्मकुंडली में 3, 6, 11 भाव में राहु शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो सब अरिष्टों का नाश कर देता है।

उत्तर 12–सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुंभ, मिथुन।

12.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

बृहत्पाराशर होराशास्त्रम्

मानसागरी

फलदीपिका

जातक पारिजात

12.9 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री

अरिष्ट योगों का विचार करते समय कुण्डली में आयु योगों का अध्ययन करना चाहिए। भारतीय ज्योतिष में विद्वानों ने आयु निर्धारण की विभिन्न विधियां बतलाई हैं। महर्षि जैमिनी की आयु निर्धारण पद्धति सर्वोत्तम है।

आयु निर्धारण चक्र

दीर्घायु	मध्यायु	अल्पायु
एक चर राशि में	एक द्विस्वभाव राशि में	एक स्थिर राशि में
दूसरा चर राशि में	दूसरा द्विस्वभाव राशि में	दूसरा स्थिर राशि में
एक स्थिर राशि में	एक चर राशि में	एक चर राशि में
दूसरा द्विस्वभाव राशि में	दूसरा स्थिर राशि में	एक द्विस्वभाव राशि में

लग्नेश और अष्टमेश की स्थिति का विचार करके आयु के बारे में जाना जा सकता है। इसके लिए राशियों की चर, स्थिर और द्विस्वभाव प्रकृति की जानकारी होना आवश्यक है।

चर राशियां – मेष, कर्क, तुला, मकर

स्थिर राशियां – वृष, सिंह, वृश्चिक, कुंभ

द्विस्वभाव राशियां – मिथुन, कन्या, धनु, मीन

12.10 निबन्धात्मक प्रश्न

अरिष्ट भंग योगों की विवेचना कीजिए।

इकाई – 13 विंशोत्तरी महादशा–अन्तर्दशा–नाथ का विवेचन

13.1 प्रस्तावना

13.2 उद्देश्य

13.3 विंशोत्तरी महादशा–अन्तर्दशा–नाथ का विवेचन

13.3.1 सूर्य की महादशा में सूर्यादि नवग्रहों की अन्तर्दशायें।

13.3.2 चन्द्रमा की महादशा में सूर्यादि नवग्रहों की अन्तर्दशायें।

13.3.3 मंगल की महादशा में सूर्यादि नवग्रहों की अन्तर्दशायें।

13.3.4 राहु की महादशा में सूर्यादि नवग्रहों की अन्तर्दशायें।

13.3.5 गुरु की महादशा में सूर्यादि नवग्रहों की अन्तर्दशायें।

13.3.6 शनि की महादशा में सूर्यादि नवग्रहों की अन्तर्दशायें।

13.3.7 बुध की महादशा में सूर्यादि नवग्रहों की अन्तर्दशायें।

13.3.8 केतु की महादशा में सूर्यादि नवग्रहों की अन्तर्दशायें।

13.3.9 शुक्र की महादशा में सूर्यादि नवग्रहों की अन्तर्दशायें।

13.4 सारांश

13.5 शब्दावली

13.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

13.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

13.8 सहायक/उपयोगी ग्रन्थ

13.9 निबन्धात्मक प्रश्न

13.1 प्रस्तावना

कुण्डली का निर्माण हो जाये परंतु उसका फलादेश न हो सके तो कुण्डली का निर्माण व्यर्थ है। कुण्डली का फलादेश करने के लिए कुण्डली में ग्रहों के आधार पर तो फलादेश किया ही जाता है। परंतु कब कौन सा समय कैसा रहेगा, उराकी जानकारी महादशा और अंतर्दशा पर निर्भर करती है। वैसे तो ज्योतिष में कई प्रकार की दशाओं का प्रचलन है परंतु विंशोत्तरी महादशा व अन्तर्दशा का विवेचन विस्तार पूर्वक किया गया है।

विंशोत्तरी दशाएं कुल 120 वर्ष की होती हैं जिसमें नौ ग्रहों की महादशाएं होती हैं और प्रत्येक महादशा में 9 प्रकार की अन्तर्दशाएं होती हैं इस प्रकार कुल 9X9 = 81 अन्तर्दशाएं होती हैं। इन 81 अन्तर्दशाओं का फल विवेचन इस इकाई के अन्तर्गत किया गया है।

वैसे तो प्रत्येक ग्रह का अपना स्वभाव होता है जब ग्रह की दशा चलती है तो उस ग्रह का नैसर्गिक फल तो जातक को मिलता ही है परंतु किस ग्रह की कौन सी अन्तर्दशा चल रही है, इसका फल उनके आपसी संबंध व स्वभाव पर निर्भर करता है।

इस इकाई के माध्यम से ज्योतिष के विद्यार्थियों को इस संबंध में जानकारी देने का प्रयास किया गया है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थियों को फलादेश करने में सुविधा होगी कि किसी महादशा में किसी अन्तर्दशा का फल किस प्रकार कहना चाहिए।

13.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य यह है कि विद्यार्थी जन्म कुण्डली निर्माण के पश्चात् जन्म कुण्डली का अध्ययन, विश्लेषण व फलादेश सुचारु रूप से करने में सक्षम हो सकें। क्योंकि जन्म कुण्डली के निर्माण का उद्देश्य तब तक अधूरा जब तक कि उसका फलादेश न किया जाये।

वैसे तो फलादेश करने के लिए भिन्न–भिन्न प्रकार की लगभग दस प्रकार की दशाएं ज्योतिष में उपलब्ध हैं। परंतु विंशोत्तरी दशा एक ऐसी दशा है जो ज्योतिष में सर्वमान्य, सर्वाधिक प्रचलित एवं सटीक है।

विंशोत्तरी दशा का महादशा में अंतर्दशा विवेचन के साथ–साथ इस इकाई में उनकी अवधि भी बतायी गयी है। जिसके द्वारा विद्यार्थी इस बात को भी समझ सकेंगे कि अमुक दशा का अमुक फल जातक को कब तक भोगना है। इसके अतिरिक्त यह जानकारी विद्यार्थियों को गणना में भी सहायक सिद्ध होगी।

उपर्युक्त विचारों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत इकाई का निर्माण किया गया है। आशा है यह इकाई विद्यार्थियों के लिए अध्ययन में विशेष रूप से सहायक सिद्ध होगी।

निष्कर्षतः इस इकाई के निम्न उद्देश्य हैं–

1. जन्म कुण्डली का विश्लेषण का ज्ञान हो सकेगा।
2. विंशोत्तरी दशा की अंतर्दशा की अवधि का ज्ञान हो सकेगा।
3. विंशोत्तरी दशा की महादशा की अवधि का ज्ञान हो सकेगा।
4. महादशाओं के क्रम का ज्ञान हो सकेगा।
5. महादशा में अंतर्दशाओं के क्रम का ज्ञान हो सकेगा।
6. विंशोत्तरी दशा के पूर्ण चक्र में दशाओं के क्रम का ज्ञान हो सकेगा।
7. नवग्रहों की महादशाओं का फल का ज्ञान हो सकेगा।
8. नवग्रहों की महादशा में नवग्रहों की अन्तर्दशा के फल का ज्ञान हो सकेगा।

13.3 विंशोत्तरी महादशा–अन्तर्दशा नाथ का विवेचन

सूर्य

सूर्य की महादशा में विदेश यात्रा, विदेश वास, भूमि, राजद्वार, ब्राह्मण, अग्नि, शस्त्र तथा औषधि से धन हानि या प्राप्ति होती है। जातक की रुचि यन्त्र, मन्त्र में बढ़ती है। राज पुरुषों राजनीतिज्ञों अधिकारियों से मित्रता बढ़ती है। भाई–बन्धुओं से शत्रुता, स्त्री, पुत्र या पिता से वियोग या चिन्ता, व्यथा, नेत्र, दाँत तथा उदर में विकार पीड़ा, गो धन, पशु धन एवं नौकरी में हानि होती है।

स्वः काटवे के अनुसार सूर्य की महादशा मूलतः अशुभ होती है। किन्तु लग्न, पंचम, दशम तथा व्यय भाव में स्थित रवि की दशा उत्तम होती है। अन्य स्थानों में अशुभ होती है। सूर्य की महादशा में शनि, मंगल तथा चंद्र की अन्तर्दशाएं अशुभ होती हैं। अग्नि तत्व राशियों में सूर्य का फल अत्यन्त अशुभ रहता है। मेष में अत्यन्त बुरा, सिंह में मध्यम व धनु में तुलनात्मक शुभ फल रहता है। वृष, कन्या और मकर (पृथ्वी तत्व) राशियों में स्थित सूर्य का फल मामूली मिलता है।

वायुतत्व राशियों (मिथुन, तुला एवं कुम्भ) में सूर्य का फल तुलनात्मक अच्छा फल मिलता है। जल तत्व राशियों (कर्क, वृश्चिक एवं मीन) में मामूली फल प्राप्त होते हैं। हमें सूर्य के उच्च, नीच, स्वगृही, शत्रुगृही, मित्रगृही, वर्गों में स्थिति, युति, दृष्टि आदि का ध्यान रखकर सूर्य के बल का अनुमान लगा कर फल कहना चाहिए।

13.3.1 सूर्य की महादशा में सूर्यादि नवग्रहों की अन्तर्दशायें

सूर्य / सूर्य (अवधि 0 वर्ष 3 मास 18 दिन)

राज सम्मान मिले। धन की प्राप्ति हो। वन पर्वतों पर वास हो। पित्त व ज्वर से पीड़ा, पिता का वियोग भी होना संभव है। सूर्य राजा प्रशासन व सरकार के साथ पिता का भी कारक है। सूर्य शुभ होने पर (केन्द्र / त्रिकोण,उच्च, स्वक्षेत्री, मूलत्रिकोण, मित्र के साथ) शुभ फल देगा। सूर्य दुर्बल या दुःस्थान (षष्ठ, अष्ट, द्वादश भाव) में होने पर अनिष्ट फल देगा।

सूर्य / चंद्र (अवधि 6 मास)

शत्रु पर विजय मिले। कष्ट व परेशानियाँ मिट जाए। धन मिले। कृषि (बागवानी से लाभ। सुन्दर घर प्राप्त हो। मित्रों से समागम हो। यदि चंद्रमा पापी हो तो धन हानि, मानसिक क्लेश व जल तथा अग्नि से भय हो सकता है।

सूर्य / मंगल (अवधि 4 मास 6 दिन)

रोग, पदच्युति (अवनति), शत्रु से भय व पीड़ा हो। अपने कुल के लोगों से वैर, विरोध तथा राजा से भय होता है। कभी चोट लगती है व धन हानि भी होती है। ध्यान रहे सूर्य व मंगल दोनों ही क्रूर ग्रह होने से कष्टकारी हो जाते हैं किन्तु यदि सूर्य व मंगल परस्पर (केन्द्र त्रिकोण) इष्ट राशि में हों तो निश्चय ही शुभ फल प्राप्त होगा–सर्वत्र विजय, सफलता व प्रतिष्ठा मिलेगी।

सूर्य / राहु (अवधि 10 मास 24 दिन)

शत्रु सिर उठाएं, वैर विरोध बढ़े, घर में चोरी या धन की हानि हो। आपत्तियाँ / मुसीबत आये। नेत्र व सिर में पीड़ा। सांसारिक भोगों के प्रति आकर्षण व आसक्ति बढ़ेगी। सूर्य सतोगुणी ग्रह है, किंतु राहु म्लेच्छ होने के साथ सूर्य का प्रबल शत्रु व महान् पापी है। जैसे राजपाट छिन जाने पर पापी शत्रु के चंगुल में फंसे एक राजा की दुर्दशा होती है कुछ वैसी ही परिस्थितियों की कल्पना विज्ञ जन कर लें।

सूर्य / गुरु (अवधि 9 मास 18 दिन)

शत्रुओं का नाश हो, शत्रु दुम दबाकर भागे। बहुविध लाभ व धन की प्राप्ति होगी। देवता व ब्राह्मण की सेवा, सहायता से सुख समृद्धि मिले। गुरु व बन्धुओं से स्नेह, सत्कार मिले। गुरु पापी होने पर कान में पीड़ा अथवा कर्ण रोग तथा तपेदिक, दमा दे सकता है। गुरु श्रवण सुख है।

सूर्य / शनि (अवधि 11 मास 12 दिन)

स्त्री को रोग, पुत्र वियोग, किसी गुरुजन (गुरु, पिता, चाचा, ताऊ) की मृत्यु हो सकती है। बहुत अधिक व्यय व धन की हानि होती है। शनि यों तो सूर्य का पुत्र हैं किंतु अपने पिता (सूर्य) का प्रबल शत्रु व विरोधी है। सूर्य राजा है तो शनि सेवक / दास है। वह सतोगुणी है तो शनि तमोगुणी

व गंदगी पसंद है। जातक इस अवधि में मैला कुचैला व गंदी बस्ती में रहना पसंद करता है। कभी वात पित्त जनित रोग व पीड़ा भी होती है।

सूर्य / बुध (अवधि 10 मास 6 दिन)

बुध एक सौम्य ग्रह है, किंतु सूर्य क्रूर है। अतः इस अवधि में चर्म रोग फोड़े, फुंसी, कुष्ठ पीलिया की संभावना बढ़ती है। पेट व कमर में पीड़ा होती है। वात–पित्त–कफ जन्य रोग व पीड़ा हो सकती है।

सूर्य / केतु (अवधि 4 मास 6 दिन)

मित्र से वियोग / बिछुड़ना हो। अपने सहयोगी व कुटुंबी जन से मतभेद जन्म क्लेश हो। शत्रु से भय व धन नाश की संभावना बढ़े। सिर व पैर में दर्द, या गुरु जन को रोग व पीड़ा हो। राहु सरीखा केतु भी पापी व सूर्य का प्रबल शत्रु है– इस कारण अशुभ फल अधिक मिलते हैं।

सूर्य / शुक्र (अवधि 1 वर्ष)

सिर में पीड़ा, पेट में रोग, या बवासीर से कष्ट हो। कृषि कार्य, भूमि, भवन, अन्न संतान सुख में कमी का अनुभव करे। स्त्री व संतान को रोग होना संभव है। शुक्र दैत्य, गुरु, रजोगुणी, भोग प्रदायक होने के साथ सूर्य का शत्रु भी है। शत्रु की अन्तर्दशा में धन नाश व स्वजन कष्ट सामान्य बात है।

चंद्रमा

चंद्र की महादशा में जातक को युवती स्त्रियां, धन, भूमि पुष्प गन्ध वस्त्र एवं आभूषणों की प्राप्ति होती है। जातक को मंत्र वेद तथा ब्राह्मणों में रुचि होती है। राजपक्ष से लाभ, सम्मान व पद प्राप्त होता है। जातक इधर–उधर भ्रमण में प्रेम करता है। विद्युत व चुम्बकीय प्रवाह, माता का दूध, रेवले अधिकारी, जहाजों के कारखाने, दवाई की दुकान, पेटेंट दवाइयां, किराना की

दुकाने, दूध की डेयरी, विमान, चावल, कपास, सफेद वस्त्र आदि में जातक रुचि लेता है। स्व काटवे के अनुसार मेष, तुला, वृश्चिक और मीन राशियों में चंद्रमा के फल उत्तम होते हैं। मिथुन, सिंह एवं धनु–राशियों में साधारण फल होते हैं। वृष, कर्क, कन्या एवं मकर राशि में अशुभ फल प्राप्त होते है। वृष में अत्यन्त अशुभ फल और वृश्चिक में अत्यन्त शुभ फल प्राप्त होते हैं। पुरुष राशियों में चन्द्रमा कुम्भ राशि में अच्छा नहीं है। स्त्री राशियों में मीन राशि में चंद्रमा अच्छा है।

यह श्री काटवे का अपना अनुभव है जो हमें ध्यान में रखना चाहिये। परन्तु महर्षि पाराशर, मन्त्रेश्वर आदि ने अवस्था के अनुसार फल कहा है। इसलिये चंद्रमा का पक्ष बल, भाव ग्रह बल, वर्गीय बल तथा अवस्था का ध्यान रखना चाहिये।

13.3.2 चन्द्रमा की महादशा में सूर्यादि नवग्रहों की अन्तर्दशायें

चंद्र / चंद्र (अवधि 10 माह)

पुत्री का जन्म, बहुमूल्य वस्त्र व आभूषण की प्राप्ति, ब्राह्मणों से समागम तथा माता की प्रसन्नता मिले। पत्नी का पूर्ण सुख मिले।

चंद्र / मंगल (अवधि 7 माह)

देह में पित्त कुपित हो, रक्त दोष हो। शत्रु, चोर अथवा अग्नि से भय, मन में क्लेश व दुःख। धन व मान सम्मान की हानि हुआ करती है। यों तो मंगल चंद्र परस्पर मित्र हैं किन्तु चंद्रमा जल तत्व व कोमल भावनाओं का प्रतिनिधि है तो मंगल उग्र स्वभाव, अग्नि तत्व व संघर्ष / स्पर्धा का प्रतीक है। अतः मंगल अपनी अन्तर्दशा में अशुभ फल ही अधिक दिया करता है। सुख पाने के लिए झगड़ना पड़े या सुख में व्यवधान हुआ करता है।

चंद्र / राहु (अवधि 1 वर्ष 6 माह)

मन को भयानक कष्ट व रोग हो। शत्रु वृद्धि व शत्रु जन्य पीड़ा हो। मित्र व बान्धव रोग ग्रस्त हों। प्राकृतिक (तूफान, बिजली, बाढ़) आपदाओं से क्लेश होता है, खान पान में गड़बड़ी से रोग व पीड़ा हो। चंद्रमा मन है, तो राहु प्रबल शत्रु है। अतः मन की सुख शांति नष्ट होगी व क्लेश बढ़ेगा।

चंद्रमा / गुरु (अवधि 1 वर्ष 4 माह)

दया, दान तथा धर्म में प्रवृत्ति हो। राज सम्मान, मित्र समागम व वस्त्राभूषण की प्राप्ति से मन में प्रसन्नता बढ़े। चंद्रमा व गुरु के परस्पर संबंध से गज केसरी योग बनता है जो मान, प्रतिष्ठा, सुख समृद्धि, प्रसन्नता व सफलता का प्रतीक है।

चंद्रमा / शनि (अवधि 7 माह)

रोग जनित कष्ट व पीड़ा हो। पुत्र, मित्र व स्त्री भी रोग पीड़ा भोगें। महान् विपत्ति या अनिष्ट आशंका। चंद्रमा मन है तो शनि काल पुरुष का दुःख है। अतः मन का दुःखी, पीड़ित व अवसाद युक्त होना सहज है।

चंद्रमा / बुध (अवधि 1 वर्ष 5 माह)

विविध धन–संपदा (भूमि, भवन, वाहन, रत्नाभूषण) की प्राप्ति हो। मन में सुख संतोष बढ़े। सत्कार्य व ज्ञान वृद्धि में मन लगे। बुध, विद्या अध्ययन विवेक, वाणी का कारक है। अतः ज्ञान व विवेक का आश्रम लेने से सुख शांति मिलेगी। मामा के सहयोग अनुग्रह से भी लाभ होगा।

चंद्रमा / केतु (अवधि 7 माह)

मन में क्षोभ व अशान्ति तथा जल से भय हो। बंधु वियोग / विरोध व धन हानि हो। दास व सेवक संबंधी कष्ट व क्लेश मिले। केतु पाप ग्रह होने से मानसिक क्लेश बढ़ाया करता है।

चंद्रमा / शुक्र (अवधि 1 वर्ष 8 माह)

वाहन का सुख मिले। स्त्री, धन, वस्त्राभूषण का सुख प्राप्त हो। क्रय–विक्रय (व्यापार), कृषि कर्म (उत्पादन उद्योग) से लाभ हो। पुत्र, मित्र, धन, धान्य से हर्ष हो। शुक्र कालपुरुष का धनेश व सप्तमेश है, तथा चंद्रमा मन है, चंद्रमा वृष में उच्चस्थ होता है, अतः धन प्राप्ति व स्त्री सुख होना सहज ही है।

चंद्रमा / सूर्य (अवधि 6 माह)

राज सम्मान मिले। पराक्रम व शौर्य का यश मिले। रोग मिटे, स्वास्थ्य लाभ हो। शत्रु पराजित हो। सुख, सौभाग्य व सफलता मिले। सूर्य पापी होने पर वात पित्त से कष्ट तथा माता–पिता को रोग देता है। चंद्र मन व सूर्य आत्मा है तथा कालपुरुष के जन्मांग में सूर्य पंचमेश (त्रिकोणेश) होकर लग्न में उच्चस्थ है तो चंद्रमा सुखेश होकर धनभाव में है। अतः सुख–सम्मान तो मिलेगा ही। यों भी ग्रह परिषद में सूर्य राजा व चंद्रमा रानी है।

मंगल

साधारणतया मंगल की महादशा में निम्न नैसर्गिक फल प्राप्त होते हैं।

राजकीय क्षेत्र से, शत्रु से, शस्त्र बनाने से, झगड़ों से, औषधियों से, धूर्तता से, भूमि से, क्रूरता से, पशुओं से आदि अनेक प्रकार से धन प्राप्त होता है। (यह तब होगा जब मंगल शुभ भाव में, शुभ भाव का स्वामी होकर, शुभ युक्त या दृष्ट होकर बलवान् हो।

यदि मंगल अशुभ हो तो पित्त जनित रक्त–विकार, ज्वर, दुर्घटनाएं होती हैं। चोर, राजा, अग्नि, दुर्घटनाओं से भय रहता है। घर में कलह, पुत्रों और सम्बन्धियों से विरोध रहता है। बंधन व व्रण रोग से कष्ट होता है।

पराशर मतानुसार मंगल केन्द्र व त्रिकोण का स्वामी हो तो शुभ तथा 3, 6, 8, 11, एवं 12 भाव का स्वामी हो तो अशुभ फल मिलता है। चंद्र या शुक्र के सम्बन्ध से मंगल दूषित हो जाता है।

अग्नि तत्व राशियों (मेष, सिंह एवं धनु) में क्रूर व साहसी मिथुन, तुला एवं कुम्भ (वायुतत्व) राशियों में प्रवासी एवं भाग्यहीन, वृष कन्या एवं मकर (पृथ्वी तत्व) राशियों में लोभी, स्वार्थी, दीर्घ द्वेषी, स्त्री प्रिय, झगड़ालू एवं शराबी या कुछ अन्य पदार्थ का सेवन कर्क वृश्चिक एवं

मीन (जल तत्व) राशियों में नाविक पियक्कड़, व्यभिचारी होता है। भोगी प्रवासी एवं धनवान्, फल स्त्री राशियों का है।

13.3.3 मंगल की महादशा में सूर्यादि नवग्रहों की अन्तर्दशायें

मंगल / मंगल (अवधि 4 माह 27 दिन)

शरीर में गर्मी बढ़ने (पित्त प्रकोप) से कष्ट हो, शरीर को चोट लगे / घाव हो तथा छोटे भाइयों से वियोग / विग्रह (मतभेद) हो। जाति, बंधु से शत्रुता व राजा से विरोध हो। अग्नि या चोर का भय हो। मंगल सबल होने पर सफलता व संतोष देता है किन्तु पापी होने पर प्रायः शत्रु व भाइयों से कष्ट दिलाता है। ध्यान रहे मंगल षष्ठ भाव व तृतीय भाव का कारक है।

मंगल / राहु (अवधि 1 वर्ष 18 दिन)

शत्रु, शस्त्र, चोर व राजा से कष्ट मिले। गुरु जन या बन्धु की हानि / वियोग हो। जातक के सिर, नेत्र व बगल में रोग हो / मारक होने पर महान आपत्ति व मृत्यु भय भी देता है।

मंगल / गुरु (अवधि 11 माह 6 दिन)

गुरु एक शुभ ग्रह है, व काल पुरुष का भाग्येश भोगेश होकर सुख स्थान में होने पर अत्यधिक शुभ प्रद माना गया है। जातक के पुत्र व मित्रों की वृद्धि हो। देवता व ब्राह्मण की उपासना से इष्टकार्य सिद्धि हो। अतिथि पूजा का सुअवसर मिले। तीर्थ यात्रा व पुण्य कर्मों के अवसर मिले। पापी गुरु होने से कान में रोग, पीड़ा व कफ जनित कष्ट होता है।

मंगल / शनि (अवधि 1 वर्ष 1 माह 9 दिन)

शनि कालपुरुष का दुःख है– अतः दुःख तो होगा पर धीरज से काम लें। पुत्र, गुरु जन पितर गणों पर विपत्ति आती है। जातक स्वयं भी मुसीबतों व परेशानियों से घिरा रहता है। शत्रु धन हरण करते हैं। मन में गुप्त अनजानी पीड़ा रहती है। अग्निकांड या तूफान से क्षति होती है। वात पित्त जन्य रोग व कष्ट हो।

मंगल / बुध (अवधि 11 माह 27 दिन)

काल पुरुष के जन्मांग में बुध, पराक्रमेश व षष्ठेश होकर छठे भाव में उच्चस्थ है अतः राजा या सरकार से कष्ट हो। शत्रु से भय, चोरी द्वारा धन हानि हो। पशु (वाहन) व सम्पत्ति की क्षति भी शत्रु के कारण होनी संभव है।

मंगल / केतु (अवधि 4 माह 27 दिन)

कुछ मनीषियों ने केतु को शुभ माना है, किन्तु ये दशा प्रायः अप्रिय घटनाएं ही अधिक देती है। वज्राघात, अग्नि व शस्त्र से पीड़ा, धननाश, विदेश (परदेश) गमन या अपना देश छोड़ना पड़े, कभी तो स्वयं अपने या पत्नी के प्राणों को भी संकट होता है।

मंगल / शुक्र (अवधि 1 वर्ष 2 माह)

काल पुरुष के जन्मांग में मंगल, लग्नेश अष्टमेश होकर दशमस्थ है तो शुक्र धनेश–सप्तमेश होकर द्वादश भाव में स्थित है। अतः इस दशा भुक्ति में स्वदेश छोड़कर विदेश में जाकर बसने की संभावना बढ़ जाती है। कभी बाएं नेत्र में कष्ट होता है। चोरी होने से धन हानि व नौकरों को कष्ट व कमी भी होती है। यदि द्वादश भाव विदेश व बाएं नेत्र का प्रतीक है तो सप्तम भाव से दास–दासी व चोरी का विचार किया जाता है।

मंगल / सूर्य (अवधि 4 माह 6 दिन)

संघर्ष / स्पर्धा में विजय मिले, समाज में मान प्रतिष्ठा व प्रभाव (दबदबा) बढ़े, राज सम्मान प्राप्त हो। लक्ष्मी की कृपा से धन, धान्य, वैभव विलास जनित सुख बढ़े। साहस व श्रम द्वारा धन की वृद्धि हो। कालपुरुष के जन्मांग में सूर्य उच्चस्थ होकर लग्न में है तो लग्नेश मंगल दशम भाव में उच्चस्थ है। अतः आत्मबल व सत्कर्म से सुख–वैभव की वृद्धि होना सहज संभव है।

मंगल / चंद्रमा (अवधि 7 माह)

विविध प्रकार के धन व संपदाएं प्राप्त हों– रत्न–वस्त्र–आभूषण, पुत्र–पत्नी,भूमि भवन व वाहन का सुख मिले। शत्रु से मुक्ति मिले। शत्रु जनित भय व पीड़ा नष्ट हो जाए। कभी गुरु जन को पीड़ा तो कभी स्वयं को भी गुल्म व पित्त जन्य कष्ट हो सकता है। चंद्रमा को कालपुरुष के धन स्थान में उच्चस्थ होने से, धनप्रदाता माना जाता है। चंद्रमा काल पुरुष का मन है अतः सुख शान्ति व धन वैभव मिलना स्वाभाविक है।

राहु

राहु एक छाया ग्रह है। इसका प्रभाव मानव जगत् पर होने के कारण हमारे मनीषियों ने इसे भी ग्रहों में स्थान दिया है। कुछ आचार्यों के मत से राहु का स्वगृह कन्या एवं उच्च राशि मिथुन है– नीच राशि धनु है। अन्य आचार्यों के मत से राहु की उच्च राशि वृष, मूल त्रिकोण राशि कुम्भ तथा प्रिय राशि कर्क है। तथा अन्य गुण शनिवत् है। राहु का शत्रु मंगल , शनि सम तथा शेष ग्रह मित्र है। अन्य मत से मंगल, सूर्य व चंद्रमा शत्रु ग्रह है।

राहु प्रधान व्यक्ति स्नेह शील प्रपंच में आसक्त होता है, स्वार्थ पूरा कर परोपकार करता है। मीन का इच्छुक, अभिमानी महत्वाकांक्षी होता है। बहुत बोलना नहीं चाहता, लेखन में सरस,

तेजस्वी तथा काव्य पूर्ण होता है। वह दूसरों के काम में दखल नहीं देता एवं दूसरों के ,द्वारा अपने काम में दखल देना पसंद नहीं करता है।

कुण्डली में राहु अशुभ योग में हो (विषम भाव में विषम राशि में हो) तो जातक बुद्धि हीन, दुष्ट, स्वार्थी अविश्वसनीय दुरभिमानी, झूठे आचरण से पूर्ण, निर्लज्ज, उदण्ड अपने मत को ही श्रेष्ठ मानने वाला, दूसरों को ताने देने वाला, दूसरों का अहित करने वाला होता है।

राहु की दृष्टि के बारे में भी मतभेद है। राहु की दृष्टि 5, 7, 9, 12 मानी गई है। परन्तु सप्तम व द्वादश दृष्टि ही अनुभव में आती है। सदा वक्री रहता है।

13.3.4 राहु की महादशा में सूर्यादि नवग्रहों की अन्तर्दशायें

राहु / राहु (अवधि 2 वर्ष 8 माह 12 दिन)

विष व जल से भय (दूषित जल के कारण रोग हो) हो, परस्त्री संग से अपयश, इष्टजन का वियोग व दुष्टजन से कष्ट, मन वाणी में कटुता क्रोध एवं क्रूरता बढ़े।

राहु / गुरु (अवधि 2 वर्ष 4 माह 24 दिन)

जातक देवता व ब्राह्मण का पूजन करे। शरीर नीरोग व स्वस्थ हो। सुन्दर स्त्रियों से समागम, विद्वत्ता पूर्ण विचार विनिमय व शास्त्र चिंतन में समय सुख पूर्वक बीते।

राहु / शनि (अवधि 2 वर्ष 10 माह 6 दिन)

स्त्री–पुत्र–भाईयों से मतभेद एवं झगड़ा होता है। जातक की पदच्युति (स्थानान्तरण) नौकर से या नौकरी में बाधा या हानि हो। शरीर में चोट लगे, वात पित्त जन्य रोग से पीड़ा होती है। शनि काल पुरुष के लग्न में नीचस्थ होता है। अतः इसका दोषी होना सहज है। यदि राहु को तृतीयस्थ मानें तो भाइयों से, पुत्र–स्त्री से झगड़ा, दुःख क्लेश व देह पीड़ा होना भी स्वाभाविक है।

राहु / बुध (अवधि 2 वर्ष 6 माह 18 दिन)

धन और पुत्र की प्राप्ति, मित्रों से समागम तथा चित्त में प्रसन्नता हो। बुद्धि में चतुराई व कुशलता की वृद्धि से कार्य सिद्धि व लाभ मिले। राहु व बुध परस्पर मित्र हैं। बुध व्यवहार कुशलता, वणिक, बुद्धि, व्यापार चातुर्य देकर मधुर वाणी से भी अपनी ओर आकर्षित करता है। कालपुरुष के जन्मांग में राहु बुध की राशि में स्थित है तथा कन्या राशि के बुध से (दशमस्थ) केन्द्र में है, अतः निश्चय ही कार्य में कुशलता–प्रवीणता से सुख बढ़ेगा ऐसा जानें।

राहु / केतु (अवधि 1 वर्ष 18 दिन)

राहु केतु परस्पर शत्रु माने गये हैं। अतः ये दशा ज्वर, अग्नि, शस्त्र व शत्रु जन्य भय दिया करती है। कभी सिर में रोग, शरीर में कंपन, विष या व्रण(घाव) से कष्ट होता है। मित्रों से कलह, गुरुजन की उदासीनता भी मनोवेदना व व्यथा बढ़ाती है।

राहु / शुक्र (अवधि 3 वर्ष)

स्त्री की अनुकूलता व सहवास सुख मिले। भूमि भवन वाहन व वैभव की प्राप्ति हो। अपने ही लोगों से वैर विरोध हो तथा जातक वात कफ जन्य रोगों से कष्ट पाये। काल पुरुष के जन्मांग में उच्चराशि का शुक्र द्वादश भाव (भोग भवन) में राहु से दशमस्थ (विपरीत गणना से चतुर्थस्थ) है। अतः सभी प्रकार के भोग मिलना स्वाभाविक है।

राहु / सूर्य (अवधि 10 माह 24 दिन)

आपत्ति, विपत्ति शत्रुजन्य बाधा व कष्ट, विष / अग्नि पीड़ा, शस्त्राघात, नेत्र पीड़ा की संभावना बढ़े। राजा / सरकार से भय हो तथा स्त्री पुत्र को भी कष्ट मिले। राहु व सूर्य परस्पर शत्रु हैं। सूर्य आत्मा, राजा व सरकार का प्रतीक है। यदि कालपुरुष के जन्मांग में सूर्य लग्न में है तो राहु तृतीय भाव में होने से परस्पर 3–11 की स्थिति बनती है जो अशुभ मानी गयी है। अतः अशुभ फल होना सहज एवं स्वाभाविक है।

राहु / चंद्रमा (अवधि 1 वर्ष 6 माह)

स्त्री सुख की हानि / नाश, स्वजन / परिजन से कलह व क्लेश हो। मन में चिंता संताप, मित्रों पर विपत्ति तथा जल से भय हो। कृषि, धन पशु व संतान को क्षति पहुँचे। चंद्रमा मन, मित्र, जल व मानसिक सुख शांति का प्रतीक है; तथा राहु प्रबल क्रूर शत्रु होकर कालपुरुष के जन्मांग में चंद्रमा से द्वितीय स्थान (मारक भाव) में स्थित है। यहाँ राहु मन की सुख शांति तथा मित्रादि के लिए मारक सरीखा कार्य करेगा।

राहु / मंगल (अवधि 1 वर्ष 18 दिन)

राजा (सरकार), अग्नि, चोर एवं अस्त्र से भय हो। देह या मन में रोग जनित पीड़ा हो। हृदय रोग, नेत्र पीड़ा व पदच्युति (स्थानहानि) की संभावना बढ़े।

मंगल कालपुरुष के जन्मांग में दशमस्थ है। अतः कार्य क्षेत्र, कार्यस्थल राजा (सरकार) से परेशानी होना सहज ही है। काल पुरुष के जन्मांग में राहु एक छाया[?] ग्रह होकर (दशमस्थ) मंगल से षष्ठस्थ होने से गुप्त रोग / पीड़ा दे सकता है। अतः अतिरिक्त सावधानी तथा जातक को स्नेह पूर्ण सेवा व सहयोग की आवश्यकता होगी।

बृहस्पति

यदि बृहस्पति शुभ व बलवान् हो तो जातक को राज, मन्त्रित्व एवं मनोवांछित फल प्राप्त होता है। देवार्चन, धार्मिक कर्म करता है। वाहन, भूमि एवं वस्त्र का लाभ होता है। उत्तम मनुष्यों की संगति प्राप्त होती है। कुटुम्ब व अन्यों का भरण–पोषण करता है।

स्व काटवे के अनुसार मेष, मिथुन, सिंह, धनु व मीन राशि में बृहस्पति उत्तम फल देता है। तुला, वृश्चिक, मकर तथा कुम्भ राशियों में मध्यम फल तथा वृष, कन्या एवं कर्क राशि में अशुभ फल प्राप्त होते हैं। आयु के अन्तिम भाग में यशस्वी होते हैं। यदि बृहस्पति स्त्री राशि में या पीड़ित हो तो जातक आयु के आरम्भ में नौकरी करते है, बाद में स्वतन्त्र व्यवसाय होता है। किन्तु दशम स्थान में बृहस्पति हो तो जीवन भर नौकरी करनी पड़ती है। ये लोग स्कूल, कालेज, आश्रम आदि संस्थाएं स्थापित करते हैं। नगर पालिका, जिला बोर्ड, विधान सभा आदि में चुनाव लड़ते हैं।

यदि बृहस्पति पीड़ित हो तो मिथ्या अभिमानी, बार–बार व्यवसाय बदलना, दूसरों को तुच्छ समझते हैं। दूसरों की बुराइयां निकालते रहते हैं। पत्नी के साथ पांच मिनट तक स्थिरता से बात नहीं कर पाते, परन्तु अन्य स्त्रियों से घुलमिल कर घण्टों बिता देते हैं। अपने को बहुत सुशिक्षित समझते हैं। अन्य लोगों पर अपना प्रभाव जमाना चाहते हैं।

13.3.5 गुरु की महादशा में सूर्यादि नवग्रहों की अन्तर्दशायें

गुरु / गुरु (अवधि 2 वर्ष 1 माह 18 दिन)

सुख सौभाग्य में वृद्धि हो। समाज में मान प्रतिष्ठा व यश मिले। मुख व देह की कान्ति बढ़े। गुणों का विकास व प्रकाश हो। गुरु–संत जन से मिलन, मनोकामना सिद्धि, सरकार द्वारा गुणों का मूल्यांकन हो, प्रशंसा तथा पुरस्कार मिले। सर्वत्र सराहना हो।

गुरु / शनि (अवधि 2 वर्ष 6 माह 12 दिन)

मद्यपान व वेश्याओं की संगति तथा सांसारिक सुख वैभव की प्राप्ति हो। सुरा–सुन्दरी पर धन का अपव्यय हो। कुटुम्बी व पशुओं को पीड़ा हो। नेत्र रोग, पुत्र पीड़ा, तथा मन में भय बना रहे। (भय व पीड़ा तो शनि का स्वभाव ही है। गुरु काल पुरुष का भोगेश है। तो शनि लाभेश है। अतः भोग में वृद्धि होगी। शनि सप्तस्थ होने से सुंदर वेश्याओं की संगति भी देगा।

गुरु / बुध (अवधि 2 वर्ष 3 माह 6 दिन)

सुरा–सुन्दरी, द्यूत क्रीड़ा तथा वात पित्त कफ जनित रोग हों। बुध राजकुमार है, सुन्दर युवक व मधुर भाषी है, व्यवहार कुशल व चतुर है, स्वार्थ सिद्धि हेतु छल कपट भी कर बैठता है, अतः भोग प्राप्ति के लिये जुआ व शराब का सहारा ले सकता है। अन्य मनीषियों का विचार है कि गुरु सात्विक व वेदनिष्ठ ब्राह्मण है यह ज्ञान, विवेक एवं प्रज्ञा का प्रतीक है। तो बुध बुद्धि व व्यवहार

कुशलता है अतः इस अन्तर्दशा देवता एवं ब्राह्मण की पूजा उपासना से ही सभी सुख वैभव, पुत्र, धन व परिवार की सुख समृद्धि प्राप्त होगी।

गुरु / केतु (अवधि 11 माह 6 दिन)

देह पर चोट / घाव, नौकरों से विरोध, स्त्री पुत्र को कष्ट तथा चित्त में व्यथा होती है। गुरुजन अथवा प्रियजन से वियोग बिछोह तथा कभी जातक को मृत्यु तुल्य कष्ट या प्राण हानि हो। इसे एक विडंबना ही कहा जाएगा कि काल पुरुष के जन्मांग में केतु त्रिकोण (नवम भाव) में गुरु की राशि में बैठा है, किंतु गुरु से षष्ठ है। दशानाथ–अन्तर्दशानाथ का परस्पर षष्ठ, अष्टम होना अशुभ व अनिष्टकर माना गया है तथा रोग, शत्रु व घाव पीड़ा देने वाला है।

गुरु / शुक्र (अवधि 2 वर्ष 8 माह)

अनेक प्रकार के धन–धान्य, वस्त्राभूषण, सुख सामग्री की प्राप्ति व वृद्धि हो। स्त्री–पुत्र का सुख मिले। स्वादिष्ट भोजन, उत्तम पेय का सुख मिले। देवता व ब्राह्मण की अर्चना, उपासना में जातक तत्पर रहे। (कालपुरुष के जन्मांग में शुक्र, भोगस्थान में उच्च का होकर गुरु की राशि में है तो गुरु भाग्येश भी है, अतः भाग से विविध प्रकार भोग–वैभव की प्राप्ति होना स्वाभाविक है।

गुरु / सूर्य (अवधि 9 माह 18 दिन)

शत्रु पर विजय, राजसम्मान, यशवृद्धि, धन लाभ व वाहन सुख मिले। प्रभाव व पुरुषार्थ में वृद्धि हो। महानगर में रहकर जातक उच्च कोटि के वैभव व सुख संपदा भोगें। (कालपुरुष के जन्मांग में गुरु सुख भाव में है तो सूर्य लग्न में उच्चस्थ है। लग्न सुख भाव के लिये दशम भाव है अतः कार्य क्षेत्र में उन्नति सफलता, मान–सम्मान की वृद्धि व मानसिक सुख मिलना सहज है।

गुरु / चंद्रमा (अवधि 1 वर्ष 4 माह)

स्त्री व धन की प्राप्ति हो। यश वृद्धि व कृषि से लाभ मिले। व्यापार (क्रय–विक्रय) द्वारा लाभ मिले। देवता व ब्राह्मण की पूजा हो। (गुरु, चंद्रमा की राशि में उच्चस्थ होता है ये लाभ की नैसर्गिक कारक होने से निश्चय ही लाभ देगा, किन्तु धर्म विमुखता साधु–संत का अनादर करने से कभी अपयश व मानसिक क्लेश भी दिया करता है ऐसी परिस्थिति में पत्नी से अनबन, स्त्री सुख की हानि, धन नाश भी हुआ करता है। अतः विज्ञ जन गजकेसरी योग की सार्थकता हेतु धार्मिक अनुष्ठान व देवोपासना का सुझाव दें।

गुरु / मंगल (अवधि 11 माह 6 दिन)

जातक के कार्यों से बन्धुओं को सुख संतोष प्राप्त हो, शत्रुओं से भी जातक लाभ पायें। भूमि भवन की प्राप्ति हो। प्रभाव व प्रताप में वृद्धि हो। किसी गुरुजन को चोट लगे। जातक को नेत्र

पीड़ा हो तथा सत्कर्म के प्रभाव से जातक सुख पाये ! मंगल, बंधु, स्नेह व शत्रु से संघर्ष का प्रतीक है तो गुरु लाभ का। काल पुरुष के जन्मांग में गुरु चतुर्थ (सुख भाव) में है तो मंगल कर्म भाव में। अतः कर्म के प्रभाव से तथा कर्म के द्वारा जातक को सुख व सभी प्रकार के लाभ मिलेंगे।

गुरु / राहु (अवधि 2 वर्ष 4 माह 24 दिन)

बंधुओं को / से कष्ट व संताप हो। मन में दुःख, चिन्ता व उद्विग्नता हो। रोग व चोर से भय। गुरुजन को कष्ट / जातक को उदर विकार हो। राजा से कष्ट पीड़ा या दंड मिले। शत्रु जनित कष्ट बढ़े। धन का नाश हो। गुरु, देवताओं का रक्षक व मंत्रदाता गुरु है; तो राहु देवताओं का प्रबल शत्रु है। अतः अशुभ फल होना स्वाभाविक है। काल पुरुष की कुंडली में राहु, गुरु से द्वादश होकर बंधु स्थान में है, अतः भाई बंधुओ के कारण सुख की हानि, घर परिवार में अशान्ति, मन में दुःख क्लेश भी होगा ही।

शनि

शास्त्रों के मतानुसार शनि यदि बलवान् हो, उच्च का हो तो जातक ग्राम, देश या सभा का आधिपत्य प्राप्त करता है। उसे अनेक प्रकार से आनन्द प्राप्त होता है। किन्तु पिता की मृत्यु एवं बन्धुजनों से वैमनरय होता है। यदि शनि पीड़ित हो, निर्बल हो या नीच हो तो देश परिवर्तन चिन्ता, व्यवसाय परिवर्तन, धन की हानि तथा राजा से विरोध होता है। नौकरी या किसी की अधीनता करनी पड़ती है।

सूर्य के साथ शनि हो तो उसकी दशा में स्वजनों से मतभेद परस्त्रीगमन नौकर या सन्तान से असन्तोष तथा प्राण क्रिया करने में तत्पर रहता है। यदि शुभ ग्रह के साथ हो तो बुद्धि का उदय राजपक्ष से भाग्योभति[?] धन लाभ, खेती में उन्नति एवं काले–धन की प्राप्ति होती है। यदि पाप ग्रह के साथ या दृष्टि हो तो धन, स्त्री, सन्तान, नौकर की हानि होती है। लांछन लगता है।

शनि यदि शुभ है तो जातक गूढ़ विषयों की जड़ तक जाने का प्रयत्न करता है। परोपकारी, मिलनसार, राष्ट्रीय योगी, अनासक्त होता है। अपमान स्थिति में दीर्घकाल तक न रह कर स्वाभिमान की स्थिति में दो दिन में मरना अच्छा समझता है। यदि शनि पीड़ित है तो जातक स्वार्थी, धूर्त, दुष्ट, मनमानी करने वाला, आलसी एवं भद्र बुद्धि होता है। शनि वृष, कन्या और मकर में उत्पात करता है।

13.3.6 शनि की महादशा में सूर्यादि नवग्रहों की अन्तर्दशायें

शनि / शनि (अवधि 3 वर्ष 3 दिन)

कृषि में लाभ, दास दासी व पशुधन (भैंस) की वृद्धि हो। वात रोग से पीड़ा, शूद्र (श्रमिक वर्ग, निम्न वर्ग) से धन लाभ हो। देह में आलस्य व पाप वृत्ति बढ़े। प्रौढ़ा स्त्री का संग हो। (शनि ग्रह

परिषद् में दास है व कालपुरुष के जन्मांग में सप्तमस्थ होने से दास दासियों के सुख में वृद्धि करेगा, किंतु लग्न पर नीच दृष्टि के कारण शनि रोग व आलस्य भी दे सकता है।

शनि / बुध (अवधि 2 वर्ष 8 माह 9 दिन)

सुख–सौभाग्य की वृद्धि, राज सम्मान मिले। मित्र व स्त्री से सुख समागम। वात–पित्त कफ से रोग व पीड़ा हो। जातक के भाई, बहन या पुत्र रोग ग्रस्त हों। (बुध हास्य व मनोरंजन प्रिय व शनि का मित्र है। काल पुरुष के जन्मांग में बुध तृतीयेश–षष्ठेश होकर षष्ठ भाव में शनि से द्वादशस्थ है। अतः शय्या सुख, मित्र सुख व सौभाग्य की वृद्धि होगी। तृतीयेश के षष्ठस्थ होने से भाई–बहिन को रोग व पीड़ा होना भी सहज संभव है।

शनि / केतु (अवधि 1 वर्ष 1 माह 9 दिन)

अग्नि व वायु प्रकोप से कष्ट, शत्रुओं से संताप मिले। स्त्री पुत्र से मतभेद व क्लेश हो। अशुभ व अप्रिय घटना घटे, सर्प भय हो। (शनि व केतु दोनों ही पापी हैं, केतु भाग्य भवन में शनि द्वारा दृष्ट है, अतः दुर्भाग्य जनित कष्ट बाधाएं मिलना स्वाभाविक है।

शनि / शुक्र (अवधि 3 वर्ष 2 माह)

स्त्री पुत्र व मित्रों से सुख मिले व स्वयं जातक भी इन्हें सुखदायी लगे। समुद्र पार (आयात–निर्यात) से धन प्राप्त हो। यश व प्रभाव बढ़े। (कालपुरुष के जन्मांग में धनेश–सप्तमेश) शुक्र द्वादश (भोग, वैभव) में उच्चस्थ तथा सप्तम भाव का नैसर्गिक कारक होने से इस दशा भुक्ति में सुख, वैभव व भोग की वृद्धि होगी।

शनि / सूर्य (अवधि 11 माह 12 दिन)

शत्रु या मृत्यु का भय हो। उदर विकार या नेत्र रोग हो। धन धान्य की हानि व गुरुजन को कष्ट होता है। (सूर्य, शनि का पिता है किन्तु शनि इस सूर्य से शत्रुवत् व्यवहार, अवज्ञा–अवमानना करता है। अतः शत्रु / मृत्यु का भय, रोग व हानि होना सहज संभव है। पिता पुत्र में सौमनस्य की कमी व कटुता भी अशक्य नहीं।

शनि / चंद्रमा (अवधि 1 वर्ष 7 माह)

रोग व मृत्यु भय, स्त्री सुख की हानि, मित्रों पर विपत्ति व पीड़ा तथा जल व वायु के प्रकोप से हानि। दूषित जल द्वारा फैलने वाले अथवा वायु प्रदूषण से उत्पन्न रोग कष्ट दे सकते हैं। कभी बाढ़ या तूफान से भी तबाही हो जाती है। (चंद्रमा मन है तो शनि पीड़ा, अतः मन में अशान्ति, दुःख, अवसाद होना सहज संभव है। यों भी चंद्रमा द्वितीय व शनि सप्तमस्थ होने से मारक प्रभाव भी देगा। चंद्रमा स्वास्थ्य भी है, अतः शनि अस्वास्थ्यकर रोग की पीड़ा भी देगा।

शनि / मंगल (अवधि 1 वर्ष 1 माह 9 दिन)

पदच्युति, नौकरी छूठे[?] या पद से हटाया जाए। अपने ही लोगों से झगड़ा हो। ज्वर, ताप, शस्त्र, विष, रोग व शत्रु से भय व पीड़ा हो। हर्नियां से कष्ट या नेत्र रोग हो। शत्रुओं की वृद्धि हो। (काल पुरुष के जन्मांग में मंगल लग्नेश अष्टमेश होकर दशमस्थ है, अतः शनि का बुरा प्रभाव जातक की देह, आयु व कार्य क्षेत्र पर निश्चय ही पड़ेगा। मंगल व शनि शत्रु हैं, अतः शत्रुओं की वृद्धि व उनसे कष्ट मिलने की संभावना भी बढ़ेगी।)

शनि / राहु (अवधि 2 वर्ष 10 माह 6 दिन)

जातक खराब रास्ते पर जाए (कुमार्गगामी हो), प्राणों का संकट हो। प्रमेह, गुल्म, चोट व ज्वर से कष्ट हो। शनि व राहु दोनों ही क्रूर ग्रह हैं, अतः ये अन्तर्दशा पीड़ा कारक तो होगी ही (राहु छाया होने से प्रायः अवश्य व गुप्त रूप से जातक की बुद्धि को प्रभावित कर उसे संकट में डाल देता है। शनि भी, सूर्य सरीखे पिता को त्यागकर, नीच संगति में प्रसन्न रहता है व दुःख देकर प्राणियों के पापकर्म का भोग करा कर उन्हें शुद्ध करना मानो शनि का सहज कर्म है। अतः दुःख से बचने के लिये धर्म का आश्रय लें।

शनि / गुरु (अवधि 2 वर्ष 6 माह 12 दिन)

ये अन्तर्दशा बहुत शुभ व कल्याणकारी है। जातक की धर्म व भगवान् में श्रद्धा होती है। वह देवता व ब्राह्मण के पूजन में रुचि लेता है। स्त्री पुत्र के साथ धन–धान्य का सुख भोगते हुए अपने ही घर में सुख पूर्वक रहता है। (शनि व गुरु परस्पर सम होने से मित्रवत् व्यवहार करते हैं। गुरु, काल पुरुष का भाग्येश होकर सुख भाव में है, तो शनि दशमेश होकर सप्तमस्थ है। यहाँ गुरु अधिक बली है वह शनि की अशुभता पूरी तरह नष्ट कर देता है। यों भी कहावत है कि जाता हुआ शनि बहुत कुछ देकर जाता है, निश्चय ही देवोपासना सत्कर्म व दान पुण्य से जातक के पाप नष्ट होते हैं व गुरु की कृपा से धन वैभव सुख शान्ति तथा समृद्धि की वृद्धि होती है।

बुध

बुध अधिकतर जिस ग्रह के साथ स्थित होता है उसके फल देता है। बुध विद्यार्थियों का प्रतिनिधि ग्रह है। शायद इन बातों को ध्यान में रखकर ही बुध को नपुंसक ग्रह माना है। क्योंकि विद्यार्थी ब्रह्मचर्य का पालन करता है। यदि बुध बलवान्, शुभ दृष्ट व उच्च का हो तो धन की प्राप्ति, सुख, सम्मान प्राप्त होता है। परोपकार, धन, भूमि, वस्त्रादि का सुख मिलता है। लेखन व प्रकाशन का कार्य करता है। यदि बुध निर्बल, पीड़ित व नीच हो तो परस्त्रीगामी, स्वजनों से विरोध, पदच्युति माता व भ्रातृ पक्ष की हानि, विदेश यात्रा, मस्तिष्क के रोग होते हैं। जातक विद्याहीन होता है। व्यवसाय में हानि होती है। यदि बुध सूर्य के साथ हो तथा अस्त नहीं तो बुधादित्य योग बनता है।

जातक विद्वान् व खगोलशास्त्री होता है। यदि बुध अस्त हो जाए तो जातक मानसिक दुःख, अपने परिवार जनों से वैमनस्य, वाचाल निन्दा करने वाला होता है। यदि बुध शुभ ग्रह युक्त हो तो शुभ कर्म, कीर्ति सम्मान, स्त्री सुख, धन की प्राप्ति होती है। पाप युक्त बुध की दशा में पाप कर्म, पर–निन्दा, व्यर्थ में ज्यादा बोलना, भूमि, स्त्री, पुत्र सुख की हानि होती है। बन्धुजनों से वियोग, अपने पद संच्युति, विदेश यात्रा एवं छोटी नौकरी उस पर भी कलह होता है।

13.3.7 बुध की महादशा में सूर्यादि नवग्रहों की अन्तर्दशायें

बुध / बुध (अवधि 2 वर्ष 4 माह 27 दिन)

जातक धर्म मार्ग पर चले, विद्वानों व ब्राह्मणों के संग से निर्मल बुद्धि प्राप्त कर सभी बाधाओं को दूर कर, धन–यश व सुख पाए।

बुध / केतु (अवधि 11 माह 27 दिन)

दुःख शोक व क्लेश से मन अधीर व व्याकुल हो। शत्रुओं से भय व हानि हो। रेवती व वाहन की क्षति हो।

बुध / शुक्र (अवधि 2 वर्ष 10 माह)

देवता, ब्राह्मण व गुरु के प्रतिश्रद्धा हो। जातक दान व धर्म में लगे। मित्र समागम तथा वस्त्राभूषण प्राप्त कर सुखी हो। (बुध व शुक्र परस्पर मित्र हैं। बुध से बुद्धि व व्यवहार कुशलता तथा शुक्र द्वारा जातक राजसी भोग पाता है।)

बुध / सूर्य (अवधि 10 माह 6 दिन)

राजसम्मान, उत्तम भोजन व पेय, भव्य भवन–वाहन व उत्कृष्ट धन संपदा मिले। (बुध के लिये सूर्य मित्र ग्रह है जो सूर्य की सिंह राशि से द्वितीय भाव कन्या में स्थित होकर धन व खान–पान का सुख देता है। यों भी सूर्य राजा है व बुध राजकुमार; अतः राजा सूर्य का लाड़ प्यार बुध को सहज प्राप्त है।

बुध / चंद्रमा (अवधि 1 वर्ष 5 माह)

सिर में दर्द, (कंठ) गले में दर्द एवं नेत्र में कष्ट / विकार हो। जातक को चर्मरोग, दाद, खाज, खुजली व सफेद दाग की बीमारी हो। कभी प्राणों को संकट या भय हो। (चंद्रमा देह की सुंदरता व स्वास्थ्य है, मन की सुख शांति भी है। बुध के लिए चंद्रमा शत्रु ही है। अतः बुध स्वास्थ्य संबंधी चिन्ता परेशानी देगा।

बुध/मंगल (अवधि 11 माह 27 दिन)

आग या चोरी से धन हानि। नेत्र पीड़ा, मन में दुःख व चिन्ता। पदच्युति व मकान छूटे। वात रोग से कष्ट हो। (मंगल, चन्द्रमा को मित्र व बुध को शत्रु मानता है। बुध धन व प्रसन्नता का प्रतीक है। अतः मंगल अपनी अन्तर्दशा में बुद्धि को भ्रमित कर चिन्तातुर बनाता है। किसी भी तरह से धन हानि करता है। बदले में बुध भी भूमि भवन व अधिकार पद की दिया करता है।

बुध/राहु (अवधि 2 वर्ष 6 माह 18 दिन)

उदर, मस्तक व नेत्र में पीड़ा, स्वास्थ्य की हानि हो। अग्नि, विष व जल से भय हो। जातक के धन, मान व पद (प्रतिष्ठा/अधिकार) की क्षति हो। (बुध भले ही पापी न हो किन्तु राहु तो प्रबल पापी व अशुभ माना गया है। अतः धन, मान प्रतिष्ठा व स्वास्थ्य की हानि करने में पीछे नहीं हटता।)

बुध/गुरु (अवधि 2 वर्ष 3 माह 6 दिन)

शत्रु व रोग से छुटकारा, धार्मिक कार्यों में सफलता व राजसम्मान मिले। धर्म व तपस्या में विशेष रुचि हो। (गुरु वेदनिष्ठ, शास्त्रमर्मज्ञ ब्राह्मण है; तो बुध है– बुद्धि चातुर्य व व्यवहार कुशलता का प्रतीक। अतः ज्ञान व बुद्धि के मिलन से शुभ कार्य सम्पन्न होंगे। जिनके कारण मान, सम्मान, यश कीर्ति का विस्तार होगा व मन में हर्ष उल्लास, उत्साह, उमंग, आस्था, विश्वास जनित सुख उपजेगा।)

बुध/शनि (अवधि 2 वर्ष 8 माह 9 दिन)

मित्र व स्त्री से सुख समागम। वात–पित्त कफ से रोग व पीड़ा हो। जातक के भाई, बहन या पुत्र रोग ग्रस्त हों। (बुध हास्य व मनोरंजन प्रिय व शनि का मित्र है। काल पुरुष के जन्मांग में बुध तृतीयेश–षष्ठेश होकर षष्ठ भाव में शनि से द्वादशस्थ है। अतः शय्या सुख, मित्र सुख व सौभाग्य की वृद्धि होगी। तृतीयेश के षष्ठस्थ होने से भाई–बहिन को रोग व पीड़ा होना भी सहज संभव है।

केतु

केतु एक छाया ग्रह है। हमेशा राहु से सप्तम भाव में रहता है। केतु का फल राहु फल के अनुसार होते हैं।

13.3.8 केतु की महादशा में सूर्यादि नवग्रहों की अन्तर्दशायें

केतु/केतु (अवधि 4 माह 27 दिन)

मित्रों से विरोध, शत्रुओं से कलह, देह ताप, अशुभ वचन से मनःसंताप, दूसरे के घर में रहना पड़े एवं धन की हानि हो।

केतु/शुक्र (अवधि 1 वर्ष 2 माह)

पत्नी, ब्राह्मण व कुटुंबी जन से वैर एवं विरोध जनित क्लेश हो। कन्या जन्मे। मान हानि, अपमान हो। लोगों से कष्ट पहुँचे।

केतु/सूर्य (अवधि 4 माह 6 दिन)

गुरुजन का मरण, निज जन से विरोध व ज्वर से कष्ट हो। सरकार की ओर से कलह उपस्थित हो। वात कफ जनित रोग किन्तु विदेश जाने से लाभ मिले।

केतु/चन्द्र (अवधि 7 माह)

अनायास धन का लाभ व हानि भी हो। पुत्र से वियोग जन्य कष्ट हो। घर में शिशु का जन्म हो। नौकर व कन्या संतान का लाभ हो। कभी संतान के कारण दुःख उठाना पड़े।

केतु/मंगल (अवधि 4 माह 27 दिन)

घर के वृद्धजन से कलह, बंधुओं से वियोग अथवा अनिष्ट, सर्प, चोर, अग्नि–शत्रु से भय एवं पीड़ा हो।

केतु/राहु (अवधि 1 वर्ष 18 दिन)

शत्रु निर्मित कलह से कष्ट हो। राजा, अग्नि व चोर से भय हो। जातक दूसरों को हानि पहुँचाने का प्रयत्न करे। उसकी निन्दा, भर्त्सना एवं गालियाँ खाए।

केतु/गुरु (अवधि 11 माह 6 दिन)

श्रेष्ठ पुत्र की प्राप्ति, देवोपासना, धन–भूमि लाभ, आय वृद्धि, उपाहार व भेंट मिले, राज सम्मान व सुख मिले।

केतु/शनि (अवधि 1 वर्ष 1 माह 9 दिन)

नौकरों की/से हानि, दूसरों से कष्ट, शत्रुओं से विवाद–झगड़ा, स्थान हानि, धन हानि, अंग भंग की संभावना बढ़े। नौकरी छूटना व स्थानान्तरण भी हो सकता है।

केतु/बुध (अवधि 11 माह 27 दिन)

उत्तम पुत्र की प्राप्ति, उच्चाधिकारी/नियोक्ता से प्रशंसा मिले। भूमि व धन का लाभ हो। प्रबल वैरी द्वारा कष्ट, कृषि व पशु धन की क्षति हो।

शुक्र

यदि शुक्र बलवान्, शुभ युक्त या दृष्ट तथा शुभ भाव में स्थित हो तो जीवन सफल होता है। व्यवसाय में यश, सम्पत्ति, कीर्ति आदि की प्राप्ति होती है। स्त्रियां एकाधिक होती हैं। कामुक किन्तु परस्त्रियों से विमुख प्रवृत्ति की होती है।

स्त्री, सन्तान, धन, सम्पत्ति, आभूषण और वाहन द्वार–सुख प्राप्त होता है। राज्य पक्ष से सम्मान होता है, विद्या–लाभ, गायन और नृत्यादि में मन लगाने वाला, शुभ स्वभाव दानादि अभिरुचि रखने वाला एवं क्रय–विक्रय में चतुर होता है।

यदि शुक्र निर्बल या पीड़ित हो तो झगड़ालू, खर्चीली प्रवृत्ति के प्रेम सम्बन्धों की चाह होती है। साधारण भाषा में दिलफेंक कहते हैं। इज्जत की फिक्र न करने वाले, अनैतिक सम्बन्धों में रस लेने वाले, चंचल अविश्वासी होते हैं। सभी कमाई शराब पीने में गवां देते हैं। मित्रता में भी स्थिरता नहीं होती। किसी भी चीज में व्यवस्थिति नहीं होती। धर्म कर्म के बारे में भी उदासीन रहते हैं। घरेलू झगड़े वात–कफ प्रकोप जनित रोग होते हैं।

13.3.9 शुक्र की महादशा में सूर्यादि नवग्रहों की अन्तर्दशायें

शुक्र/शुक्र (अवधि 3 वर्ष 4 माह)

वस्त्राभूषण, वाहन, सुगन्धित पदार्थ, स्त्री भोग, धन संपदा व सुख प्राप्त हो। देह कान्ति बढ़े।

शुक्र/सूर्य (अवधि 1 वर्ष)

नेत्र, कपोल, कुक्षि (बगल) में रोग/पीड़ा हो। राजभय, गुरुजन अथवा बन्धु से/को पीड़ा हो(सूर्य व शुक्र परस्पर शत्रु हैं, सूर्य राजा है तो शुक्र सुख है। अतः राजा या गुरुजन (वरिष्ठ) अधिकारियों से भय एवं कष्ट की संभावना बढ़ती है। कालपुरुष के जन्मांग में शुक्र, सूर्य से द्वादश भाव में है। ये भी सुख की हानि करने वाली स्थिति है।)

शुक्र/चंद्र (अवधि 1 वर्ष 8 माह)

नख–शिख व दांतों में चोट लगे, दर्द हो। वात–पित्त रोग, धन नाश, संग्रहणी, यक्ष्मा अथवा गुल्म रोग हो। (सूर्य की भांति चंद्रमा भी शुक्र के लिये शत्रु ही है। चंद्रमा कालपुरुष का सुखेश है तो शुक्र द्वितीयेश, अतः रोग–पीड़ा, धन हानि से मनस्ताप होना सहज है।

शुक्र/मंगल (अवधि 1 वर्ष 2 माह)

पित्त प्रकोप व रक्त दोष से पीड़ा हो। भूमि, सोना तांबा सरीखी धातु की प्राप्ति व लाभ होता है। किसी युवती से अवैध संबंध होना संभव है। कार्य व्यवधान/परिवर्तन हो। नौकरी या व्यापार बदले। मंगल कालपुरुष का लग्नेश होकर दशमस्थ है तो शुक्र धनेश होकर व्यय भाव में। इनमें परस्पर संबंध 3–11 भाव का है जो अशुभ ही कहा जाएगा। मंगल भूमि लाभ तो अवश्य कराएगा, किन्तु रक्त विकार या उच्च रक्त चाप भी दे सकता है। इसी प्रकार शुक्र–मंगल के कारण काम वेग को बढ़ाएगा, अविवेकी बनाकर पशुवत् आचरण दे सकता है।

शुक्र/राहु (अवधि 3 वर्ष)

पुत्र का जन्म, धन लाभ व आदर सत्कार मिले। वाणी मधुर व प्यारी हो। शत्रु पर विजय मिले, शत्रु कारावास भोगे। कभी जातक को भी विष, अग्नि, चोर से पीड़ा व मानसिक संताप होता है।

शुक्र/गुरु (अवधि 2 वर्ष 8 माह)

उच्च पद व अधिकारों की प्राप्ति हो। धर्म कर्म में संलग्न हो देवताओं का पूजन करे। स्त्री पुत्र का सुख पाए। राज्य कृपा से विविध सुखभोग प्राप्त हों।

शुक्र/शनि (अवधि 3 वर्ष 2 माह)

समाज, सेना या सरकार से सम्मान मिले। उत्तम स्त्री सुख, धनागम व सुख साधन की प्राप्ति व वृद्धि हो। (शुक्र व शनि परस्पर मित्र हैं। काल पुरुष के जन्मांग में शुक्र भोग स्थान में है, तो शनि भी सप्तम भाव में शुक्र की राशि का होकर स्थित है। अतः ये शनि, निश्चय ही भोग सामग्री, वैभव व भाग्य वृद्धि के साथ सुख बढ़ाएगा।)

शुक्र/बुध (अवधि 2 वर्ष 10 माह)

धन–संपत्ति, यश–प्रतिष्ठा, पद–अधिकार व पुत्र का सुख मिले। शत्रुओं का नाश हो। जातक वात–पित्त–कफ (त्रिदोष) व्याधि से पीड़ित हो। (बुध पराक्रमेश होकर षष्ठस्थ होने से पराक्रम वृद्धि कर शत्रु नाश करेगा। शुक्र धनेश होकर भोग भवन में उच्चस्थ होने पर वैभव व सुख सामग्री बढ़ाकर सुख देगा।)

शुक्र/केतु (अवधि 1 वर्ष 2 माह)

संपत्ति व सुख की हानि, अग्नि भय, देह में पीड़ा, पुत्र वियोग व वेश्याओं की संगति हो। (शुक्र दैत्य गुरु है, वह भोगी भी है। केतु प्रबल देवशत्रु है। अतः भोग लिप्सा व धर्म विमुखता के दुखदायी परिणाम इस अवधि में प्राप्त होना स्वाभाविक ही है। केतु मानो चेतावनी देता है कि वह धर्म का पक्षधर है। अधर्म, अन्याय व स्वार्थ के लिये जातक को कठोर दंड अवश्य मिलेगा।)

13.4 सारांश

जन्मकुण्डली निर्माण के पश्चात् फलादेश की आवश्यकता होती है। इसके लिए विभिन्न प्रकार की दशा पद्धति ज्योतिष में प्रयोग की जाती है। परंतु सर्वाधिक मान्य व प्रचलित दशा पद्धति विंशोत्तरी दशा ही है। विंशोत्तरी दशा में नौ ग्रहों की महादशा होती है जिसकी कुल अवधि 120 वर्ष होती है। इसी कारण इसका नाम विंशोत्तरी दशा पड़ा। प्रत्येक महादशा के वर्ष निश्चित होते हैं और प्रत्येक ग्रह की महादशा में 9 अन्तर्दशाएं होती हैं। इस प्रकार पूरे एक चक्र में 9x9=81 अन्तर्दशाएं होती हैं।

प्रत्येक ग्रह का अपनी शुभता/अशुभता के आधार पर तो नैसर्गिक फल होता है। साथ ही फल इस बात पर भी निर्भर करता है कि अमुक ग्रह किस भाव का स्वामी है व किस भाव में, किस राशि में स्थित है। इसके अतिरिक्त महादशा में अंतर्दशा वाले ग्रह का महादशा नाथ से क्या संबंध है, यह मित्रता, शत्रुता या सम का संबंध है इस पर भी फल निर्भर करता है। इसके अलावा महादशा में अन्तर्दशा का क्रम क्या है, यह भी प्रभावकारी होता है। सामान्यतः 3, 5, 7वें क्रम की अन्तर्दशा को तारा विचार की दृष्टि से अशुभ माना जाता है। परंतु इस क्रम से अधिक महत्वपूर्ण अन्य तथ्यों पर विचार करना आवश्यक होता है।

13.5 शब्दावली

विंशोत्तरी	– विंश + उत्तरी अर्थात् 120 वर्ष की दशा
वायु तत्व	– पंच तत्वों में से एक तत्व
महादशा	– विंशोत्तरी दशा की अवधि
अन्तर्दशा	– महादशा के अंतर्गत दशा के नौ विभाग

अभ्यास प्रश्न

प्रश्न 1.किस महादशा में कितनी अन्तर्दशा होती हैं और उनका क्रम किस प्रकार निश्चित होता है।

प्रश्न 2. नवग्रहों की महादशा की अवधि बताएं।

प्रश्न 3. किस महादशा में किस क्रम की अन्तर्दशा अशुभ मानी जाती है?

प्रश्न 4. किस महादशा में अन्तर्दशा का विवेचन करते समय किन–किन बातों का विचार आवश्यक है?

प्रश्न 5. सूर्य की महादशा में नवग्रहों की अन्तर्दशा का क्रम बताएं।

प्रश्न 6.क्या ग्रह की गति का प्रभाव उसकी महादशा और अन्तर्दशा की अवधि पर भी पड़ता है?

प्रश्न 7. चंद्र की महादशा में किन–किन ग्रहों की अन्तर्दशा शुभ फलकारी और किन ग्रहों की दशा अशुभ फलकारी होती है?

प्रश्न 8. मंगल की महादशा में सभी अन्तर्दशाओं का फल बताएं।

प्रश्न 9. बुध ग्रह के नैसर्गिक फल क्या–क्या होते हैं?

प्रश्न 10. शनि की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा की अवधि बताएं।

13.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्तर 1. नौ अन्तर्दशाएं होती हैं उनका क्रम इस प्रकार होता है – पहली अन्तर्दशा उसी ग्रह की होती है जिसकी महादशा होती है। उसके पश्चात् का क्रम नक्षत्र स्वामी के क्रमानुसार होता है जैसे सूर्य की महादशा में अन्तर्दशाओं का क्रम निम्न प्रकार होगा।

सूर्य–सूर्य, सूर्य–चंद्र, सूर्य–मंगल, सूर्य–राहु, सूर्य–गुरु, सूर्य–शनि, सूर्य–बुध, सूर्य–केतु, सूर्य–शुक्र।

उत्तर 2. सूर्य – 6 वर्ष, चंद्र – 10 वर्ष, मंगल – 7 वर्ष, राहु – 18 वर्ष, गुरु – 16 वर्ष, शनि – 19 वर्ष, बुध – 17 वर्ष, केतु – 7 वर्ष, शुक्र – 20 वर्ष

उत्तर 3. 3, 5, 7 क्रम की दशाएं अशुभ होती हैं।

उत्तर 4. किसी महादशा का अन्तर्दशा का विचार करते समय निम्न विचार आवश्यक हैं–

1. महादशा एवं अन्तर्दशा नाथ का मैत्री संबंध
2. महादशा एवं अन्तर्दशा नाथ का स्थान संबंध
3. महादशा एवं अन्तर्दशा नाथ किस भाव के स्वामी हैं
4. किन भावों में स्थित हैं।
5. महादशा से अन्तर्दशा का क्रम

उत्तर 5. सूर्य–सूर्य, सूर्य–चंद्र, सूर्य–मंगल, सूर्य–राहु, सूर्य–गुरु, सूर्य–शनि, सूर्य–बुध, सूर्य–केतु, सूर्य–शुक्र।

उत्तर 6. नहीं

उत्तर 7. प्रस्तुत इकाई का उपखंड 4.2 देखें।

उत्तर 8. प्रस्तुत इकाई का उपखंड 4.3 देखें।

उत्तर 9. प्रस्तुत इकाई का उपखंड 4.4 देखें।

उत्तर 10. 11 माह 12 दिन

13.7 संदर्भ ग्रंथ / सूची

1. फल दीपिका – गोपेश कुमार झा
2. वृहत् पाराशर होरा शास्त्र
3. दशाफल निर्णय – अखिल भारतीय ज्योतिष संस्था संघ

13.8 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. फलदीपिका (भावार्थ बोधिनी)

व्याख्याकार – पंडित गोपेश कुमार ओझा

प्रकाशक – मोतीलाल बनारसी दास

2. फलदीपिका

व्याख्याकार – डॉ. सुरेश चंद्र मिश्र

प्रकाशक – रंजन पब्लिकेशंस, दिल्ली

3. अखिल भारतीय ज्योतिष संस्था संघ द्वारा प्रकाशित 'दशाफल निर्णय'

13.9 निबन्धात्मक प्रश्न

नवग्रहों की महादशा में सूर्य और चन्द्रमा की अन्तर्दशा का विशेष फल लिखें।

इकाई–14 पंचाँग–फल–विचार

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 पंचाँग–परिचय

14.3.1 पंचाँग के 5 अंग

14.3.2 दिन (वार) परिचय

14.3.3 दिन के शुभाशुभ फल का ज्ञान

14.3.4 तिथि–परिचय

14.3.5 तिथियों का ज्ञान

14.3.6 नक्षत्रों का परिचय

14.3.7 नक्षत्रों का शुभाशुभ प्रभाव

14.3.8 योग–परिचय

14.3.9 योग का शुभाशुभ प्रभाव

14.3.10 करण–परिचय

14.3.11 करण का शुभाशुभ प्रभाव

14.3.12 गण–आनयन

14.4 सारांश

14.5 शब्दावली

14.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

14.7 संदर्भग्रंथ–सूची

14.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

14.9 निबन्धात्मक प्रश्न

14.1 प्रस्तावना

ज्योतिष शास्त्र के आरम्भिक अध्ययन क्रम में आपने ज्योतिष के गणितीय पक्ष व फलादेश के महत्वपूर्ण तथ्यों का अध्ययन किया। प्रस्तुत अध्याय में पंचाँग फल के सम्बन्ध में विवेचन किया जायेगा।

पंचाँग ज्योतिष गणना और फलादेश दोनों के लिए बहुत महत्वपूर्ण एवं उपयोगी है। पंचाँग को अंग्रेजी में कैलेण्डर कहा जाता है। जिस तरह से एक सामान्य व्यक्ति के घर और कार्यालय में तारीख और वार (दिन) को जानने के लिए दीवार पर कोई न कोई कैलेण्डर लटका रहता है उस तरह से ज्योतिषी के पास पंचाँग होता ही है। इसलिए ज्योतिष को पंचाँग के बिना अधूरा कहा जाता है। गणित, फलित और मुहूर्त के लिए पंचांग की जानकारी प्रत्येक ज्योतिषी के बहुत आवश्यक है। दैनिक जीवन में हमें कदम – कदम पर समय की शुभाशुभता को जानने के लिए पंचाँग की आवश्यकता होती है। इसलिए आपके लिए इस इकाई का अध्ययन बहुत उपयोगी सिद्ध होगा।

आगामी उच्चतर अध्ययन में ज्योतिषीय फलादेश के महत्वपूर्ण सिद्धान्तों का अध्ययन आप करेंगे।

14.2 उद्देश्य

- पंचाँग के सभी घटकों का परिचय प्राप्त कर पायेंगे।
- दिन के शुभाशुभ प्रभाव का वर्णन कर सकेंगे।
- तिथि के शुभाशुभ प्रभाव का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- नक्षत्र के सभी घटकों को लिख पायेंगे।
- योग के शुभाशुभ प्रभाव का वर्णन कर सकेगें।
- करण के शुभाशुभ प्रभाव का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।।

14.3 पंचाँग–परिचय

14.3.1 पंचाँग के 5 अंग

पंचाँग एक ऐसा शब्द है जिसकी चर्चा ज्योतिष से कहीं अधिक होती है। ज्योतिष के मुहूर्त्त खण्ड में अनेक प्रकार के नित्य उपयोगी मुहूर्त्तों को ज्ञात करने के लिए पंचाँग नामक पुस्तक की आवश्यकता होती है। पंचाँग का शाब्दिक अर्थ है – पाँच अंग। ज्योतिषीय पंचाँग के ये पाँच अंग वार, तिथि, नक्षत्र, योग और करण हैं। इन पाँचों की दैनिक गणना पंचाँग नामक पुस्तक में

व्यवस्थित रूप से प्रकाशित रहती हैं। पंचाँग की गणना का आधार सूर्योदय होता है। अतः स्थान परिवर्तन के साथ सूर्योदय में अन्तर आने के कारण पंचाँग की गणनाओं में अन्तर आ जाता है। यही कारण है कि बाजार में प्रमुख शहरों के अक्षांश, रेखांश का आधार लेकर ज्योतिषीय गणना की जाती है। ज्योतिष प्रेमी पाठकों को ऐसे पंचाँग को खरीदना चाहिए जिसकी गणना उनके शहर के आधार पर की गई हो। पंचाँग से लग्न सारिणी और ग्रह स्पष्ट तालिका देखकर उस संवत् में जन्मे जातक की जन्मकुण्डली कुछ ही मिनटों में तैयार की जा सकती है। पंचाँग का सर्वाधिक प्रयोग मुहूर्त्त गणना के लिए किया जाता है।

एक विद्वान् ने पंचाँग के बारे में लिखा है–

चतुरंगबलो राजा जगतीं वशमानयेत्।
अहं पंचाँगबलवानाकाशं वशमानये।।

अर्थात् पंचाँग ने एक बार अपना महत्व बतलाते हुए उद्घोषणा की कि राजा तो बेचारा चतुरंग (चार अंग– हाथी, घोड़ा, रथ और पैदल सेना) के द्वारा धरती के लोगों को ही जीत सकता है, वश में कर सकता है, लेकिन मैं पंचाँग इतना बलवान हूँ कि आकाश में स्थित नक्षत्रों को भी वश में कर लेता हूँ। अर्थात् उनकी जानकारी दे कर लोगों को उनके[?] अनिष्ट प्रभाव से बचा सकता हूँ।

14.3.2 दिन (वार) परिचय

पंचाँग के पांच अंगों में से वार एक है। बोलचाल की भाषा में वार को दिन के नाम से भी पुकारा जाता है। ज्योतिष में वार सूर्योदय से शुरु होकर अगले सूर्योदय से प्रारम्भ होने तक का समय कहलाता है। वार की अवधि 24 घण्टे अर्थात् 60 घटी होती है। सूर्योदय के समय जिस ग्रह की पहली होरा होती है उस वार का नामकरण उसी ग्रह के आधार पर किया जाता है। सृष्टि के प्रारंभ में हमारे ऋषियों की दृष्टि सर्वप्रथम सूर्य पर पड़ी इसलिए पहली होरा का स्वामी सूर्य को माना गया और पहले दिन का नामकरण रविवार किया गया। इसी प्रकार अगले दिनों में सूर्योदय के समय पहली होरा चन्द्र[?], मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि के क्रमानुसार आती है, इस कारण वारों का नामकरण और क्रम अग्रलिखित क्रमानुसार किया गया –रविवार, सोमवार, मंगलवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार और शनिवार।

14.3.3 दिन के शुभाशुभ फल का ज्ञान

जिसका जन्म रविवार में हो वह अधिक पित्त वाला, कार्यक्षेत्र में निपुण, उग्र तेज वाला, झगड़ालू, दानी और महोत्साही होता है।

जिस बालक का जन्म सोमवार में हो वह बुद्धिमान्, प्रिय कथा वाचक, राज कृपा पाने वाला और सुख–दुख को बराबर मानने वाला होता है।

मंगल के दिन जन्मा बालक उल्टी बुद्धिवाला, दीर्घायु, वीर, महाबली, सेनाप्रमुख एवं अपने परिवार में प्रधान पालन करने वाला होता है।

जो आदमी बुध के दिन जन्म ले वह लेखन कार्य से अपनी जीविका निर्वाह करने वाला, मधुरभाषी, विद्वान् पण्डित, सुन्दर आकृति एवं बड़ी सम्पत्ति से युक्त धनवान् होता है।

जिसका जन्म बृहस्पति के दिन हो वह धनी, विद्वान्, विवेकी, प्रशंसनीय कार्य करने वाला, साधारण जनों से पूजित, किसी ग्रन्थ का रचयिता या राजा का मंत्री बनकर रहता है।

जिसका जन्म शुक्र दिन में हो वह चंचल, देवता से द्वेष करने वाला, धन के द्वारा खेल में रत, बुद्धिमान्, मनोहर रूप वाला और अनवसर में भी अधिक बोलने वाला होता है।

शनि के दिन उत्पन्न जातक स्थिर पुरुष से जायमान, दृढ़ वाणी वाला, पापी, दुःखित चित्त वाला, पराक्रमशील, अधोदृष्टि रखने वाला, दृढ़प्रतिज्ञ, अधिक केश वाला एवं सर्वदा जरावस्था प्राप्त स्त्रियों में रत रहता है।

जिसका जन्म दिन में हो वह आदमी अच्छे धर्माचरण से युक्त, अधिक पुत्र एवं अधिक भोग करने वाला, सर्वदा स्त्री के साथ रहने वाला, अधिक काम चेष्टा से पीड़ित अंग वाला, अच्छे वस्त्रों का धारणकर्ता, बुद्धिमान् और सुन्दर आकृति वाला होता है।

जो आदमी रात्रि में पैदा हो वह कम बोलने वाला, अधिक काम चेष्टा में युक्त, क्षय रोग वाला, अधिक मलिन हृदय वाला, पापात्मा और छिपकर पाप करने वाला होता है।

14.3.4 तिथि–परिचय

भारतीय ज्योतिष में दैनिक जीवन में तिथियों को विशेष महत्वपूर्ण माना गया है। आज भी भारतीय संस्कृति में पर्व और त्यौहार तिथियों की गणना कर निश्चित किए जाते हैं। पंचाँग में पहला कॉलम ही तिथियों का होता है। एक मास में दो पक्ष होते हैं– कृष्ण पक्ष और शुक्ल पक्ष। प्रत्येक पक्ष में पन्द्रह–पन्द्रह तिथियां होती है। कृष्ण पक्ष में पन्द्रहवीं तिथि को अमावस्या कहते हैं और शुक्ल पक्ष में अन्तिम पन्द्रहवीं तिथि को पूर्णिमा कहा जाता है। कृष्ण पक्ष की पहली तिथि से नये मास का आरम्भ होता है।

14.3.5 तिथियों का ज्ञान

जिसका जन्म प्रतिपदा तिथि में हो वह पापियों के साथ रहने वाला, दरिद्र, कुल का सन्तापकर्ता, एवं व्यसनों में आसक्त चित्त वाला होता है।

द्वितीया तिथि में समुदभूत बालक सर्वदा पराई स्त्रियों में रत, मिथ्याभाषी, शौचहीन, चोर और स्नेह हीन होता है।

तृतीया में जन्म लेने से आदमी चेतना से रहित, अति विकल, दरिद्र और पराये से द्वेष करने वाला होता है।

जिसका जन्म चतुर्थी तिथि में होता है वह आदमी महाभोगी, दानी, मित्रों के ऊपर स्नेह करने वाला, पण्डित, धनी एवं संतति (पुत्र–कन्या से संयुक्त रहता है)।

पंचमी में जन्म लेने से आदमी व्यवहार में चतुर, गुणों को ग्रहण करने वाला, पिता की रक्षा करने वाला, दानी, भोक्ता और अपनी आकृति से प्रसन्न रहता है।

जिस आदमी का जन्म षष्ठी तिथि में हो वह अनेक देशों में भ्रमण करने वाला, सर्वदा सभी से झगड़ने वाला और हमेशा अपने उदर का भरण–पोषण करने वाला होता है।

सप्तमी तिथि में जन्म लेने वाला प्राणी थोड़े में संतोष करने वाला, तेजवान्, सौभाग्यशाली, गुणी, पुत्रवान् और धनी होता है।

अष्टमी तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य धर्मवान्, सत्य बोलने वाला, दानी, भोक्ता, दयालु, गुणी और सम्पूर्ण कर्मो में निपुण होता है।

नवमी तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य देवताओं का आराधक, पुत्रवान्, धन एवं स्त्री में आसक्त मन वाला और शास्त्र के अभ्यास में सदा रत रहने वाला होता है।

दशमी तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य धर्म शास्त्र को जानने वाला, देवताओं की सेवा करने वाला, यज्ञ करने वाला, तेजवान् और सदा सुख से युक्त होता है।

एकादशी तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य थोड़े में सन्तुष्ट, धैर्य वाला, राजा के आश्रय में रहने वाला धनवान् और विद्यावान् होता है।

द्वादशी तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य चंचल और चपलता को जानने वाला, सदैव दुबले शरीर वाला और देशाटन करने वाला होता है।

त्रयोदशी तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य महासिद्ध, बडा विद्वान्, शास्त्राभ्यास करने वाला, इन्द्रियों को वश में रखने वाला और सदा दूसरों के काम में रहने वाला होता है।

चतुर्दशी तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य धर्मवान्, धर्मशील, शूरवीर, सत्य बोलने वाला, राजा से मान पाने वाला और यशस्वी होता है।

पौर्णमासी तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य धनवाला, बुद्धिमान्, अधिक भोजन की लालसा रखने वाला, उत्साही और परस्त्रियों में आसक्त रहने वाला होता है।

अमावास्या तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य आलसी, दूसरों के साथ ईर्ष्या रखने वाला, क्रोधी, मूर्ख, पराक्रमी, मूढ राजा का मंत्री और ज्ञानवान् होता है।

नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता और पूर्णा ये पांच तिथियां क्रमानुसार प्रतिपदा से तीन बार

गणना करने पर होती है यथा 1 / 6 / 11 को नन्दा, 2 / 7 / 12 को भद्रा, 3 / 8 / 13 को जया, 4 / 9 / 14 को रिक्ता और 5 / 10 / 15 को पूर्णा तिथि जानो।

नन्दा तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य बड़े मान वाला, पण्डित, देवताओं की भक्ति में निष्ठा रखने वाला, ज्ञानवान् और प्यारा होता है।

भद्रा तिथि में जन्म लेने वाला मनुष्य बन्धु में मान्य, राजसेवी, धनवान्, संसार के भय (मृत्यु) से डरने वाला और परमार्थी होता है।

जिस जातक का जन्म जया तिथि में हो वह राजाओं में पूजा पाने वाला, पुत्र, पौत्र आदि से रहित, शूर, धीर, दीर्घायु और अन्यों के मन की बात को जानने वाला होता है।

जो आदमी रिक्ता तिथि में जन्म पाया हो वह हरेक कामों में अनुमान करने वाला, प्रमाद करने वाला, गुरुओं का निन्दक, शास्त्रों को जानने वाला, दूसरों के मद को नाश करने वाला एवं अधिक काम–चेष्टा रखने वाला होता है।

पूर्णा तिथि में जन्म लेने से आदमी धनों से पूरित, वेद शास्त्र के अर्थों का सारांश जानने वाला, सत्यवादी, विशुद्ध अन्तःकरण वाला (जिसमें जरा भी कालुष्य नहीं हो) और अच्छा पण्डित होता है।

14.3.6 नक्षत्रों का परिचय

हमें आकाश में असंख्य तारे दिखाई देते हैं जिन्हें ध्यान से देखने पर विभिन्न आकृतियों के स्वरूप की झलक दिखलाई पड़ती है। तारों की ये विशिष्ट आकृति ही नक्षत्र कहलाती है। आकाश मंडल में फैले हुए सभी तारा समूहों को ज्योतिष मतानुसार विशिष्ट आकृति के अनुसार 27 भागों में बांटा गया है और प्रत्येक का अलग अलग नामकरण किया गया है। एक नक्षत्र का मान 13 अंश 20 कला होता है। किसी भी जातक के लिए जन्म नक्षत्र बहुत महत्वपूर्ण होता है। नक्षत्रों को सूक्ष्मता से समझने के लिए प्रत्येक नक्षत्र को चार चरणों में विभाजित किया गया है। जन्म के समय चन्द्रमा जिस नक्षत्र में होता है उसी के अनुसार जातक का नामकरण किया जाता है। पंचाँग में नक्षत्रों के नाम और उनके प्रारम्भ या समाप्ति काल का विवरण दिया रहता है।

14.3.7 नक्षत्रों का शुभाशुभ प्रभाव

अश्विनी नक्षत्र में जन्म लिया हुआ मनुष्य सुन्दर, सुभग, कार्यमात्र में दक्ष, मोटी देह वाला, बड़ा धनी एवं प्रेमी बना रहता है।

जिसका जन्म भरणी में हो वह नीरोग, सत्य बोलने वाला, जीवन सार्थक करने वाला, दृढप्रतिज्ञ, अच्छे सुख करने वाला और धनी होता है।

जो आदमी कृतिका नक्षत्र में उत्पन्न हुआ हो वह कृपण, पापी, सब दिन पीड़ित और प्रतिदिन अकर्म करने वाला बना रहता है।

धनी, उपकार को जानने वाला, मेधावी, राजाओं से मान्य, मधुरभाषी, सत्य बोलने वाला, एवं अच्छी आकृति वाला, जातक रोहिणी नक्षत्र में जन्म लेने से होता है।

जो आदमी मृगशिरा नक्षत्र में जन्म लिया हो वह चंचल, कार्य मात्र में चतुर, धीर, छल व्यापार से निन्दित कर्म करने वाला, अहंकार रखने वाला, एवं दूसरों से द्वेष करने वाला होता है।

आर्द्रा में जन्म लेने से उपकार को न मानने वाला, क्रोधी, पापी, शठ और धनधान्य से वंचित रहता है।

जिसका जन्म पुनर्वसु नक्षत्र में हो वह शांत, सुखी, पूरा भोग करने वाला, सुन्दर आत्मीय जनों के प्रेमी, सर्वदा पुत्र मित्र आदि से युक्त बना रहता है।

जिसकी उत्पत्ति पुष्य नक्षत्र में होती है वह देवता, धर्म, धन से युक्त, पुत्र वाला, उत्तम पण्डित, शांत स्वभाव वाला, सुन्दर आकृतिवाला सुखी होता है।

जो आदमी आश्लेषा नक्षत्र में जन्म लेता है वह भक्ष्य– अभक्ष्य का कुछ भी विचार न कर सब चीजों का खाने वाला, यमराज के समान आचरण करने वाला, कृतघ्न, दुर्जन और किये हुये कर्मों को ही करने वाला होता है।

मघा नक्षत्र का उत्पन्न बालक अधिक नौकर रखने वाला, धनी, भोगी, पिता, पितामह, माता आदि में भक्ति रखने वाला, महा उद्यमी, सेनापति एवं राजाओं की रोवा[?] करने वाला होता है।

जिसका जन्म पूर्वाफाल्गुनी में हो वह विद्यावान्, गौओं को रखने वाला, धनी, गम्भीर, सुख पाने वाला और अनेक पण्डितों से पूजित रहता है।

उत्तराफाल्गुनी में जो जन्म लेता है वह सहनशील, शुर, कोमलवक्ता, वाग्मी, बाण विद्या में प्रवीण, महा योद्धा और सर्व साधारणजनों में भी प्रिय व्यवहार करने वाला होता है।

हस्त नक्षत्र का जन्मा हुआ आदमी मिथ्यावादी, व्यर्थ साहसी, मदिरा पान करने वाला, परिवारहीन, चोर एवं परायी स्त्रियों से संभोग करने वाला होता है।

चित्रा में पैदा होने से जातक पुत्र एवं स्त्री से सहित, तुष्ट, धन धान्य आदि के परिपूरित, देवता एवं ब्राह्मण में भक्ति करने वाला होता है।

जिस मनुष्य का जन्म स्वाती नक्षत्र में हो वह पण्डित, धार्मिक, कृपण, प्रिय से प्रेम करने वाला, सुशील एवं देवताओं का भक्त बना रहता है।

जिसकी पैदाइशी विशाखा में समझी जाय वह बड़ा लोभी, अतिशय अभिमान रखने वाला, निर्दयी, कलह में प्रेम रखने वाला, और वेश्याओं के साथ दुष्कर्म करने वाला होगा ऐसा जानना चाहिये।

अनुराधा में उद्भूत बालक अपने पुरुषार्थ से देशान्तर में रहने वाला, सर्वदा अपने परिवार के कामों में उद्यम करने वाला, एवं धृष्ट होता है।

ज्येष्ठा नक्षत्र में जन्म लेने वाला आदमी अधिक मित्र रखने के कारण स्वयं प्रधान, काव्यकर्ता, सहनशील, परम चतुर, धर्म में रत एवं शूद्रों से पूजित होता है।

जिसका जन्म मूल में हो वह सुखी, धन, वाहन से युक्त, हिंसक, बलवान्, विचार पुरस्सर कामों को करने वाला, शत्रुओं का संहारकर्ता और पण्डित होता है।

जिसका जन्म पूर्वाषाढा में हो वह अपरिचित को भी देखने से ही उपकार करने वाला, भाग्यवान्, जनों का प्रेमी, और सर्व विषयों का विलक्षण पण्डित अवश्य होता है।

जो आदमी उत्तराषाढा में जन्म लिया हो वह अधिक मित्र वाला, महाकराल शरीर वाला, विनयी, सुखी, शूर और सर्वत्र विजय पाने वाला होता है।

जिसका जन्म अभिजित् नक्षत्र में हो वह सुललित कान्ति वाला, सज्जनों का प्रिय, विनीत, अच्छी कीर्ति वाला, सुन्दर, ब्राह्मण और देवताओं में भक्ति करने वाला स्पष्ट वक्ता एवं अपनी जाति में राजा बनकर रहता है।

जिस जातक का जन्म श्रवण नक्षत्र में हो वह उपकार को मानने वाला, सुन्दर, दानी, सर्व गुणों से युक्त, धनी एवं अधिक संतान वाला होता है।

धनिष्ठा जन्म नक्षत्र होने से आदमी गान का प्रेमी, परिवार में मान्य, सुवर्ण, मोती आदि आभूषणों से शोभित एंव सैकड़ों आदमियों का अधिपति होकर रहता है।

जो आदमी शतभिषा नक्षत्र में जन्म ले वह कृपण, धनी, परस्त्री सेवी, और देशांतर में अधिक काम चेष्टा रखने वाला होता है।

पूर्वाभाद्रपद जन्म नक्षत्र वाला पुरुष वक्ता, सुखी, सम्मान वाला, अधिक सोने वाला एवं निरर्थक अर्थात् स्वयं किसी विशेष काम लायक नहीं होता है।

उत्तराभाद्रपद जन्म नक्षत्र होने से आदमी गौरवर्ण, सत्व गुण प्रधान, धर्म ज्ञाता, शत्रुओं का नाश करने वाला, उत्कृष्ट देवता के समान, एवं साहस करने वाला होता है।

जिस आदमी का जन्म नक्षत्र रेवती हो वह सब अंगों से परिपूर्ण, पवित्र कार्य मात्र में दक्ष, शूर, पण्डित एवं धन धान्य से सर्वदा अलंकृत रहता है।

14.3.8 योग–परिचय

योग शब्द का सामान्य अर्थ है– जोड़। चन्द्रमा और सूर्य मिलकर जब 800 कलाएं चल लेते हैं तो एक योग व्यतीत होता है। ज्योतिष में दो प्रकार के योग होते हैं। नैसर्गिक योग तथा तात्कालिक योग। नैसर्गिक योगों का क्रम एक समान होता है लेकिन तात्कालिक योग तिथि वार और नक्षत्र के विशेष संयोग से बनते हैं। पंचाँग में योग तालिका में नैसर्गिक योग क्रमानुसार दिये जाते हैं जिनका विवरण आगे दिया जा रहा है–

योग का नाम	**योग के स्वामी**
विष्कुम्भ	यम
प्रीति	विष्णु
आयुष्मान्	चन्द्रमा
सौभाग्य	ब्रहाा[?]
शोभन	बृहस्पति
अतिगण्ड	इन्द्र
सुकर्मा	जल
धृति	सर्प
शूल	अग्नि
गण्ड	सूर्य
वृद्धि	भूमि
ध्रुव	वायु
व्याघात	भग
हर्षण	वरुण

योग का नाम	योग के स्वामी
वज्र	गणेश
सिद्धि	रुद्र
व्यतिपात	कुबेर
वरियान	मित्र
परिघ	कार्तिकेय
शिव	सावित्री
सिद्ध	लक्ष्मी
साध्य	पार्वती
शुभ	अश्विनी कुमार
शुक्ल	पितर
ब्रहा[?]	दिति
इन्द्र	
वैधृति	

14.3.9 योग का शुभाशुभ–प्रभाव

जिसका जन्मकालिक योग विष्कुम्भ हो वह आदमी सुन्दर, भाग्यवान्, सब प्रकार के अंलकारों से परिपूर्ण, महाबुद्धिमान् और शास्त्रों में विशारद होता है।

जो आदमी प्रीति योग में जन्म लिया हो वह ललनाओं का परम स्नेही, व्यवहार मात्र से सार को जानने वाला, महा उत्साही एवं स्वार्थ साधन में प्रतिदिन उन्नत रहता है।

जिसका जन्म आयुष्मान् योग में हुआ हो वह मानी, धनी, काव्यकर्ता, दीर्घायु, सब प्रकार के पशु पक्षियों से युक्त, एवं युद्ध में किसी न हारने वाला होता है।

जिसका जन्मयोग सौभाग्य हो वह राजा का मंत्री, सब कामों में प्रवीण, एवं स्त्रियों का प्रेमी बना रहता है।

जो आदमी शोभन योग में जन्म लिया हो वह देखने में सुन्दर, अधिक पुत्र एवं अधिक स्त्री वाला, सब कामों में आतुरता दिखाने वाला और युद्धक्षेत्र में सम्मिलित होने के लिये सर्वदा तैयार रहता है।

जो अतिगण्ड योग में जन्म लेता है वह भ्रातृद्वेषी होता है। यदि वह गण्डान्त में जन्म लिया हो तो सारे कुल को नाश करने वाला होगा ऐसा जानना चाहिये।

जिसका जन्मयोग सुकर्मा हो वह जातक सुकर्म करने वाला, मनुष्य मात्र का प्रेमी, सुशील, रोगवान्, भोगवान् और अधिक गुण वाला होता है।

धृतियोग का उत्पन्न बालक धीरज रखने वाला, कीर्तिमान्, दृष्ट, पुष्ट, धनी, भाग्यवान्, सुखी, विद्वान्, एवं गुणी होता है।

जिसका जन्मयोग शूल हो वह हृदयशूल वाला, धार्मिक पुरुष, शास्त्रों का परम विद्वान, विद्या और धन का उपार्जन में प्रवीण तथा यज्ञकर्ता होता है।

जिसके जन्मकाल में गण्डयोग समाप्त हो वह जातक गलगण्ड रोग से पीडित, अधिक क्लेश वाला, बडा एवं मोटा सिर वाला, पतला शरीर वाला, महाशूरवीर, अधिक भोग करने वाला तथा दृढप्रतिज्ञ अर्थात् जो बोले उसको अवश्य पूरा करने वाला होता है।

जो आदमी वृद्धि योग में जन्म लेता है वह सुन्दर, अधिक पुत्र तथा स्त्री पाने वाला, धनी, भोगी और बली बना रहता है।

ध्रुव–योग जन्म–योग होने से जातक दीर्घायु, देखने में सभी को आनन्द देने वाला, विचार पुरस्सर सुस्थिर काम करने वाला, कार्यमात्र में अत्यंत समर्थ और निश्चित बुद्धि रखने वाला अर्थात् कभी अपने लक्ष्य से च्युत नहीं होने वाला होता है।

जिसका जन्मकालीन योग व्याघात हो वह सब विषयों का पूरा ज्ञाता, सभी आदमी से पूजित, काममात्र में अपनी दक्षता दिखाने वाला, लोक में प्रसिद्ध एवं सभी सांसारिक कामों में प्रख्यात रहता है।

जिसका जन्म योग हर्षण हो वह लोक में महाभाग्यशाली, राजा का प्रेमी, उत्साह करने वाला, सर्वदा धन से युक्त और वेदशास्त्र का अद्वितीय पण्डित होता है।

जिसके जन्मकाल में वज्र योग उपस्थित हो वह वज्र के समान कठोर मुठी वाला, सब विद्याओं और अस्त्रों में पारंगत, धन धान्य से परिपूरित, विषय मात्र में तत्व का ज्ञाता एवं अधिक पराक्रमशाली होता है।

सिद्धियोग में जन्म ग्रहण किया हुआ आदमी सर्वसिद्धि सहित अर्थात् सभी कामों में सिद्धि पाने वाला, दानी, भोगी, सुखी, मनोहर, शोक रखने वाला तथा रोगी बना रहता है।

जिसका जन्म व्यतिपात योग में हो वह बड़ा कष्ट से जीवित रहता है, कदाचित् उसके जीने में प्रतिबन्ध न पड़ा तो लोक में सर्वश्रेष्ठ होकर जीता रहता है।

जिसके जन्म योग वरियान हो वह बालक खूब बली, चित्र आदि खींचने की कला में पूरा निपुण, गाना एवं नाच आदि का पण्डित होता है।

परिघ योग में जन्म लेने से आदमी निज कुल में पूरी उन्नति करने वाला, शास्त्रों को जानने वाला, अच्छी कविता बनाने वाला, अधिक वक्ता, दाता, भोक्ता तभा सभी से प्रिय वाणी कहलाने वाला होता है।

शिवयोग में जो आदमी जन्म लेता है वह कल्याण का पात्र, लोक में साक्षात् महादेव के समान परिगणित होने वाला अर्थात् अहर्निश उन्हीं के ध्यान, पूजा आदि में रुद्राक्ष माला प्रभृति उनके चिह्नों का धारण करने से महादेव ही समझने लायक और बुद्धिमान् होता है।

जिसके जन्मकाल में सिद्धि योग पड़े वह कार्यमात्र में सिद्धि देने वाला, मन्त्रों को अनुष्ठानादि से सिद्ध करने वाला, अच्छी खूबसूरत स्त्री वाला एवं सब तरह की सम्पत्ति रखने वाला होता है।

जिसका जन्म साध्य–योग में हो उसको सिद्धि केवल मानसिक हुआ करती है, अधिक यश तथा निःशेष सुख पानेवाला, सभी कामों को विलम्ब से करने वाला, प्रसिद्ध ओर सबके मन के अनुकूल रहता है।

शुभ योग में जन्म लेने से आदमी सर्वदा अनेक शुभ कामों से युक्त, धनी, सब तरह के ज्ञानों से परिपूरित, दानी और ब्राह्मणों की सेवा करने में तत्पर रहता है।

शुक्लयोग में जन्मग्रहण किया हुआ मनुष्य सब तरह की कलाओं को जानने वाला सर्वार्थ ज्ञानी, कवि, प्रतापी, शूर, धनी और सब आदमियों का प्रेमी होता है।

जिसका जन्म ब्रह्मयोग में हो वह बड़ा भारी विद्वान्, वेदशास्त्रों में अद्वितीय विद्वान्, परब्रह्म की पहिचान में अहर्निश समय बितानेवाला और सभी कामों में पण्डित है।

ऐन्द्र योग में समुद्भूत बालक यदि क्षत्रिय कुल का हो तो निश्चय किसी विशेष साम्राज्य का अधिपति होकर राजा कहावे, थोड़े दिन तक जीनेवाला, सुखी तथा भोगी भी होता है।

वैधृति योग में उत्पन्न हुआ आदमी उत्साहहीन, सदा क्षुधा रखने वाला, दूसरे लोगों से प्रेम करता हुआ भी स्वयं उनका प्रेमी नहीं होता है।

14.3.10 करण–परिचय

करण का मान तिथि से आधा होता है। इस कारण एक तिथि में दो करण होते हैं। शुक्लपक्ष और कृष्ण पक्ष की तिथियों में करण अलग अलग होते हैं। करणों के नाम और उनके स्वामी की तालिका आगे दी जा रही है–

करण का नाम	करण का स्वामी
बव	इन्द्र
बालव	ब्रह्मा
कौलव	सूर्य
तैतिल	सूर्य
गर	पृथ्वी
वणिज	लक्ष्मी
विष्टि	यम
शकुनि	कलियुग
चतुष्पद	रुद्र
नाग	कलियुग
किंस्तुघ्न	वायु

14.3.11 करण का शुभाशुभ प्रभाव

1. जिस जातक के जन्म समय में बव करण हो वह मान रखनेवाला, सर्वदा धर्मकार्य में रत, शुभ और मंगल कर्मों को करने वाला एवं उसी काम को वह करने वाला होगा जो कि खूब स्थायी समझा जाय।

2. जिसका जन्म बालव करण में हो वह तीर्थ (काशी, प्रयाग, वृन्दावन आदि) देवता, पितृगण, आदि का सेवक, विद्या, धन और सुख तीनों से परिपूर्ण तथा राजाओं का मान्य होता है।

3. जिसका जन्म कौलव करण में सिद्ध हो वह सब आदमियों से प्रीति रखने वाला, अपने मित्रों के साथ सहानुभूति दिखाने वाला एंव अभिमानी होता है।

कृष्णपक्षे करणानि						शुक्लपक्षे करणानि					
ति.	पूर्वद.	उत्तर	ति.	उत्तरद	पूर्वद.	ति	पूर्वद	उत्तरद	ति.	पूर्वद.	उत्तरद
1	बालव	कौलव	8	बालव	कौलब	1	किंस्तुघ्न	बव	8	भद्रा	बव
2	तैतिल	गर	9	तैतिल	गर	2	बालक	कौलव	9	बालक	कौलव
3	वणिज	भद्रा	10	वणिज	भद्रा	3	तैलित	गर	10	तैतिल	गर
4	बव	बालव	11	बव	बालव	4	वणिज	भद्रा	11	वणिज	भद्रा
5	कौलव	तैतिल	12	कौलव	तैतिल	5	कौलव	तैतिल	12	बव	बालव
6	गर	वणिज	13	गर	वणिज	6	कौलव	तैतिल	13	कौलव	तैतिल
7	भद्रा	बव	14	भद्रा	शकुनि	7	गर	वणिज	14	गर	वणिज
			30	चतुष्पद	भाग				15	भद्रा	बव

4. तैतिल करण में जन्म लेने से कल्याण और धन से पूर्ण, प्रत्येक मनुष्य से स्नेह रखनेवाला, पूरी सजावट के साथ अनेक चित्रित गृहों का मालिक बना रहता है।

5. जिस जातक का जनम गर–संज्ञक करण में हो वह गृहस्थी का काम (खेती बारी) में प्रवीण, घर के कामों में निपुण और जो उसके वांछित हो वह उसे कठिन उपाय द्वारा भी प्राप्त करने वाला होता है।

6. जो वणिज करण का जन्मा हुआ हो वह व्यापार कर्म से अपनी जीविका चलाने वाला और देशान्तर में जाने आने का व्यवहार करने एवं सभी कामनाओं का पूर्ण करने वाला होता है।

7. जिसका जन्मकरण विष्टिसंज्ञक (भद्रा) हो वह अशुभ कामों का आरम्भ करने वाला परस्त्री के साथ सम्भोग एवं विषय कार्य में चतुर हो जाता है।

8. शकुनि नाम करण में जन्म लेने वाला जातक पौष्टिक आदि क्रियाओं के द्वारा दवाई बनाने से प्रवीण एवं उसी से अपनी जीविका चलाने वाला होगा ऐसा जानना चाहिये।

9. जो आदमी चतुष्पद में पैदा होता है वह सर्वदा के लिये देवता और ब्राह्मण में रत, गौओं की सेवा में तत्पर तथा उसी काम से लोक में प्रशंसित एवं चौपायों की चिकित्सा करने वाला होता है। (जैसे कि आज कल पशु अस्पताल में डाक्टर लोग चिकित्सा करते हैं।)

10. जिसका जन्म नाग करण में सिद्ध हो वह मल्लाहों से प्रेम करने वाला, महा कठोर कर्म करने वाला, देखने में कुरूप और चंचल आँख रखने वाला होता है अर्थात् उसकी आँखें कभी स्थिर नहीं रह सकतीं, हर वख्त इतस्ततः व्यर्थ ही घूमती रहती हैं।

11. जिसका जन्म किंस्तुघ्न करण में हो वह अच्छे कामों को करने वाला होता है और सन्तोष, पुष्टि एवं सिद्धि को प्राप्त करता है।

14.3.12 गण–आनयन

अथ गणानयनम्

1. अब नक्षत्रों के गणनिरूपण के लिये पहले देवगण कहते हैं – जैसे अश्विनी, मृगशिरा, रेवती, हस्त, पुष्प, पुनर्वसु, अनुराधा श्रवण और स्वाती इतने नक्षत्र देवगण कहे गये हें, इनमें जन्म लेने से आदमी देवगण कहलाता है।

2. पूर्वाफल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ, उत्तराभाद्र, आर्द्रा, रोहिणी और भरणी इतने नक्षत्र मनुष्यगण में कहे गये हैं।

3. अब तीसरा राक्षसगण कहते हैं– कृतिका, मघा, आश्लेषा, विशाखा, शतभिषा, चित्रा, ज्येष्ठा और मूल इतने नक्षत्र राक्षसगण माने गये हैं।

गणफलम्

1. देवगण में जन्म लेने वाला आदमी देखने में सुन्दर, दान करने वाला, बुद्धिमान्, सीधा, थोड़ा खानेवाला और बड़ा भारी पण्डित (अनेक शास्त्रों का ज्ञाता) होता है।

2. मनुष्यगण में जन्मग्रहण किया हुआ आदमी अभिमान करने वाला, धनिक, लम्बी आँख वाला, अपने लक्ष्य को वेध करने वाला, अर्थात् जिस चीज के ऊपर शर फेंके कभी व्यर्थ न हो, पहले ही बार में लक्ष्य बेधित हो जाय, धनुष को धारण करने वाला, गौर वर्ण, अपने ग्राम के वाशिन्दों के साथ पूरी सहानुभूति रखने वाला होता है।

3. जो आदमी राक्षसगण में जन्म लेता है वह उन्मादी (पागल) देखने में बड़ा भयानक, सर्वदा झगड़ने की इच्छा रखने वाला, कठोर एवं प्रमेह (धातु के बिगड़ जाने से यह रोग पैदा होता है।) रोग वाला बना रहता है।

14.4 सारांश

इस इकाई में आपने पंचाँग के सभी अंगों के फल के बारे में पूर्ण जानकारी क्रमिक व सरलतापूर्वक प्राप्त की। विभिन्न तिथि, वार, नक्षत्र, योग व करण में जन्मे जातकों पर होने वाले शुभाशुभ प्रभावों का भी आपने सूक्ष्मतापूर्वक अध्ययन किया। इस इकाई के अध्ययन से आप प्रत्येक जातक के जन्म वार, तिथि, नक्षत्र, योग आदि के द्वारा जातक की विशेषताओं को जान पाएंगे।

14.5 शब्दावली

तिथि– ज्योतिषीय पंचांग का दिनांक।

वार– ज्योतिषीय पंचांग का दिन।

नक्षत्र– तारों का समूह।

योग– चन्द्रमा और सूर्य मिलकर बनने वाला जोड़।

करण– योग का आधा भाग।

अभ्यास प्रश्न

प्रश्न 1– पंचमी तिथि को जन्मे जातक की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

प्रश्न 2– अमावस्या को जन्म लेने वाला व्यक्ति कैसा होता है, बताइए।

प्रश्न 3– रविवार को जन्मे जातक की खूबियों पर प्रकाश डालिए।

प्रश्न 4– शुक्रवार के दिन जन्म लेने वाला मनुष्य कैसा होता है ?

प्रश्न 5– आश्लेषा नक्षत्र में जन्मे जातक की विशेषताओं को बताइए।

प्रश्न 6– शतभिषा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक कैसा होता है ?

प्रश्न 7– रेवती नक्षत्र में जन्मे जातक की विशेषताएं बताइए।

प्रश्न 8– शूल योग में जन्म लेने वाला जातक कैसा होता है बताइए।

प्रश्न 9– साध्य योग में जन्मे व्यक्ति की खूबियां बताइए।

प्रश्न 10– शकुनि करण में जन्म लेने वाले जातक की विशेषताएं लिखिए।

प्रश्न 11– तैतिल करण में जन्मा मनुष्य कैसा होता है ?

प्रश्न 12– कौन कौन से नक्षत्र राक्षसगण माने जाते हैं ?

14.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्तर 1– ऐसा जातक व्यवहारकुशल, दानी, गुणी, पिता की रक्षा करने वाला व स्वयं की आकृति से प्रसन्न रहने वाला होता है।

उत्तर 2– अमावस्या को जन्मा जातक आलसी, ईष्यालु, कोधी, मूर्ख, पराक्रमी, मूढ़ राजा का मन्त्री व ज्ञानवान् होता है।

उत्तर 3– रविवार को जन्मा जातक अधिकपित्त वाला, परम चतुर, उग्र तेज वाला, युद्ध का प्रेमी, दानी और महा उत्साही होता है।

उत्तर 4– ऐसा जातक चंचल, देवताओं से द्वेष करने वाला, धन के द्वारा खेल में रत, बुद्धिमान्, मनोहर रूप वाला, और अनवसर में भी अधिक बोलने वाला होता है।

उत्तर 5– आश्लेषा नक्षत्र में जन्म लेने वाला व्यक्ति भक्ष्य अभक्ष्य का कुछ भी विचार न कर सब चीजों को खाने वाला, यमराज के समान आचरण करने वाला, कृतघ्न, दुर्जन और किए गए कर्मों को ही करने वाला होता है।

उत्तर 6– शतभिषा नक्षत्र में जन्म लेने वाला व्यक्ति कंजूस, धनी, परस्त्री सेवी और देशान्तर में अधिक काम चेष्टा रखने वाला होता है।

उत्तर 7– रेवती नक्षत्र में जातक सब अंगों से परिपूर्ण, पवित्र, कार्यमात्र में दक्ष, शूर, पण्डित एवं धन धान्य से सर्वदा अलंकृत रहता है।

उत्तर 8– ऐसा जातक हृदयशूल वाला, धार्मिक पुरुष, शास्त्रों का परम विद्वान्, विद्या और धन के उपार्जन में प्रवीण तथा यज्ञकर्ता होता है।

उत्तर 9– जिसका जन्म साध्य–योग में हो उसकी सिद्धि केवल मानसिक हुआ करती है, अधिक यश तथा निःशेष सुख पाने वाला, सभी कामों में विलम्ब से करने वाला, प्रसिद्ध और सबके मन के अनुकूल रहता है।

उत्तर 10– शकुनि नामक करण में जन्म लेने वाला जातक पौष्टिक आदि क्रियाओं के द्वारा दवाई बनाने से प्रवीण एवं उसी से अपनी जीविका चलाने वाला होता है।

उत्तर 11– तैतिल करण में जन्म लेने वाला जातक कल्याण व धन से पूर्ण, प्रत्येक मनुष्य से स्नेह रखने वाला, पूरी सजावट के साथ अनेक चित्रित गृहों का मालिक बना रहता है।

उत्तर 12– कृतिका, मघा, आश्लेषा, विशाखा, शतभिषा, चित्रा, ज्येष्ठा और मूल।

14.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

बृहत्पाराशर होराशास्त्रम्

मानसागरी

फलदीपिका

जातक पारिजात

14.8 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री

विशिष्ट पंचाँग जो देश के विभिन्न भागों से प्रकाशित होते हैं उनका गम्भीर अध्ययन एवं पंचाँग गणना की आधारभूत जानकारी होना भी आपके लिए आवश्यक है। क्योंकि फलादेश के अनेक महत्वपूर्ण तथ्य हैं।

14.9 निबन्धात्मक प्रश्न

फलादेश में पंचाँग की भूमिका पर प्रकाश डालिए।